मनोहर सीरीज़ नं० ४

निराश

(उपन्यास)

डा० तेजबहादुर

मूल्य बारह आना

प्रकाशक—क्षितीन्द्रमोहन मित्र,
माया कार्यालय,
इलाहाबाद।

मुद्रक—धीरेन्द्रनाथ,
माया प्रेस,
इलाहाबाद।

निराश

श्रीमती कोकिला देवी जिस कमरे में अकेली बैठी थीं, वह कमरा किसी समय रामनगर की सब से सुन्दर राजकुमारी के रहने का था, और आज अपनी भग्नावस्था में भी सुन्दर लगता था। कमरे में आठ दीवारें थीं, और प्रत्येक दीवार में एक खिड़की थी, जिन पर कभी मख़मली पर्दे लटकते थे। छत की कारीगरी धुँधली हो गई थी।

गोधूलि की बेला थी। थोड़ा अँधेरा हो गया था। कोकिला देवी ने उठ कर एक खिड़की खोल दी। स्वच्छ, सुगन्धित वायु का एक झोंका आया, और उनके बालों से खेलने लगा। कश्मीर की सुन्दर छटा दृष्टिगोचर होने लगी।

कोकिला देवी एक ठंडी साँस लेकर कहने लगीं—'यदि मैं मर जाती, तो कितना अच्छा होता! यह जीवन तो मृत्यु से भी ख़राब है! ईश्वर, इस जीवन का अन्त हो जाता...!'

'पर लोग आशा ही के सहारे जीते हैं। मेरी भी एक आशा है—मेरी छोटी बच्ची! पद, मर्यादा, मान, प्रतिष्ठा, धन, धान्य, पति, मित्र सब खो गये, और मेरे लिये मेरी बच्ची को छोड़ कर कुछ भी न बचा। मैंने कहानियाँ सुनी हैं कि एक लड़की द्वारा फिर प्राणदान की इज़्ज़त वापस मिल गई। सम्भव है कि इसीलिये मेरी बच्ची छोड़ दी गई...'

घड़ी ने आठ बजाये। तब उन्होंने घड़ी की ओर देखा, और फिर कहने लगीं—'केवल आठ ही बजे हैं। आह, मेरे लिये तो प्रत्येक घण्टा एक युग के समान है!'

इसी समय दरवाज़े पर एक थपकी पड़ी।

"अन्दर आ जाओ!" और बूढ़ी नौकरानी ने एक थाली ले कर प्रवेश किया।

"श्रीमती जी, नाराज़ तो न होंगी। सुबह से आपने कुछ नहीं खाया है। मैं खाना ले आई हूँ। प्रार्थना करती हूँ, भोजन कर लीजिये!" और वह लालटेन जला कर चली गई।

समय का विचित्र चक्र है। एक समय जिसकी सेवा को सैकड़ों दास-दासी रहते थे, आज उसकी केवल एक दासी बाकी थी।

कोकिला देवी खाने बैठ गईं।

लालटेन की रोशनी पूरी तौर से उन पर पड़ रही थी। स्पष्ट प्रतीत हो रहा था कि वे किसी उच्च वंश की, सम्भवतः राज-घराने की, हैं। कद लम्बा, चेहरा सुडौल, सुन्दर पर कुछ झुर्रियाँ पड़ी हुईं। माथा लम्बे पर कुछ अस्त-व्यस्त, आँखें चमकदार, कटोलों पर कुछ पीड़ा लिये। हाथ-पैर गोरे। अँगुलियों में केवल एक अँगूठी, वह भी मामूली।

भोजन करके उन्होंने एक किताब उठाई, और पढ़ने लगीं। पर पढ़ने में मन नहीं लगा। फिर सोचने लगीं—'अगर मुझे जीवित रहना है, तो इस तरह से नहीं रह सकती। और मुझे जीवित अवश्य रहना है अपनी पुत्री के लिये। नहीं तो फिर कौन उसकी देख-भाल करेगा?'

चारों तरफ़ निस्तब्धता थी। खिड़की खुली हुई थी, और साँय-साँय करती ठंडी वायु उस से आ रही थी। और इस तरह जब वे भावों के बीच बहती चली जा रही थीं, सहसा एक गाड़ी की खड़खड़ाहट सुनाई दी। वे चौंक पड़ीं।

दरवाज़ा धीरे से खुला। "श्रीमतीजी, राजा राजेन्द्र प्रताप सिंहजी आये हुये हैं!"

राजेन्द्र प्रताप सिंह जी? नाम तो पहचाना हुआ नहीं है। इस समय रात में क्यों आये हैं? "कह दो, इस समय नहीं मिल सकतीं। सुबह आयें।"

नौकरानी बोली—"श्रीमती जी, वे अकेले नहीं हैं। उनके साथ एक छोटी लड़की भी है।"

"ओह! तू ने पहिले क्यों नहीं बताया? जा, जल्दी बुला ला!"

दासी चली गई। कोकिला देवी उठ कर बैठ गईं। यदि कोई और होता, तो उत्सुकता से शीशे के सामने आ कर अपने कपड़ों को ठीक करतीं। पर उन्होंने इस पर भी ध्यान नहीं दिया। सोचने लगीं—"राजेन्द्र प्रताप सिंह! स्मरण होता है कि यह नाम कहीं सुना अवश्य है—पर ठीक से याद नहीं आता।' कि दरवाज़े से आवाज़ आई—"क्या मैं अन्दर आ सकता हूँ?"

कोकिला देवी ने नज़र उठाई। देखा, एक ख़ूबसूरत नवयुवक सामने खड़ा है।

"हाँ-हाँ, पधारिये!"

"आप तो मुझे जानती न होंगी?"

"कुछ याद नहीं आता।"

"ठीक है। मैं आप से कभी नहीं मिला हूँ, पर मेरे चाचा जी रणवीर सिंह जी..."

"हाँ-हाँ, ख़याल आ गया। उन को तो हम लोग अच्छी तरह जानते हैं। इस कुर्सी पर बैठिये!"

राजेन्द्र प्रताप कुर्सी पर बैठ गये; लड़की को गोदी में बिठा लिया, और कहने लगे—"श्रीमतीजी, मुझे आप के बारे में सुन कर बड़ा दुःख हुआ!"

"फिर भी हम लोग अन्त तक स्वामिभक्त रहे—इसी का सन्तोष है!"

"तो आप कुछ भी नहीं बचा पाईं?"

"कुछ भी नहीं। हमारी जागीर छीन ली गई। हमारा पद छिन गया, नाम मिट गया!"

"अब भी आप का नाम इतिहास में रहेगा।"

"हो सकता है।"

"आपने अपने दोस्तों से मदद क्यों नहीं माँगी?"

"भिक्षा माँगने से तो भूखों मर जाना अच्छा है! जिसने दूसरों को सहायता दी, वह दूसरों से सहायता माँगे! जब तक मेरे पति के पास धन था, जागीर थी, राज-दरबार में मान था, तब तक सैकड़ों दोस्त थे। आज कोई सुध लेने वाला नहीं है! हम लोगों के पास कुछ धन जवाहरात बेच कर हो गया था। यह स्थान अच्छा था, और किराया कम लगता था। इसी को ले लिया। यहीं पर मेरे पति की मृत्यु हुई—ग़रीबी में, दुख में, और निर्वासित अवस्था में।" कोकिला देवी का गला भर आया। आँखों से आँसू टपकने लगे, और वे बीच में ही चुप हो गईं। थोड़ी देर बाद बोलीं—"उनको मरे दो वर्ष हो गये। अब मेरी लड़की तीन वर्ष की है। धन-धान्य सब ख़तम हो गया, और अब कोई उपाय नहीं रह गया। मैंने लड़कियों को पढ़ाने का निश्चय किया है।"

"इससे भला कितनी आय होती होगी?"

"मेरे निर्वाह के लिये काफी मिल जाता है।"

"मुझे पिछले हफ्ते में मालूम हुआ था।"

कोकिला देवी चुप रहीं।



थोड़ी देर तक निस्तब्धता रही। राजेन्द्र प्रताप ने एक दफ़ा अपनी लड़की की तरफ़ देखा, फिर कोकिला देवी की तरफ, और फिर कहना शुरू किया—"श्रीमतीजी, मैं आप से एक गुप्त बात कहना चाहता हूँ, और वह बात मेरी इस लड़की के बारे में है।"

"आपकी लड़की! तो आपकी शादी हो गई है?"

"जी! पर पहिले यह वायदा कीजिये कि किसी से इसके बारे में नहीं कहियेगा। सुनिये, यह तो आप जानती ही हैं कि मेरे चाचाजी की बड़ी जागीर थी। मेरा लालन-पालन उन्होंने ही किया। उनके कोई लड़का न था। रुपये की कोई कमी न थी। मैं जो चाहता ख़रीदता, जैसे चाहता धन लुटाता—कोई रोक-टोक न थी। मेरे चाचाजी ने मुझे पूरी स्वतन्त्रता दे रक्खी थी। दुर्भाग्य कहिये या सौभाग्य, मैं किसी से प्रेम करने लगा। पर वह ग़रीब थी। एक मास्टर की पुत्री थी। अवसर आने पर अपने इस प्रेम के बारे में मैंने चाचाजी से प्रगट किया। और....."

"सुन कर वे बहुत नाराज़ हो गये यही हुआ न?"

"जी हाँ! उन्होंने साफ़-साफ़ कह दिया कि अगर मैं उस लड़की से शादी करूँगा तो वे मुझे अपना उत्तराधिकारी न बनायेंगे। मैं एक विचित्र दुविधा में पड़ गया। न तो मैं उसका दिल ही तोड़ सकता था, और न जागीर का लोभ ही। मेरी कायरता कहिये या जो कुछ, आख़िर मैंने चुपचाप उसके साथ विवाह कर लिया, और कश्मीर चला गया। वायु-परिवर्तन के बहाने एक साल तक उसके साथ रहा। इसी बीच में यह लड़की पैदा हुई। चाचाजी कहीं शक न कर बैठें इससे मुझे लौटना पड़ा। श्रीमतीजी, दोष मेरा है, और मैं उसकी सज़ा भी भुगतने को तैयार हूँ। ग़लती मेरी थी। प्रथम तो मुझे उससे छिपे तौर से शादी न करनी थी, और जब शादी कर ही ली थी, तो उसे एक लम्बे अर्से तक अकेली नहीं छोड़ना था। कश्मीर से आये मुझे लगभग चार साल हो गये, पर मैं वापस न जा सका। इधर चाचाजी बीमार हो गये, और फिर उन्होंने मुझे जागीर छोड़ कर जाने की आज्ञा ही न दी। उनके देहान्त के बाद भी मैं बराबर जागीर के कार्य में व्यस्त रहा। मेरा इरादा अब मृणालिनी और इस बच्ची को लाने का था, और यह बात सब के आगे स्वीकार कर लेने को था कि मृणालिनी मेरी पत्नी है। पर जब मैं कश्मीर उस गाँव में पहुँचा जहाँ वह रहती थी, तो मैंने उसे मृत्यु शैया पर पाया। वह विरह में सूख कर काँटा हो गई थी। मैं लाख प्रयत्न करने पर भी उसे न बचा सका, और मेरे पहुँचने के तीसरे दिन ही वह इस जीवन से मुक्त हो गई।" राजेन्द्र रुक गये। गला भर आया था। रुँधे स्वर

में बोले—"मेरी यह बच्ची रानी मेरे लिये बच गई। मुझे कितना दुख हुआ, कितना क्षोभ हुआ, कितनी पीड़ा हुई—यह सब अकथनीय है। मैंने अपने इन्हीं हाथों से उसे जला दिया, और इस प्रकार मेरी इस प्रेम-कहानी का अन्त हो गया! अब अपनी शादी के बारे में कहने से फ़ायदा ही क्या? यदि मृणालिनी होती, तो बात दूसरी ही होती; पर अब यदि मैं कहूँगा तो लोग उस स्वर्गीय आत्मा के प्रति जाने क्या-क्या भाव प्रकट करेंगे। इसलिये मैंने इस गुप्त-भेद को गुप्त रखना उचित समझा हूँ। अब इस बच्ची का प्रश्न है। इसके लालन-पालन का प्रश्न है। इसी से इसको आप के पास लाया हूँ। यह अबोध बालिका है। इसे माँ 'रानी' कहती थी। सम्भवतः आपकी लड़की के बराबर ही होगी। मेरी हार्दिक इच्छा है कि अब आप ही इसका लालन-पालन करें।"

कोकिला देवी चुप रहीं।

राजेन्द्र ने फिर कहा—"मैं आपका आभारी रहूँगा! यह तो आप जानती हैं कि जागीर की उत्तराधिकारिणी यह नहीं हो सकती, फिर भी इसके ख़र्च के लिये पर्याप्त धन जमा है। धन की कमी नहीं रहेगी, पर एक मुश्किल है। उसे आप चाहें तो हल कर सकती हैं। आप यह जानती हैं कि मेरी शादी गुप्त है। क्या आप इसे अपनी लड़की बतला कर लालन-पालन नहीं कर सकेंगी?"

कोकिला ने कहा—"यह तो उचित न होगा।"

"उचित-अनुचित मेरे ऊपर छोड़ दीजिये। आप इसका लालन-पालन कीजिये अपनी पुत्री की तरह। संसार को दिखाने के लिये यह आप की लड़की रहेगी। जब तक यह सोलह वर्ष की न हो जायगी, तब तक मैं तीन सौ रुपया महीना आपको और तीन सौ इसके लिये देता रहूँगा।"

कोकिला देवी चुप रहीं। सोचने लगीं—तीन सौ रुपया महीना उसके लिये तथा इसको पुत्री के लिये ज़रूरत से भी ज़्यादा है। उनका दारिद्र दूर हो जायगा। फिर इनकार करने में लाभ ही क्या? कोई दूसरा हो स्वीकार कर लेगा।

राजेन्द्र ने कहा—"पर आप को यह प्रतिज्ञा करनी होगी कि मेरी अनुमति के बिना आप कभी उससे यह न कहेंगी कि तू मेरी पुत्री नहीं है, तू राजेन्द्र प्रताप की पुत्री है। यह अभी छोटी बच्ची है। इसको अपनी माँ की या मेरी याद कुछ भी नहीं है, और जो थोड़ी-बहुत है भी—वह भी भूल जायेगी। आपकी पुत्री भी छोटी है—उसे भी अधिक कुछ याद न रहेगा। अगर आप ने दोनों को एक तरह पाला, तो दोनों ही बड़ी होकर अपने को सगी बहिनें ही समझेंगी। अब कृपया कहिये, स्वीकार है न?

कुछ क्षण कोकिला देवी के हृदय में संघर्ष होता रहा। कभी आत्म सम्मान जीतता, कभी लोभ। अन्त में लोभ ने विजय पाई। "मुझे स्वीकार है!" धीरे से कह दिया।

"धन्यवाद! आप ने मेरे हृदय से-एक बोझ उतार दिया। एक बात और साफ़ कर देना उचित होगा। संसार की सभी वस्तुओं की तरह मनुष्य का स्वभाव भी परिवर्तनशील है। सम्भव है कि आगे चल कर मेरा दिमाग़ बदल जाय, इससे मैं लिखा-पढ़ी भी कर देना चाहता हूँ। मेरी यह कहानी केवल तीन मनुष्यों के बीच रहेगी—आप, मैं तथा मेरा वकील। मैंने उसे यह भार सौंप दिया है कि वह बैंक से रुपया निकाल कर प्रति महीने आप के पास भेजता रहे। वसीयत के अनुसार मैं ने उसके नाम रुपया बैंक में जमा कर दिया है। हमारी और आपकी आज की बातें भी उसमें लिख दी जायँगी। अगले सप्ताह में उस काग़ज़ की तीन प्रतियाँ आपके पास आ जायँगी। आप उन पर हस्ताक्षर कर के एक अपने पास रख लीजियेगा, तथा दो वापस कर दीजियेगा। मैं आप पर कोई प्रतिबन्ध नहीं लगाना चाहता—जहाँ चाहें वहाँ जाइये, जैसे चाहें रुपये को ख़र्च कीजिये। पर एक शर्त अवश्य रहेगी कि साल में चार बार आप पत्रों द्वारा मुझे उसकी अवस्था अवश्य सूचित करती रहियेगा। आपको कोई ख़ास बात लिखने की ज़रूरत नहीं—केवल यही कि वह कैसी है।"

"यह मैं कर दूँगी," कोकिला देवी ने उत्तर दिया। फिर न मालूम क्या दिल में ख्याल आया कि बोलीं—"क्या आप को इसके बिछुड़ने का दु:ख नहीं होगा?"

"होगा तो, पर लाचारी है! आप से छिपाने से क्या फ़ायदा? देखिये—यह बहुत सम्भव है कि मैं दूसरी शादी करूँ। संसार की नज़रों में तो मैं अभी अविवाहित ही हूँ! एक अति सुन्दर तथा कृपालु लड़की है। उस ने मेरे हृदय पर अधिकार भी कर लिया है। और मैं नहीं चाहता कि मेरी यह कहानी उसके कानों में पड़े।"

"मैं समझ गई!"

"श्रीमतीजी, मैं अपने साथ कोई सामान आदि नहीं लाया हूँ, ये लीजिये पचास रुपये, इसके लिये कपड़े बनवा दीजियेगा और यह ६००) रुपया पहिले मास का ख़र्चा।"

कोकिला देवी ने हाथ बढ़ाया। नोटों का स्पर्श होते ही हाथ काँप उठा बोलीं—"इसकी रसीद...?"

"वकील को भेज दीजियेगा। अच्छा, अब आज्ञा दीजिये।"

"क्या अभी चले जाइयेगा ?"

"हाँ, मुझे शीघ्र से शीघ्र रियासत में पहुँच जाना है।" और राजेन्द्र प्रताप सिंह उठ खड़े हुये। गोदी में रानी को चिपटा लिया। उस को देने के लिये कोकिला देवी की तरफ़ हाथ बढ़ाया, पर रुक गये। उन्होंने रानी का चुम्बन लिया, और ज़मीन पर खड़ा कर दिया। कोकिला देवी ने झट उसे अंक में उठा लिया।

"आप इस के साथ..." राजेन्द्र प्रताप का गला रुँध आया। नेत्र गीले हो गये।

"निश्चिन्त रहिये, मैं इसे अपनी पुत्री की ही तरह पालूँगी!"

"धन्यवाद! आप ने मुझे आजन्म अपना ऋणी बना लिया!" और अपना अन्तिम स्नेह चुम्बन रानी के कपोलों तथा मस्तक पर अंकित करके राजेन्द्र प्रताप चले गये।

कोकिला देवी स्तब्ध-सी बैठी रहीं। यदि गोद में रानी तथा हाथ में नोट न होते, तो कदाचित् इस घटना को वे स्वप्न ही समझतीं।

एक समय था कि राजेन्द्र प्रताप के लिये स्त्रियाँ पागल रहा करती थीं। हँसमुख, सुन्दर, बलिष्ट तथा प्रान्त में सब से बड़ा रईस, एक राज्य का उत्तराधिकारी! चाचा राजा श्रीधरवीर सिंहजी ने विवाह नहीं किया था, राजेन्द्र को गोद ले लिया था। बड़े-बड़े लोगों की यही इच्छा थी कि उनकी पुत्री के पति राजेन्द्र प्रताप ही हों! पर न मालूम क्यों, वे शादी करने पर राज़ी नहीं होते थे। चाचाजी भी उन की शादी के बारे में उत्सुक थे। आख़िर एक दिवस उन्होंने इसके बारे में ज़िक्र छेड़ ही तो दिया। बोले—"बेटा, मैं तो अविवाहित ही रहा, परन्तु तुम को तो शादी कर लेनी चाहिये।"

राजेन्द्र चुप रहे।

"चुप न रहो। संकोच त्याग कर साफ़ साफ़ कह दो। मैं तुमको इजाज़त देता हूँ।"

"चाचाजी, मुझको विवाह करने से इन्कार नहीं है। पर कोई उपयुक्त..."

"क्यों? रतनपुर की राजकुमारी उर्मिला?"

"वह तड़क भड़क की शौकीन है, फ़ैशन-परस्त है !"

"और आनरेरी मजिस्ट्रेट चन्द्रनाथ की पुत्री, चन्द्रावती ?"

"हरी-भरी सी है, पीली !"

"कुमारी इन्दिरा ?"

"वह तो बहुत हठी है।"

"तो फिर तुम कैसी लड़की चाहते हो ? समझ में नहीं आता। तुम नहीं जानते कि स्त्रियाँ क्यों पसन्द की जाती हैं—केवल इसलिये कि वे विपरीत गुणों को समिश्रण रखती हैं। यदि स्त्रियाँ हर तरह पूर्ण हों, दोष से रहित हों, तो फिर शायद मनुष्य का जीवन दूभर हो जाय।"

"आपका कहना उचित है। पर मेरी यह इच्छा है कि मेरी जीवन-संगिनी ऐसी न हो कि मुझे बाद में पछताना पड़े। मैं काफी सोच-विचार कर, अच्छी तरह परख कर, शादी करना चाहता हूँ।"

"अच्छा, ऐसा ही करो। मगर कुल, मान, प्रतिष्ठा का अवश्य ध्यान रखना।"

"आप की आज्ञा न टालूँगा।"

"देखो, मुझे धन की चाह नहीं। खर्च मेरी आमदनी का आधा भी नहीं है। यह सब धन जमा होता जा रहा है केवल तुम्हारे लिये। इस से मुझे यह प्रलोभन नहीं कि तुम्हारी शादी में दहेज मिले। पर हाँ, मैं इतना ज़रूर चाहता हूँ कि ख़ानदान ऊँचा हो।"

"इसका मैं ध्यान रखूँगा।"

"बेटा, मैं बूढ़ा हो चला। मैं चाहता हूँ कि इन आँखों के मुँदने के पहले ही तुम्हारी शादी देख लूँ।"

राजेन्द्र ने सिर झुका लिया। और उस दिन फिर विवाह की बात ख़तम हो गई।

इसके बाद, अचानक एक दिन फिर चाचा-भतीजे में बात-चीत शुरू हो गई। उसी रात राजेन्द्र घूम घाम कर लौटे थे।

"बेटा, मैं अब तीर्थ-यात्रा को जाना चाहता हूँ। सम्भव है, साल-छः महीना बाद लौटूँ। मेरे पीछे तुम्हीं मेरे प्रतिनिधि रहोगे। किसी बात में कमी न करना। पर मुझे सब लिखते रहना। मुझे खुशी होगी। पर सब से बड़ी ख़ुशी होगी यह पढ़ कर कि तुमने अपनी जीवन-संगिनी का चुनाव कर लिया है।"—चाचा ने कहा।

राजेन्द्र ने फिर कोई उत्तर न दिया।

"और देखो, राजेन्द्र, तुम इस बीच में यहीं रहना। स्कूल की इमारत बन गई है, पर मास्टर नहीं हैं। तुम इस बारे में ध्यान देना। अच्छा, योग्य मास्टर रखना। धन की परवाह मत करना। समझे?"

और दूसरे दिन प्रातःकाल ही वे तीर्थ यात्रा को चल दिये। पर चलते-चलते एक बात कह गये—"मैंने सुना है कि पास की ज़मींदारी मनोहरपुर के जागीरदार ने ख़रीद ली है। उनका यहीं पर रहने का इरादा भी है। वे कुलीन वंश के हैं। उनकी पुत्री मनोरमा अति सुन्दर, शिष्ट तथा प्रतिभा-वान है।"

राजेन्द्र ने सिर झुका लिया। और उनके जाने के बाद वह कार्य में जुट गया। स्कूल का प्रबन्ध करना सर्व-प्रथम तथा आवश्यक था। उसने अध्यापक के लिये विज्ञापन दिया। उत्तर में सैकड़ों प्रार्थना-पत्र आये। एक को चुन लिया। बाक़ी प्रार्थना-पत्रों को रद्दी की टोकरी में डाल दिया। मास्टर जयन्ती प्रसाद को स्वीकृति भेज दी गई कि 'आपकी नियुक्ति ५० रु० मासिक पर की जाती है। रहने के लिये स्थान भी मिलेगा।'

यही उसने चाचाजी को भी लिख भेजा। उत्तर आया—जिस दिन स्कूल खुले उस दिन जलसा हो। और इधर नियति ने अपना खेल प्रारम्भ कर दिया।

नौं बुलाई जा गई। राजेन्द्र को यह मालूम था कि मास्टर जयन्ती प्रसाद आ गये हैं। जलसे और दावत का प्रबन्ध हो रहा था। राजेन्द्र प्रातः काल पाँच बजे उठे, और सात बजते-बजते घोड़े पर सवार हो चल दिये।

बाल-रवि आकाश के एक कोने से झाँक रहा था। वायु सुगन्धि से परिपूर्ण थी।

प्रकृति की शोभा को निहारते हुये राजेन्द्र चले जा रहे थे। थोड़ी-देर बाद वे स्कूल के निकट आ पहुँचे। स्कूल शहर के एक कोने में था। इमारत आलीशान थी। स्कूल के चारों तरफ़ सुगन्धित पुष्पों की क्यारियाँ थीं। पर वे स्कूल के सामने न रुक सीधे उस छोटे से मकान की तरफ़ बढ़े जो बाग़ के एक किनारे पर था। वह मकान भी नया था।

दरवाज़े पर ही एक नौकर मिला, जिसने बताया कि मास्टर साहब स्कूल में हैं। राजेन्द्र को बैठक में बिठा कर वह उन्हें ख़बर करने गया। राजेन्द्र

ने देखा कि कमरा साफ़-सुथरा है, सभी वस्तुयें करीने से सजी हैं। एक किनारे पर एक अलमारी पुस्तकों से भरी खड़ी थी। जिल्दों पर छपे हुये पुस्तकों के नाम पढ़कर उन्हें मास्टर साहब की योग्यता का विश्वास हो गया।

थोड़ी देर की प्रतीक्षा के बाद भी जब मास्टर साहब नहीं आये, तो वे बाहर निकल गये। बेला, जुही, चमेली, गुलाब फूल रहे थे। वे इधर उधर घूमने लगे कि अचानक ठिठक रहे। कानों में किसी की रस घोलती सी आवाज़ पड़ी। कोई गा रहा था।

दत्तचित्त हो गाना सुनने लगे। एक अनार के पेड़ का सहारा लेकर खड़े थे। पत्तों की खड़खड़ाहट से यह प्रतीत हुआ कि कोई आ रहा है। एकाएक गाना रुक गया, और राजेन्द्र ने देखा, सामने एक बालिका खड़ी है। वयस यही १६-१७ साल। उसके बाल खुले हुये थे, और श्वेत साड़ी तथा श्वेत ही ब्लाउज़ पहिने थी। सुन्दर, अति सुन्दर! गुलाबी कपोल, और [illegible] तरह झूमने वाले नयन!

"क्षमा कीजियेगा! मैं जय-श्री प्रसादजी से मिलने आया था।"

"वे स्कूल की तरफ़ गये हैं। आप का शुभ नाम?"

"मेरा नाम राजेन्द्र प्रताप है।"

"आप ही राजेन्द्र प्रताप सिंह हैं?" बालिका ने कुछ चकित होकर पूछा। फिर एकाएक कुछ लज्जित होकर बोली—"क्षमा कीजियेगा! मैं अभी जाकर पिता-जी को बुला लाती हूँ।"

फिर थोड़ी देर बाद लौट आई। आकर बोली—"पिताजी स्कूल में नहीं हैं। बाहर गये हैं। आते ही होंगे। आप उनके आने तक रुकियेगा न?"

"जी, यदि आपको कोई असुविधा न हो।"

"मुझे कोई असुविधा न होगी। मैं तो अभी आप ही के बारे में सोच रही थी।"

"मेरे बारे में! क्या सोच रही थीं?"

"यही कि आप कैसे होंगे—अधेड़ या बूढ़े?"

"और ऐसा न पाकर तुम्हें विस्मय हुआ होगा।"

इसका उत्तर न देकर वह बोली—"मैं आपको धन्यवाद देना चाहती थी, क्योंकि आप ही की दया के कारण हम लोग यहाँ आ सके हैं।"

"इसमें मेरी दया कहाँ आई? यह तो आपके पिताजी योग्यता के कारण हुआ।"

"फिर भी आपको धन्यवाद देना मैं अपना कर्त्तव्य समझती हूँ।"
इतने ही में किसी के पद-शब्द सुनाई पड़े।
"पिताजी आ रहे हैं। वे आप से मिल कर बहुत खुश होंगे।"
और मास्टर साहब ने आते ही कहा—"बेटी, मृणालिनी, कुछ जल-पान का प्रबन्ध तो करो!" और अतिथि को लेकर वे घर की ओर चल दिये।

•

इन नये मास्टर से मिल कर राजेन्द्र प्रताप को अत्यन्त प्रसन्नता हुई।
मास्टर साहब किसी उच्च वंश के न थे, न किसी उच्च सभा के सदस्य थे, वे विद्वान थे।

जब राजेन्द्र चलने लगा, तो उन्हें पिता-पुत्री घोड़े तक पहुँचाने गये।
"मुझे आशा है, मास्टर साहब, आज शाम का जलसा सफल रहेगा। उसमें कई राजकुमारियाँ भी आयेंगी।"

"तब तो उसमें मेरा सम्मिलित होना उचित न होगा!" मृणालिनी बोली।
"क्या तुम्हें डर लगता है?"
"मैं कभी भी किसी राजकुमारी से मिली नहीं।"

"नहीं, डरने की कोई बात नहीं!" राजेन्द्र ने हँसते हुये कहा, और चल दिये। रास्ता तो वही था जिस पर होकर वे आये थे, पर यह मार्ग अब नया-सा प्रतीत होने लगा। आते समय तो प्रकृति की शोभा निरखते आये थे, पर लौटते समय उनकी आँखों में बसी थी एक सुन्दर मूर्ति, और कानों में गूँज रही थीं वही सुरीली तान! हृदय ज़ोर से धड़क रहा था, रगें तेज़ी से फड़क रहीं थीं, शरीर रोमांचित हो आया था।

यह सब क्यों? इसका कारण वे स्वयं ही नहीं बता सकते थे। आँखों ने कितनी ही सुन्दर स्त्रियाँ देखी थीं, पर ऐसी सादगी नहीं, पवित्रता नहीं, निर्दोषिता नहीं। शायद अनजाने में ही मदन-देव ने हृदय को सुमन-शर से बेधित कर दिया।

"काश, इन राजकुमारियों में भी इतनी सादगी होती!"
सुबह को तो शाम का जलसा अपने ऊपर एक भार-सा लग रहा था, पर अब इतनी व्यग्रता थी कि बार-बार घड़ी निकाल कर समय देख रहे थे। माली को बुला कर एक गुलदस्ता बनाने की आज्ञा दी। इस गुलदस्ते को वे बया

करेंगे, यह स्वयं ही निर्णय नहीं कर पाते। उसने स्वयं कोट में एक गुलाब लगा लिया।

उत्सव बाग़ में एक उत्तम स्थान पर था। स्थान-स्थान पर झंडियाँ टँगी हुई थीं। नीचे हरी हरी दूब थी। छोटे छोटे बच्चे प्रसन्न चित्त हो चिड़ियों की तरह चहक रहे थे। राजकुमारियाँ— उर्मिला, चन्द्रावती, इन्दिरा आदि—रंगीन तितलियों की भाँति फुदक रही थीं। चन्द्रावती धानी रंग की साड़ी पहने थी, और कानों में विद्युत जैसे चमकते ईयररिंग थे। उर्मिला आसमानी रंग की जरी के काम की साड़ी पहने थी, और उसी रंग का ब्लाउज़ तथा सैण्डल भी पहिने हुये थी। गले में एक बहुमूल्य हार था। इन्दिरा भी एकदम इन्द्राणी-सी सजी हुई थी।

राजकुमार राजेन्द्र के आगमन ने जैसे सब में हलचल पैदा कर दी। सभी उसके समीप खिंच आईं। उन्होंने सबके अभिवादन का समुचित उत्तर दिया। पर उसकी आँख किसी की तलाश में फिरती ही रही। अन्त में पा ही लिया। एक कुंज में आधी छिपी हुई सुधामिनी खड़ी थी।

राजेन्द्र ने जाकर पूछा—"यहाँ क्यों खड़ी हो?"

"मुझे डर लगता है!"

"डर किस बात का? ये तुम्हें खा तो नहीं जायेंगी!"

"ये इतनी सुन्दर हैं, सजीली हैं..."

"तुम्हें डरने की कोई आवश्यकता नहीं। चलो, तुम्हारा परिचय उस महिला से करा दूँ, जो काली साड़ी पहिने बैठी हैं। ये रामनगर की राजमाता हैं।"

बड़ी जल्दी राजमाता के दिल में इस शर्मीली लड़की ने घर कर लिया। उससे वे घुल मिल कर बातें करने लगीं। राजकुमार राजेन्द्र उन्हीं की कुर्सी के पीछे खड़े हो गये।

"अगर हम लोग राजकुमार की कृपा दृष्टि चाहती हैं," उर्मिला ने कहा—"तो पहिले उस घिनौनी लड़की से मेल मिलाप बढ़ायें!"

पर शीघ्र ही उन्हें अपनी गलती मालूम पड़ गई। वह 'घिनौनी लड़की' ऐसी सुशील, विनयशील तथा शर्मीली निकली कि इन सब को मुक्तकण्ठ से उसकी प्रशंसा करनी पड़ी, मानना पड़ा कि वह गुदड़ी में लाल है।

इस घटना का अन्त क्या हो सकता था?

राजेन्द्र प्रताप, बीस वर्ष का नवयुवक, कुलीन वंश की कही जाने वाली तड़क-भड़क वाली कुमारियों की तरफ़ से कुछ खिंचा हुआ, प्रेम और सुख का भूखा...

मृणालिनी, नवविकसित कली की तरह, पवित्र, निर्दोष, लजीली ..फिर भी प्रथम परिचय होने पर राजेन्द्र ने यह नहीं सोचा था। कहाँ वह...एक रईस, उच्च वंश का राजकुमार और कहाँ मृणालिनी ! एक मामूली ग़रीब स्कूल-मास्टर की लड़की ! और क्या सम्बन्ध इन दोनों में हो सकता था ? केवल यही कि एक मालिक तो दूसरी नौकर की लड़की, एक दयावान और, दूसरी दया की पात्री ! तो भी कोई दिन ऐसा न जाता था जबकि राजेन्द्र का घोड़ा मास्टर साहब के दरवाज़े पर जाकर न बँधता हो।

पर राजेन्द्र के हृदय में कोई पाप न था। यों तो वह भी इसी संसार का एक प्राणी था, हाड़-मांस का एक पुतला था, फिर भी उसका हृदय निर्मल था। बात यह थी कि उसका जी संसार की दिखावटी बातों से—क्रीम और पाउडरों से पुते हुये चेहरों से—इतना ऊब गया था कि उसे इस 'सादगी की मूर्ति' के साथ रहने में एक अजीब आनन्द आता था।

और वह अनजाने में कुछ-कुछ झुकने लगा था—मृणालिनी की तरफ़ आकर्षित होने लगा था।

और मृणालिनी ? एक ग़रीब की बेटी ! उसे तो प्रथम ही बार ऐसे उत्तम स्थान में रहने का अवसर मिला था, प्रथम ही बार ऐसे-ऐसे भोजनों का स्वाद मिला था, प्रथम ही बार सोने और चाँदी की तश्तरियों में खाना खाया था, प्रथम ही बार एक नवयुवक से घुल-मिल कर बातें करने का अवसर मिला था। वह अपने को स्वर्गलोक में समझ रही थी। उसके साथ वही हुआ भी जो स्वाभाविक था। उसने राजेन्द्र को अपना हृदय समर्पण कर दिया, अपना संसार बना लिया, अपना देवता मान लिया, अपना आदि और अंत समझ लिया...

न मालूम कब तक यही होता रहता, अगर स्वरूपनगर की राजमाता इसमें न पड़ जातीं। वे बेचारी दयालु, प्रकृति की थीं, और मृणालिनी से स्नेह करने लगी थीं। उन्होंने राजेन्द्र के बारे में सुना, और यह सोचा कि राजेन्द्र को अवश्य सचेत करना चाहिये। वे मौक़े की तलाश में थीं कि एक दिन मौक़ा मिल ही गया।

बोलीं—"राजेन्द्र, मैं तुम्हें अपने बेटे की तरह मानती हूँ !"

"राजमाता ! इसमें भी कोई सन्देह है !"

"अगर मैं तुमसे कुछ कहूँ, तो नाराज़ तो न होगे?"

"कहीं माँ से बेटा नाराज़ हुआ करता है!"

"बात ज़रा अप्रिय..."

"कैसी भी अप्रिय हो, होगी मेरी भलाई ही के लिये, इसका मुझे पूर्ण विश्वास है!"

"तुम्हारे नये मास्टर की लड़की बहुत भोली-भाली और सुन्दर है।"

राजेन्द्र चुप रहा।

"मुझे मालूम हुआ है कि तुम रोज़ ही वहाँ जाया करते हो।"

"जी, आपने ठीक ही सुना है।"

"क्यों जाते हो?"

राजेन्द्र सोचने लगा। वह क्यों जाता है, इस पर तो उसने स्वयं भी कभी विचार नहीं किया था। बोला—"राममाता, मैं क्यों जाता हूँ, यह तो मैंने कभी नहीं सोचा था।"

"फिर भी?"

"मुझे अच्छा लगता है।"

"तुम्हें केवल अपने आनन्द के लिये किसी के नाम पर कलंक लगाना कहाँ तक उचित है?"

"मैंने तो कलंक नहीं लगाया!"

"जान बूझ कर नहीं लगाया, ठीक है, पर तुम दूसरे लोगों की ज़बान तो नहीं रोक सकते। बेटा, आज-कल का वातावरण ही ऐसा है। किसी भी युवक तथा युवती का अधिक मिलना-जुलना, चाहे उनका हृदय निर्दोष तथा निष्कलंक हो, चाहे वे निकटतम सम्बन्धी ही क्यों न हों, संसार नहीं देख सकता। वह तो उन दोनों को अपने ही दृष्टिकोण से देखेगा।"

"पर दूसरे लोगों को क्या पड़ी है...?"

"यह तो तुम रोक नहीं सकते। इससे उत्तम तो यही है कि उनको अवसर ही न दिया जाय। संसार की नज़रों में एक युवक तथा युवती का मिलना क्या अर्थ रखता है, जानते हो?"

"जी नहीं।"

"एक तो यह कि वह युवक उस युवती से प्रेम करता है तथा उसे पत्नी बनाना चाहता है, और दूसरा यह कि वह दुष्ट है, कामी है, और उसको भ्रष्ट करना चाहता है, उसका सतीत्व लूट कर, चरित्र पर कलंक लगा कर छोड़ देना चाहता है। मैं जानती हूँ कि तुम्हारी इन दोनों में कोई भी इच्छा नहीं है।

तुम उससे विवाह कर नहीं सकते और मुझे पूर्ण विश्वास है कि तुम्हारा इरादा उसे भ्रष्ट करने का भी नहीं है।"

राजेन्द्र चुप रहा। वह एक शब्द भी न बोल सका।

"परन्तु यह स्वाभाविक है कि अगर तुम उससे ज़्यादा मिले-जुले, तो वह तुम्हारी तरफ़ आकर्षित हो जायगी। और तब? इससे तो यही अच्छा है कि तुम उसके यहाँ जाना छोड़ दो, उससे मिलना एकदम बन्द कर दो।"

"मैं नहीं समझता कि मैं आप को किन शब्दों में धन्यवाद दूँ। मैं अन्धा था, आप ने मेरी आँखें खोल दीं, राजमाता!"

"यही उत्तर पाने की मुझे तुम से आशा भी थी। राजेन्द्र, वह सुन्दर, भोली-भाली नव-विकसित कली के समान है..."

"नहीं, नहीं, ऐसा न कहिये, राजमाता, मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि मैं ने जो कहा है वही करूँगा भी।"

और राजेन्द्र फिर चला आया। सारे दिन वह व्यग्र रहा, चिन्तित रहा। ओह, अगर मृणालिनी इन बातों को सुनेगी, तो क्या कहेगी?

राजमाता ने जो कहा था वह ठीक ही निकला। उसके दोस्तों ने उसे बधाइयाँ दीं, और इस बात को गुप्त रखने पर शाबाशी। जब उसने अनभिज्ञता प्रगट की तो उस पर वे हँसे, और जब वह नाराज़ हुआ तो उसे चिढ़ाया।

पर बेचारी मृणालिनी को कुछ भी पता न था। वह फूलों और चिड़ियों के बीच में डूबी अपनी नई दुनिया में व्यस्त थी।

'मृणालिनी को इस बारे में आगाह कर देना चाहिये'—राजेन्द्र ने सोचा। पर यह कार्य किस पर सौंपा जाय? क्या वह स्वयं जा कर कहे, मगर...

इसी चिन्ता में वह पड़ा रहा।

उस सन्ध्या को भी वह उसी दयेव-पुन में पड़ा बाग़ में घूम रहा था। अचानक सामने से मृणालिनी आती दिखाई पड़ी। उसने चाहा कि वह मृणालिनी के सम्मुख न पड़े, पर पूर्व इसके कि वह छिपे मृणालिनी ने उसे देख लिया।

"आप को देख कर बड़ी ख़ुशी हुई, राजकुमार, मैं तो समझती थी कि आप कहीं चले गये हैं।"

"ऐसा क्यों समझा ?"

"इसी से कि तीन दिन बीत गये, और आप दिखाई नहीं दिये। तीन
न से आप नहीं मिले !"

राजेन्द्र क्या कहे, समझ में नहीं आ रहा था। मृणालिनी एकटक उसको
र देख रही थी।

"मैं ज़रा कार्य में अधिक व्यस्त रहा।"

"तो आप आगे कभी भी इतना व्यस्त न रहा कीजिये। मुझे आप के न
ने पर अच्छा नहीं लगता।"

राजेन्द्र कैसे उससे सब बातें साफ़ साफ़ कहे ? कैसे इस भोली भाली
लिका को समझायें ?

"आप ने तो यह जीवन मेरे लिये स्वर्ग बना दिया, राजकुमार !"

"पर स्वर्ग में भी [illegible]"

[illegible] इस संसार में वियोग
ना निश्चय है।"

"मैं आप का मतलब नहीं समझी, यह पहेली सी क्यों बुझा रहे हैं ?"

"मृणालिनी, मैं तुम से एक दो बातें कहना चाहता हूँ, सम्भव है कि वह
हें अच्छी न लगें। किन्तु उसके लिये दोषी मैं ही हूँ, मैं ने तुम्हारे साथ
ा अन्याय किया है।"

"आपने मेरे साथ अन्याय किया है ?"

"कैसे तुम्हें समझाऊँ ! मेरे तुम्हारे यहाँ आने पर बहुतों ने टीका टिप्पणी
है।"

"किसने ? उन राजकुमारियों ने ?"

"सब ने।"

"पर वे कहते क्या हैं ?"

"वे कहते क्या हैं, यह कह कर मैं अपनी ज़ुबान गन्दी नहीं करना
हता, न तुम्हें ही दुःख पहुँचाना चाहता हूँ। पर मृणालिनी, मेरे इस प्रकार
य तुम से मिलने, में मेरा ही दोष है। मेरी कोई बुरी नियत नहीं थी।
हारी सुन्दरता, तुम्हारा भोला भाला, स्वभाव, तुम्हारी सादगी ने मुझे
ह लिया था। पर मैं कितना स्वार्थी था कि मैं ने तुम्हारा ज़रा सा भी ख्याल
ीं किया। ज़रा सा भी नहीं सोचा कि मनुष्य मेरे इस स्वार्थ के कारण
हें दोष लगायेंगे। क्षमा करो, मुझे दुःख है। मैं ने ही ग़लती की है। मैं ही

इसे सुधारूँगा। लोगों की ज़ुबानें शीघ्र ही बन्द हो जायेंगी जब वे देखेंगे कि हम लोग अब ज़रा भी नहीं मिलते—एक-दूसरे की सूरत तक नहीं देखते... अरे! यह क्या मृणालिनी!"

मृणालिनी सिर पकड़ कर बैठी थी। उसका चेहरा पीला पड़ गया था। राजेन्द्र एकदम डर-से गये। उन्होंने उसको पकड़ लिया, और बोले—"मृणालिनी, मृणालिनी, आँखें खोलो!"

किसी युवती स्त्री को इस प्रकार अपने अंक में रखने का यह प्रथम ही अवसर था। सारे बदन में सिहरन दौड़ गई, हृदय तेज़ी से धड़कने लगा, रगें तेज़ी से फड़कने लगीं। वह अपने को न रोक सके। दबा हुआ प्रेम उभर आया। उसको कस कर चिपटा लिया, और बोले—"मृणालिनी, मृणालिनी!"

मृणालिनी की पलकें कुछ हिलीं, होंठ कुछ काँपे। राजेन्द्र ने सन्तोष की साँस ली।

मृणालिनी ने आँखें खोलीं, तो अपने को राजेन्द्र के बाहुपाश में पा कर, शरमा कर खड़ी हो गई। धीमे स्वर में कहा—"आप ने क्या कहा था? हाँ, याद आया यही कि हम लोग अब न मिलें—एक दूसरे की सूरत भी न देखें! अच्छी बात है, यही होगा।" और वह फूट-फूट कर रोने लगी।

राजेन्द्र का हृदय द्रवित हो गया। वह संसार में पहिले मनुष्य न थे, जिन्हें स्त्री के आँसुओं ने हरा दिया हो। स्त्री के आँसू सर्वदा से पुरुष पर विजेता होते आये हैं और होते रहेंगे।

"मृणालिनी! मैं तुम्हें नहीं छोड़ूँगा। दुनिया वाले जो चाहें सो कहें। अब रोओ मत!"

"ग़लती मेरी ही थी, तुम्हारा दोष नहीं था। सब मेरा दुर्भाग्य है। मैं ने यह नहीं सोचा था कि मैं एक ग़रीब की लड़की हूँ, और तुम एक राजकुमार। मैं ने बौना हो कर चाँद को पाने की कोशिश की थी, उचित ही फल मुझे मिला!"

"नहीं, नहीं, मृणालिनी, यह बात नहीं है।"

"नहीं, मैं अब तुम्हारी बात नहीं सुनूँगी। तुम जाओ। मैं तुम्हें रोक भी नहीं सकती। मेरा तुम पर क्या अधिकार?"

"अधिकार क्यों नहीं, सब-कुछ है।"

"राजकुमार, आप जाइये, और मुझे मेरे भाग्य पर छोड़ दीजिये!"—मृणालिनी रो कर बोली।

चाँदनी छिटक रही थी। उसमें मृणालिनी अति सुन्दर, साक्षात् स्वर्ग की देवी-सी, लग रही थी।

राजेन्द्र ने दुखी हो कर कहा—"मृणालिनी, दुनिया जो चाहे सो कहे, पर मैं तुम्हें नहीं छोड़ सकता।"

"क्यों?"

"यह भी कोई कहने की बात है? मैं तुम से प्रेम करता हूँ।"

"सच!"

"चन्द्रदेव साक्षी हैं, यह प्रकाश, यह पृथ्वी, यह झरना—सब साक्षी हैं। मैं तुम से प्रेम करता हूँ और शीघ्र ही विवाह करूँगा।"

"मुझसे?"—कुछ आश्चर्य से मृणालिनी ने पूछा।

"क्या तुम्हें मेरा विश्वास नहीं?"

"ओह!" मृणालिनी का स्वर काँप गया।

"मेरे जीवन की साध पूरी हो गई, रानी!" राजेन्द्र ने कहा। इस समय तो वह अपने चाचाजी की बातें भूल गया था।

"अब तुम घर जाओ। रात ज़्यादा हो गई। चलो, तुम्हें घर पहुँचा दूँ।"

दोनों चल दिये। दोनों ही अति प्रसन्न थे। दोनों ही के ख़ुशी के मारे पैर ज़मीन पर न पड़ते थे।

"लो तुम्हारा घर आ गया। अब विदा दो। पर एक वादा करो। अभी इस बात को गुप्त रखोगी न?"

"क्यों?"—कुछ सशंकित स्वर से मृणालिनी ने पूछा।

"उस समय तक जब तक मैं चाचाजी की स्वीकृति न पा लूँ।"

"क्या वे नाराज़ हो जायेंगे?"

"वे क्या करेंगे, यह तो नहीं बताया जा सकता, पर यह निश्चय समझो कि कोई भी तुम को मुझसे अलग नहीं कर सकता।"

'यह कार्य उचित था या अनुचित' यह प्रश्न बार-बार राजेन्द्र के हृदय में उठ रहा था। उसका हृदय ख़ुशी से धड़क रहा था, चाहता था कि ज़ोर से पुकारे—'मृणालिनी, मेरी मृणालिनी!' पर न मालूम क्यों कोई अज्ञात शक्ति बार-बार उसके कानों में कह रही थी—'तुम ने उचित नहीं किया।'

'नहीं, नहीं, मैं ने उचित ही किया' यह उस अज्ञात शक्ति को उत्तर देता—'मैं उससे प्रेम करता था। मैं ने आज एक अति सुन्दर स्त्री को अपना लिया है। मैं तो ऐसी ही जीवन-संगिनी की तलाश में था। अब मेरी मनोकामना पूरी हो गई।'

पर वह अज्ञात शक्ति शायद इस उत्तर से सन्तुष्ट न होती और कहती—'यह उचित कार्य न था।'

सोने के पहिले उसने अपने चाचा को ख़त लिखा। वह चाहता था कि चाचा को यह लिखे कि 'मैंने एक लड़की देखी है। सुन्दर, भोली-भाली, निर्दोष, ग़रीब, पर उच्च वंश की नहीं। उससे मैं प्रेम करता हूँ और वह मुझसे। क्या मैं उससे शादी कर लूँ?' पर वह अपने चाचा की प्रकृति को जानता था, अतः उसने यों लिखा—'आप मेरी शादी के लिये उत्सुक हैं, यह मुझे मालूम है। मान लीजिये कि कोई सुन्दर लड़की केवल उच्च घराने को छोड़ कर और सब बातों में मेरे लिये उपयुक्त हो—मुझको मिल जाये, तो आप उसके साथ विवाह करने की स्वीकृति दे देंगे?'

यह पत्र लिख लेने के बाद उसे कुछ सन्तोष हुआ। सम्भव है कि चाचा जी स्वीकृति दे दें, क्योंकि मैं उनसे अपनी जीवन-संगिनी की विशेषताओं के बारे में कह चुका हूँ। वह सोने ही जा रहा था कि नौकर ने आ कर एक ख़त दिया। वह ख़त मनोहरपुर के जागीरदार साहब का था, जिसमें उससे प्रार्थना की गई थी कि वह अगले दिन दोपहर को उन्हीं के यहाँ भोजन करें।

प्रातःकाल होते ही वह स्कूल की तरफ़ चला। दरवाज़े पर घोड़ा बाँधते समय उसे लोगों के कहने का ध्यान हो आया, जो उसका घोड़ा बँधा देख कर तरह-तरह के विचार दौड़ाया करते थे। एक दिन असलियत मालूम हो ही जायेगी—उसने सोचा।

मास्टर साहब स्कूल जाने की तैयारी में थे।

"राजकुमार, उदास-से क्यों प्रतीत होते हो?"

"मैं तो उदास नहीं हूँ।"

मास्टर बोले—"तुम्हारा चेहरा कुछ मुर्झाया हुआ-सा है। कदाचित् रात ज़्यादा जगे हो। एक प्याला चाय पियो।" और उन्होंने अन्दर बैठी हुई मृणालिनी को चाय बनाने की आज्ञा दी। फिर बोले—"क्षमा कीजियेगा राजकुमार, मेरा तो स्कूल का समय हो गया, पर आप चाय पीकर जाइयेगा।"

"धन्यवाद! मैं आप से कुछ बातें करना चाहता हूँ, पर अभी नहीं, जब अवकाश हो।"

"जब आप की इच्छा हो।" और मास्टर साहब स्कूल चल दिये।

राजेन्द्र ने अन्दर घुसते ही मृणालिनी को देखा—वह मेज़ के सहारे खड़ी हुई थी। मेज़ पर नाश्ते का सामान रखा हुआ था।

हँस कर बोली—"मैं तो जानती थी कि तुम अवश्य आओगे।"

"तो मना कर दीजिये, न आया करूँगा।"

"देखो, ऐसी बातें न कहा करो। लो, कुछ खा लो!"

राजेन्द्र ने खाते खाते कहा—"ऐसा स्वादिष्ट भोजन तो किसी राजा को भी शायद ही मिलता हो।"

"पर मेरे राजा को तो मिलता है। सच बताइये, आपको पसन्द आया?"

"बहुत!"

"यह सब मैंने ही बनाया है। आप की रुचि के अनुसार भोजन बनाना मैं शीघ्र ही सीख जाऊँगी।"

राजेन्द्र हँस पड़ा। उसकी स्त्री हो कर, इतने बड़े राज्य की स्वामिनी हो कर फिर खाना बनाने की क्या ज़रूरत पड़ेगी? पर वह एकाएक गम्भीर हो गया, हँसी रुक गई। सम्भव है कि वह राज्य की स्वामिनी न बन पाये, और वह स्वयं ही एक मामूली आदमी बन जाये!

"आप गम्भीर क्यों हो गये?"

"एक बात बताओ मृणालिनी। अगर मैं ग़रीब हो जाऊँ, राज्य से वंचित कर दिया जाऊँ, तो क्या तुम मुझे प्यार करोगी?"

"प्रेम में यह सब अन्तर नहीं डाल सकता राजेन्द्र! बल्कि मैं तो तुम को और भी अधिक प्यार करने लग जाऊँगी। सच पूछो, तो मुझे राजमहल से डर लगता है।"

"क्यों?"

"वहाँ की नौकरानियाँ तक इतनी तड़क भड़क की पोशाक पहनती हैं, जो मुझे स्वप्न में भी प्राप्त नहीं हुई।"

"पगली कहीं की!" पर राजेन्द्र को यह देख कर निराशा हुई कि इसे भी कपड़ों की इतनी प्रिय है! उसकी निराशा छिप न सकी, चेहरे पर झलक ही ही आई। मृणालिनी ने भी देख लिया। पूछने लगी—"क्यों, क्या बात है? क्या नाराज़ हो गये?"

राजेन्द्र ने बहाना बनाना चाहा, पर मृणालिनी ने यही कहा—"मुझे क्षमा कर दो। मुझमें त्रुटियाँ हैं, कमी है। धीरे धीरे त्रुटियाँ दूर [illegible] जायेंगी, कमी पूरी हो जायेगी। मैं तुम्हें नाराज़ नहीं करूँगी। मैं तुम्हारी नाराज़ी की अपेक्षा मर जाना बेहतर समझती हूँ!"

"मृणालिनी, तुम तो पागलों की सी बातें करती हो, मैं क्यों नाराज़ होने लगा!" थोड़ी देर दोनों चुप रहे। फिर राजेन्द्र ने कहा—"अच्छा, अब विदा दो।"

"इतनी जल्दी ! अभी आप को आये देर ही कितनी हुई !"

"मुझे दूर जाना है।"

"कहाँ ?"

"मनोहरपुर के जागीरदार के यहाँ। वहाँ दावत है।"

मृणालिनी चुप रही।

"यदि तुम कहो, तो न जाऊँ।"

"नहीं, नहीं, जाइये। मैंने सुना है कि उनकी पुत्री मनोरमा अति सुन्दर है।"

"पर तुम्हें कोई भय नहीं होना चाहिये मृणालिनी ! मेरी इच्छा स्वयं ही जाने की नहीं है, विवश हो कर जाना पड़ रहा है, केवल शिष्टाचार के लिये। जिस हृदय पर मृणालिनी-जैसी देवी विराजमान है, उस पर कोई भी अधिकार नहीं जमा सकता। जिन नयनों में तुम्हारी मोहनी सूरत बसी है, उनमें कोई अन्य नहीं आ सकता। विश्वास रखो, मृणालिनी, एक मनोरमा क्या सौ मनोरमायें तुम्हारी बराबरी नहीं कर सकतीं। मैं तुम से प्रेम करता हूँ—और किसी से भी नहीं।"

उसके इन शब्दों को सुन कर मृणालिनी आनन्द से नाच उठी, तथा नियति भी मुसकरा पड़ी !...

...कुछ ही घंटों के पश्चात् वह जागीरदार साहब के यहाँ पहुँच गया। जागीरदार साहब ने उसका दिल खोल कर स्वागत किया। और भी जितने मेहमान थे, वे भी उससे मिल कर प्रसन्न हुये। जागीरदारिनी ने तो उसकी आव-भगत में कोई कसर ही न रखी। आखिर तो वह एक बड़े राज्य का उत्तराधिकारी था, और अविवाहित था। किस माता-पिता की इच्छा अपनी पुत्री अच्छी जगह ब्याह देने की नहीं होती ! जागीरदार तथा उनकी स्त्री भी तो किसी कन्या के पिता-माता थे।

अभी भोजन में कुछ देर थी। लोग आपस में बात-चीत कर रहे थे। राजेन्द्र भी दत्तचित्त हो दो फ़ौजी अफ़सरों की बातें सुन रहा था। एकाएक सब लोग द्वार की तरफ़ देखने लगे। राजेन्द्र ने भी चकित हो कर देखा—दरवाज़े पर एक मनोहारिणी मूर्ति खड़ी थी। 'यही मनोरमा है !' फ़ौजी अफ़सर फुसफुसाया। राजेन्द्र ने अपने जीवन में प्रथम ही बार मनोरमा को देखा था। लम्बी, सुन्दर, कान्तिमयी, प्रतिमा-युक्त ! कजरारे नयन, सुडौल, लम्बी ग्रीवा, नागिन-जैसी लहर खाती वेणी, आकर्षक ओंठ, रक्त-रंजित कपोल और मोहनी मुसकान !

राजेन्द्र ने बहुत सी सुन्दरियाँ देखी थीं, पर ऐसी अपूर्व तथा अनुपम नहीं। वह जैसे स्वप्नलोक में पहुँच गया हो। और उसके कानों में अत्यन्त कोमल-सी एक आवाज़ पड़ी—"नमस्ते !" तो उसका ध्यान टूटा, स्वप्नलोक से फिर इसी लोक में उतर आया। देखा, आशीर्वादिनी मनोरमा के साथ खड़ी हैं, और मनोरमा नमस्ते कर रही है। वह लज्जित हो गया, खड़े हो कर नमस्ते की। मनोरमा आ कर माता के साथ उसकी बगल में बैठ गई। और उसके चारों तरफ एक जमाव-सा लग गया। राजेन्द्र अपनी जगह पर बैठा रहा।

इसमें कोई संशय नहीं कि वह मनोरमा पर मोहित हो गया था। वह कोई अन्य लोक का तो प्राणी था ही नहीं, वह भी एक पुरुष था। और ऐसे विरले ही पुरुष होंगे, जिन्होंने सुन्दरता की मोहिनी शक्ति के आगे सिर न झुकाया हो। विश्वामित्र-जैसे मुनि भी जब प्रभावित हो गये थे, तो राजेन्द्र की क्या गिनती थी!

'वह कितना भाग्यवान होगा, जिसके साथ यह विवाह करना स्वीकार कर लेगी!' उसने सोचा और उसे ईर्षा होने लगी उस मनुष्य के भाग्य पर 'अगर मैं स्वतन्त्र होता, यदि मृणालिनी को वचन न दे दिया होता!...पर यह व्यर्थ है। मनोरमा मुझको महत्व ही न देगी। कहाँ वह और कहाँ मैं! आकाश-पाताल का अन्तर है।'

उसे फिर याद नहीं कि बाक़ी समय कैसे बीता। भोजन में क्या पदार्थ थे। शायद वह नशे में था—उस पर मनोरमा की सुन्दरता का नशा चढ़ गया था। नशा स्थायी नहीं रहता। धीरे-धीरे कम होता है, और अन्त में उतर जाता है। और यदि दिमाग़ पर कोई धक्का लगे, तो और भी जल्दी उतर जाता है, चाहे वह नशा किसी भी प्रकार का हो। राजेन्द्र को भी धक्का लगा, चाचा का पत्र पढ़ कर। उसने अब चौथी बार पत्र पढ़ा:—

'प्यारे बेटे,

मुझे ताज्जुब होता है कि तुम ऐसे सवाल पूछ कर केवल स्याही और काग़ज़ ही बर्बाद करते हो या कुछ सोचते भी हो? ख़ैर, अब तुम ने सवाल पूछा है, तो उत्तर देना मेरा भी फ़र्ज़ है। कीचड़ और दूध कभी नहीं मिल सकते, और यदि मिल भी जायें, तो दूध दूध न हो कर कीचड़ ही हो जाता है। कीचड़ को चाहिये कि कीचड़ में मिले और दूध को दूध में। तुम स्वयं ही समझदार हो। इतना उत्तर यथेष्ट होगा।...'

हाँ, वह समझदार है, और वह समझ भी गया। वह दोनों वस्तुयें साथ-साथ नहीं पा सकता—या तो मृणालिनी को ही पा ले या राज्य ही को। पर

वह किसको चुने ? उसमें कोई और गुण भी तो नहीं था जीविका-उपार्जन के लिये। प्रारम्भ ही से जिसको वह अपनी सम्पत्ति समझता आया है, उससे हाथ धो बैठे ? और उस निर्दोष भोली-भाली बालिका को धोखा दे ? एक तरफ़ कुआँ दूसरी तरफ खाई ! वह इसी उधेड़-बुन में था कि चाचाजी का दूसरा ख़त भी आ गया। लिखा था—

'मेरे बेटे,

इतनी जल्दी दूसरा ख़त पा कर तुम्हें ताज्जुब तो ज़रूर होगा, पर मैं तुम्हें सावधान कर देना अपना कर्त्तव्य समझता हूँ।

विद्वान् मनुष्य आगा-पीछा सोच कर कोई काम करता है। 'बिना विचारे जो करे सो पीछे पछताय', जो काम करना खूब सोच-विचार कर करना, जल्दबाज़ी न करना। प्रेम के पीछे उतावला हो जाना बुद्धिमानों को शोभा नहीं देता। जिसे तुम नवयुवक प्रेम कहते हो वह सच्चा प्रेम नहीं—वह तो केवल एक नशा है, जो धीरे-धीरे कम हो कर उतर जाता है। मेरा विश्वास करो। सब स्त्रियाँ एक-सी होती हैं। शादी के कुछ ही महीने बाद तुम यह भूल जाओगे कि तुम्हारी पत्नी वही स्त्री है, जिसके प्रेम में तुम मर जाने को तैयार थे या जिससे तुम घृणा करते थे।

जहाँ तक मैंने देखा तथा सुना है, मैं ने तो यही सत्य पाया कि बेवकूफ़ उससे शादी करते हैं, जिससे कि वे प्रेम करते हों; और बुद्धिमान् उसको प्रेम करते हैं, जिससे कि वे शादी करें।

तुम शादी करना चाहते हो, तो फिर किसी ऐसी स्त्री से क्यों न करो, जो उच्च घराने की हो, जो समाज में तुम्हें आगे बढ़ा सके। जिसके साथ शादी करके तुम्हें नीचा न देखना पड़े, अपने सहयोगियों में मुँह न छिपाना पड़े।

यह केवल मेरी सलाह है। इसको आज्ञा मत समझना। तुम अपने मन के अनुसार कार्य करने के लिये स्वतन्त्र हो।

पर एक बात कहे बिना मेरा जी नहीं मानता। तुम यह जानते हो कि मैं तुम्हें कितना स्नेह करता हूँ। तुम्हारा स्थान महेन्द्र को देने में मुझे पीड़ा होगी, क्योंकि मैं उसे नहीं चाहता। तुम मुझे पीड़ा पहुँचाओगे, ऐसी आशा तो नहीं है।...'

इस पत्र को पढ़ कर राजेन्द्र की द्विविधा और भी बढ़ गई। वह बेचारा परेशान हो गया। मृणालिनी या राज्य ? अजीब हालत थी उसकी।
मृणालिनी के पास होता, तो वह सब भूल जाता। अगर कुछ
केवल इतना ही कि [illegible] संसार में सर्वश्रेष्ठ है, तथा वह

है। और जब मिलन होता, तो सारी याद लौट आती, संशय होने लगता कि कहीं उसका स्वप्न केवल स्वप्न ही न रह जाय!

केवल कुछ सप्ताह पूर्व वह प्रसन्न था, बेपरवाह था, मग्न था, चहकता फिरता था और अब? उदास तथा व्याकुल!

क्या प्रेम का यही फल हुआ करता है?

उस दिन राजेन्द्र ने सोचा—'इन बातों का सम्बन्ध मृणालिनी से भी है, अतः इसकी भी राय लेनी चाहिये।'

और यही विचार करता हुआ वह तेज़ी से मास्टर साहब के घर की तरफ़ पैदल ही बढ़ा जा रहा था कि मृणालिनी ने उसको पुकारा। वह झरने के किनारे फूल चुन रही थी।

हँस कर बोली—"मैं आप की बिना आज्ञा फूल तोड़ रही हूँ।"

"जो स्वयं मुझे ही आज्ञा दे सकती है, उसे आज्ञा की क्या आवश्यकता? इन पर तो तुम्हारा भी अधिकार है।" राजेन्द्र ने उत्तर दिया। एकाएक उसे कुछ ध्यान आया, बोला—"रानी, मैं तुम से कुछ बातें करना चाहता हूँ।"

"क्या कोई ख़ास बात है?"

"हाँ।"

"क्या मुझसे फिर कोई अपराध हो गया है?"

"नहीं, नहीं, रानी! तुम से कोई अपराध नहीं हुआ।" मुर्झाया चेहरा फिर खिल उठा। चिड़ियाँ चहक रही थीं, पुष्प खिल रहे थे, बसन्त का साम्राज्य था।

"देखो राजेन्द्र, ये पुष्प कितने सुन्दर लग रहे हैं। चिड़ियाँ चहक रही हैं। जानते हो क्या गा रही हैं—प्रेम के गीत, झरना भी कल कल शब्द द्वारा प्रेम ही के तराने अलाप रहा है।"

जादू अपना कार्य शीघ्रता से कर रहा था। उदासी, निराशा, संशय, दुःख भागे जा रहे थे। मृणालिनी का सम्पर्क ही ऐसा था।

राजेन्द्र ने ज़मीन पर एक किताब पड़ी देखी। वह उसे उठाने को झुका, पर मृणालिनी ने उसे उठा लिया।

"नहीं, नहीं, इस किताब को न देखिये।" और उसने उस किताब के मुख-पृष्ठ पर अपना हाथ रख दिया।

"नहीं, नहीं, मैं किताब नहीं देखूँगा। कितने छोटे और सुन्दर हाथ हैं! और उसने उस हाथ को अपने हाथों में दबा लिया। हाथ हट जाने से मुख-पृष्ठ पर लिखा नाम भी उसने पढ़ लिया 'सभ्याचार के नियम।"

और यह हँस पड़ा। हँसता ही गया, यह सोच कर कि मृणालिनी सभ्य बनने के लिये किताबों की सहायता ले रही है। वह हँसता ही गया। फिर एकाएक रुक गया। चाचाजी के पत्र का स्मरण हो आया।

"मृणालिनी, ये किताबें पीछे पढ़ लेना, और इनको तुम व्यर्थ ही पढ़ रही हो।"

"मैं तो केवल तुम्हें प्रसन्न करना चाहती हूँ। तुम्हारे योग्य बनना चाहती हूँ।"

"अब भी हो। विश्वास रखो। स्त्रियाँ, विशेषतया सुन्दरी स्त्रियाँ, स्वभावतया नम्र तथा कृपालु होती हैं। पर इस समय मैं तुम से एक आवश्यक बात करने आया था। तुम्हारी सलाह लेने आया था, अपने जीवन के बारे में...। मैं ने तुम से कहा था कि मैं चाचाजी को लिखूँगा, उनका उत्तर आ गया है।"

मृणालिनी चुप रही।

"चाचाजी गर्वीले पुरुष हैं, उनको प्रेम में विश्वास नहीं।"

मृणालिनी चुप रही।

"और न शादी में। उनके विचार विचित्र हैं, पर इन सब बातों से कोई ख़ास फ़ायदा नहीं, सारांश यह है कि उन्हें हम लोगों की शादी पसन्द नहीं।"

मृणालिनी का चेहरा सफ़ेद पड़ गया। वह एक पत्ते की तरह काँपने लगी। उसने बोलना चाहा, पर बोल न सकी।

"ऐसी भयभीत न होओ, मृणालिनी, धैर्य धारण करो!" पर मृणालिनी ने जैसे कुछ नहीं सुना। सिर नत कर लिया, और आँखों से टप्-टप् आँसू टपकने लगे।

राजेन्द्र को मृणालिनी कभी भी इतनी सुन्दर नहीं लगी थी जितनी इस समय। जल-भरे नयन, काँपते ओंठ, विनम्र ग्रीवा, उदास मुखड़ा—सभी उसकी सुन्दरता को मानो द्विगुणित कर रहे थे।

"रोओ नहीं।" राजेन्द्र ने उसके आँसू पोंछते हुये कहा—"तुम ने पूरी बात सुनी ही कहाँ? कोई भी तुम को मुझसे विलग नहीं कर सकता—मेरे चाचाजी भी नहीं। सच मृणालिनी, चाचाजी अलग नहीं कर सकते। हाँ, मुझे राज्याधिकार से वंचित अवश्य कर सकते हैं, और उस समय मेरी दशा क्या होगी? मैं स्वयं ही नहीं कह सकता, किस तरह से जीविका चलेगी?"

स्त्रियों में एक ख़ास विशेषता होती है, वे अपने पति या प्रेमी का दुःख ज़रा भी

"तो फिर मुझे मेरे भाग्य पर छोड़ दो," मृणालिनी ने रो कर कहा।

"यह असम्भव है।"

मृणालिनी आँसू पोंछ कर बोली—"असम्भव है! तुम मुझे प्रेम करते हो, मैं सुखी हूँ। मैं जीवन भर तुम्हारी प्रतीक्षा में काट दूँगी।"

"लेकिन मृणालिनी, न मालूम कितना समय लग जाय!"

"मुझे इसकी कोई चिन्ता नहीं। हम लोग कभी तो मिलेंगे।"

"हो सकता है कि वर्षों प्रतीक्षा करनी पड़े।"

"मुझे भय नहीं है।"

और इस प्रकार उस सुबह का, जो इतना नीरस लग रहा था, अन्त हुआ।

राजा रणवीरसिंह जी अपनी सफलता पर आनन्दित हो उठे। 'राजेन्द्र का दिमाग सही रास्ते पर आ गया।' उन्होंने सोचा एक प्रेम में पागल व्यक्ति कितनी आसानी से रास्ते पर लाया जा सकता है! अब मैं वापस लौटूँगा, तो मुझे पूर्ण विश्वास है कि किसी न किसी ग्रामीण सुन्दरी के अदृश्य होने की कहानी अवश्य सुनाई देगी।

और थोड़े दिन शान्ति रही भी। पर राजेन्द्र को शान्ति नहीं थी। उसे छिपी मुलाकातें पसन्द न थीं। फिर भी वह इसे क्योंकर परिवर्तित करे, यही सोचने में लगा रहता था। जैसे जैसे दिवस, सप्ताह बीतते, उसे यह लगने लगा कि उसने एक बेवकूफी का कार्य किया है, पर अब विवशता थी। उसने वचन दे दिया था, और वह वचन भंग नहीं करना चाहता था।...

.. जिस दिन उसने सोचा था कि मास्टर साहब से सब बातें कह दूँगा, उसी सायंकाल मास्टर साहब की हृदय-गति बन्द हो जाने के कारण अचानक मृत्यु हो गई।...

और अब मास्टर साहब की मृत्यु के बाद राजेन्द्र मृणालिनी से मिला, तो वह अति दुखित थी, पीली पड़ गई थी। आँखें रोते-रोते सूज गई थीं।

राजेन्द्र ने सान्त्वना देते हुये कहा—' मृणालिनी, दुखी न होओ, मैं हूँ, मैं तुम्हें किसी प्रकार का कष्ट नहीं होने दूँगा।"

मृणालिनी रो कर बोली—"तुम भी बिछुड़ जाओगे।"

"क्यों मैं बिछुड़ जाऊँगा ? अब तो मैं तुम्हारी और भी ज्यादा परवाह करूँगा।"

"लोग मुझसे कह रहे थे कि मुझे यह मकान छोड़ना पड़ेगा, क्योंकि कोई दूसरे मास्टर इसमें रहेंगे।

"तुम फिर कहाँ जाओगी ?"

"जहाँ परमात्मा ले जाये।"

"क्या तुम्हारे कोई भी नहीं है ?"

"नहीं, तुम को छोड़ कर कोई भी नहीं है। और अब तुम को भी छोड़ना पड़ेगा। कोई कहता है कि किसी अनाथालय में चली जाओ। कोई कहता है लड़कियों को पढ़ाया करो। कोई कहता है फ़िल्म-कम्पनी में चली जाओ, और एक ने कहा 'मुझसे शादी कर लो'!" मृणालिनी रोने लगी।

"निराश न होओ, मृणालिनी, यदि तुम राय दो, तो हम लोग शादी कर लें।"

"शादी! पर तुम्हारा सर्वनाश हो जायेगा राजेन्द्र! नहीं, यह नहीं हो सकता। मैं तो मार्ग की धूल हूँ, धूल में मिल जाऊँगी। पानी का एक बुलबुला हूँ, न किसी ने आना देखा, न जाने की परवाह करेगा, पर तुम तो हीरा हो..."

"देखो प्रिये, मैं तुम्हें अकेला नहीं देख सकता। तुम्हारी सहायता करना मेरा धर्म है। अगर ऐसा हो कि हम लोगों की शादी गुप्त रहे..."

मृणालिनी ने कुछ नहीं कहा।

"यही ठीक रहेगा। इससे मेरा उत्तरदायित्व बढ़ जायगा। हम लोग कहीं बाहर चल कर रहेंगे। विश्वास रखो, एक दिन यही शादी गुप्त न रह कर प्रगट हो जायेगी, और उस समय मैं गर्व के साथ तुम्हें राज्य में वापस लाऊँगा। अच्छा तो तुम जाओ, और यह प्रगट करो कि तुम अपने किसी सम्बन्धी की शरण में जा रही हो।"

और दोनों विलग हो गये।

'कड़ाके की सर्दी...सूर्य निकलने से पहिले ही चल देना...चाचा को पत्र लिखना कि स्वास्थ्य-सुधार के लिये भ्रमण को जा रहा हूँ...रेल का सफ़र... लाहौर में आर्यसमाज में विवाह...एक जगह से दूसरी जगह रेल की यात्रा...

और अंत में काश्मीर के अन्दर एक छोटा-सा गाँव'...यह सब जब राजेन्द्र सोचा करता, तो स्वप्न ही-सा प्रतीत होता था।

उस गाँव में एक छोटा-सा घर, उसमें दो प्राणी—पति और पत्नी। एक सुखी गृह नन्दन कानन के समान होता है। एक सुखी परिवार स्वर्ग के सदृश!

परन्तु ज्यों-ज्यों समय बीतता गया राजेन्द्र की धारणा बदलती गई। मृणालिनी में मोह लेने की शक्ति अवश्य थी, पर मोह को स्थिर करने की नहीं। राजेन्द्र के हृदय में विचार उठने लगे 'कीचड़ और दूध! मृणालिनी में यदि यही कमी होती कि वह एक उच्च घराने की नहीं है—एक ग़रीब लड़की है, तो कदाचित् राजेन्द्र इसको टाल जाता, पर कठिनाई यह थी कि व्यवहार में, आचार-विचारों में वह राजेन्द्र के योग्य न साबित हो सकी। और राजेन्द्र को यह अनुभव होने लगा कि उसने एक बेवक़ूफ़ी का कार्य किया है। पर मृणालिनी पर वह प्रकट नहीं होने देना चाहता था। उसने विचारा—'मैं उसके सुख में बाधा नहीं पहुँचाऊँगा, चाहे मुझे दुखी रहना पड़े। वह नहीं जानती कि मैं अभी से उस बंधन से ऊब गया हूँ, जो जीवन-पर्यन्त अटूट है। ग़लती मेरी है। मैं ही स्वयं उसको सहूँगा।'...

और वह मृणालिनी के साथ लगभग एक साल रहा, पर कभी स्वप्न में भी अपने विचार मृणालिनी पर प्रकट होने का अवसर न दिया।

अचानक एक दिन राजेन्द्र को चाचा का पत्र मिला। पत्र छोटा-सा था। उसके प्रत्येक शब्द से चाचाजी का व्यक्तित्व झलक रहा था। उन्होंने लिखा था—

'क्या मैं यह जानने का अधिकारी हूँ कि क्यों तुम एक साल से बाहर रह रहे हो? यदि तुम्हें उचित लगे, तो बताना, अन्यथा नहीं। यौवन का एक अपना गुप्त रहस्य हुआ करता है। मैं बूढ़ा उसे नहीं जानना चाहता। यौवन की एक अपनी राह होती है, मैं उसमें विघ्न नहीं डालना चाहता, पर जहाँ तक मेरा विश्वास है कि एक सुन्दर स्त्री को कँटीली आँखों के कटाक्ष के आगे मनुष्य अपने को भूल जाता है। ख़ैर, यह सब तो तुम्हारी मर्ज़ी पर है। पर एक बात मैं कह देना अपना कर्त्तव्य समझता हूँ। तुम अभी नवयुवक हो, तुम को संसार में नाम पैदा करना है, इतिहास में स्थान बनाना है। अवसर अमूल्य है। राज्य-परिषद् का चुनाव होने जा रहा है, यह सुनहला अवसर हाथ से खोने पर पछताओगे।...

मुझे आशा है कि इस सप्ताह के अन्त तक तुम यहाँ अवश्य आ जाओगे।...'

यह पत्र पढ़ ही रहा था कि मृणालिनी आ कर उसके गले से लिपट गई। और हँस कर पूछा—"किसका पत्र है ?"

"चाचाजी का।"

हँस कर पूछा—"क्या लिखा है ?"

राजेन्द्र ने पत्र पढ़ कर सुनाया।

सुन कर मृणालिनी बोली—"तब तुम जाओ, अवश्य जाओ। अब मैं तुम्हें नहीं रोकूँगी।"

"मृणालिनी, तुम कह तो रही हो कि जाओ, पर यह भी सोचा है कि वहाँ पहुँच कर फिर मेरा शीघ्र वापस लौटना नहीं हो पायेगा।"

"न हो, मुझे इसका ख़्याल नहीं है। एक पत्नी को अपने पति के मार्ग में बाधक नहीं बनना चाहिये। मैं तुम्हें कुछ भी नहीं दे सकती हूँ, मैं कुछ सहायता नहीं कर सकी हूँ, पर इतना अवश्य कर सकती हूँ। तुम जाओ ज़रूर जाओ, संसार में अपना नाम अमर करो, इतिहास में अपना नाम स्वर्णाक्षरों में लिखवाओ। सम्भव है कि बाद में तुम्हारे चाचाजी मुझे क्षमा कर दें।"

"वह तो वह कभी भी न करेंगे, और मैं उनसे कहूँगा भी कैसे ?"

"तो भी मैं तुम्हारे उन्नति के मार्ग में काँटा न बनूँगी। मैं तुम्हारी पत्नी हूँ और कौन ऐसी पत्नी होगी, जो यह न चाहे कि उसके पति का नाम अमर हो जाये, वह इज़्ज़तदार, सर्वश्रेष्ठ पुरुष बने।"

"फिर तुम यहाँ अकेले रह लोगी ?"

"हाँ, अकेली रह लूँगी।"

"कोई चिन्ता नहीं, मैं सर्वदा तुम्हारा विश्वास करूँगी। कभी भी मेरे हृदय में सन्देह न होगा, सदा तुम्हारी ही मंगल-कामना मनाती रहूँगी, और जब मुझे यह मालूम होगा कि मेरे राजेन्द्र का नाम देश के कोने-कोने में व्याप्त हो रहा है, तो गर्व से फूली न समाऊँगी।"

और सप्ताह का अन्त भी न होने पाया था कि राजेन्द्र घर पहुँच गया।

चाचाजी घर पर नहीं मिले। वे किसी आवश्यक कार्य से चले गये थे। राजेन्द्र अपने काम में जुट गया। दिन-रात उसने एक कर दिया, पर तो भी सफलता होती न दिखाई पड़ी।

इधर शास्त्री की स्मृति धूमिल-सी पड़ने लगी। परन्तु वह नियमित समय पर अपने जेब-ख़र्च से बचा कर रुपया भेजता रहता था, यदा-कदा कपड़ों तथा पुस्तकों के पार्सल भी। सोचता कि मृणालिनी ख़ुश रहेगी, और सोचेगी कि मेरे पति को सर्वदा मेरा ख़्याल रहता है।

...एक दिन थका-माँदा राजेन्द्र आ कर चारपाई पर लेट रहा। बेचारा परेशान था। इतने ही में चाचाजी उसके कमरे में आ गये। वह उठ बैठा।

"चाचाजी, मैं इतनी मेहनत करता हूँ, पर सफलता के चिह्न तक भी दिखाई नहीं पड़ते।"

"ठीक है। मेहनत तो करते अवश्य हो, पर राजनीति में केवल मेहनत ही काफ़ी नहीं होती। तुम यह तो जानते ही हो कि मनोहरपुर के जागीरदार सभापतित्व के लिये कोशिश कर रहे हैं। तुम उनसे जा कर मिलो। उनके लिये कोशिश करो, और उनसे अपने लिये कोशिश करने को कहो। उनकी पुत्री मनोरमा को राज़ी करो कि वह भी तुम्हारी सहायता करे।"

चाचाजी के आदेशानुसार राजेन्द्र दूसरे दिन जागीरदार साहब के पास गया। जागीरदार तथा उनकी पत्नी दोनों ही उसको देख कर प्रसन्न हुये। और जब उसने अपनी इच्छा प्रकट की, तो सहर्ष तैयार हो गये। राजेन्द्र जैसे नवयुवक को अपनाने के लिये वे उत्सुक थे ही, क्योंकि उनकी इच्छा उसको जामाता के स्वरूप में देखने की थी। अगर राजेन्द्र कोई अन्य गुरुतर कार्य के लिये कहता, तो भी वे शायद तैयार हो जाते, यह निश्चय था।

लौटते समय वह मनो.रमा. के ब.रे में सोच रहा था। उसका सुन्दर विनीत चेहरा, मोहिनी आँखें, मधुर मुस्कान, सब उसकी नज़रों में घूम रहे थे। एकाएक उसका घोड़ा बिदका और उसका ध्यान किसी कुत्ते के भौंकने ने भंग किया। उसने घोड़े को सँभालते हुये चौंक कर देखा, पास कुंज के पास एक ग्रे-हाउन्ड और लता कुञ्ज के अन्दर से झलक रही थी किसी की साड़ी।

कुत्ता फिर भौंका और वह साड़ी वाली कुंज से बाहर निकल कर आई। राजेन्द्र ने पहचान लिया, मनोरमा थी। वह फ़ौरन घोड़े पर से कूद पड़ा, और मनोरमा की तरफ़ बढ़ा। मनोरमा के मुख पर एक प्रसन्नता की लहर दौड़ गई, पर राजेन्द्र न देख पाया।

"ओह, राजकुमार! आप कब आये?" उसने कहा—"शान्त हो, टाईगर, तुम्हें दोस्त और दुश्मन की पहिचान होनी चाहिये।" और उसने अपने

सुन्दर कोमल हाथों से ग्रे-हाउन्ड को सहलाना आरम्भ कर दिया। "मैं इसके व्यवहार के लिये क्षमा-प्रार्थी हूँ।"

"कदाचित् यही इसका, मेरे स्वागत करने का ढंग हो।" राजेन्द्र ने कहा—"मैं आप ही के यहाँ से आ रहा हूँ, क्या मेरी एक प्रार्थना स्वीकार कीजियेगा?"

"प्रार्थना नहीं, आज्ञा कहिये," मनोरमा ने राजेन्द्र की तरफ़ देखते हुये कहा—"यहाँ आ कर बैठिये।"

पर शीघ्र ही उसने लजा कर आँखें नीची कर लीं।

यदि राजेन्द्र कुछ अधिक अनुभवी होता, कुछ अधिक समझदार होता, तो कदाचित् उन नयनों की भाषा को समझ लेता, और समझ लेता कि क्यों एकाएक लज्जित हो नयन नीचे हो गये, क्यों ओंठों पर एक कँपकँपी-सी दौड़ गई, क्यों ये नाज़ुक हाथ एकाएक कुत्ते को सहलाने लगे।

पर वह अनुभवी न था, समझदार न था, और दूसरे उसको स्वप्न में भी आशा न थी कि मनोरमा के हृदय में उसके लिये कोई स्थान होगा।

राजेन्द्र ने अपनी सम्पूर्ण महत्वाकांक्षायें मनोरमा के समक्ष खोल कर रख दीं। वह बोलता ही गया, यह प्रतीत होता था कि उसके शब्दों का भंडार समाप्त ही नहीं होगा। अन्त में उसने कहा—"आप ही बताइये, क्या मेरी ये अभिलाषायें, महत्वाकांक्षायें, अनुचित हैं?"

"कदापि नहीं! बल्कि मैं तो यह कहूँगी कि वह पुरुष, जिसमें महत्वाकांक्षायें न हों, पुरुष कहलाने योग्य नहीं।"

"तो फिर आप...?"

"सहर्ष, राजकुमार! मैं आप की सहायता करूँगी और जिस समय आप की सफलता का समाचार सुनूँगी, उस समय जितना हर्ष मुझे होगा, कदाचित् किसी को भी नहीं।"

पर राजेन्द्र इन शब्दों के असली तत्त्व को न समझ सका।

"राजकुमार, कल आप भोजन मेरे यहाँ ही कीजियेगा," मनोरमा ने कहा। और फिर वह विदा माँग कर चल दी।

राजेन्द्र वहीं खड़ा रहा, उसने उस साड़ी की तरफ़, उस कुत्ते की तरफ़ तब तक देखा जब तक वे नज़रों से ओझल न हो गये। फिर भी वह खड़ा रहा कुछ बेहोश-सा-कुछ नशे में-सा। अरे, मैं इस तरह से क्यों खड़ा हूँ? और फिर उसके लिये क्या, उसके तो एक पत्नी है, सुन्दर, सुशील! और वह घोड़े पर सवार हो चल दिया, पर यह विचार बार-बार उसके हृदय में उठते

रहे—वाह, मनोरमा कैसी ही अच्छी ! इतनी सुन्दर, इतनी चंचल, इतनी सुरुचि, इतनी कोमल ! और बस वहीं हृदय में संघर्ष होने लगा।

रघुवीर सिंह जी की सभी बातें सुन कर खुश हुये, और मुस्करा कर बोले—"जागीरदार साहब तुम्हारे लिये कोशिश करेंगे, तो और निश्चय है। क्या तुम मनोरमा से भी मिले ?" पर उत्तर उन्हें बतलाया नहीं न गई, जिस समय उसने बताया कि किस तरह वह उससे मिला, और बातचीत की।

उस रात रघुवीर सिंह जी बड़ी ही निश्चिन्तता की नींद सोये। उस समय उन्होंने सोचा—"अब मैं उस जागीरदार के प्रेम के बारे में नहीं सुनता शायद सब समाप्त हो गया। राजेन्द्र सफल होगा और जागीरदार साहब अवश्य ही। और जब जागीरदार साहब मेरे सम्बन्धी बन जायेंगे, तो फिर अपने आत्मजा को आगे बढ़ाने से नहीं चूकेंगे, एक न एक दिन राजेन्द्र सम्पन्न होगा, और मेरे बाप का नाम अमर हो जायेगा।"

राजेन्द्र को सफलता प्राप्त हुई। जागीरदार साहब की सफलता तो निश्चय ही-सी थी। राजेन्द्र राज्य परिषद का सदस्य बन गया। राज्य परिषद में प्रवेश प्राप्त कर लेना साधारण कार्य न था। प्रान्त के राजाओं की, बड़े-बड़े जागीरदारों की, एक प्रतिनिधि राज्य-परिषद थी।

राजेन्द्र की सफलता पर सभी प्रसन्न थे। और जब रघुवीर सिंहजी जागीरदार साहब तथा मनोरमा को धन्यवाद देने गये, तो उनकी तेज और कुशाग्र निगाहों ने वह बात ताड़ ली, जिसे राजेन्द्र की निगाहें न देख पाईं थीं कि मनोरमा राजेन्द्र की ओर पूर्ण रूप से आकर्षित है। 'मनोरमा की जीत अवश्य होगी' उन्होंने सोचा—'मेरा इस समय बाघ में पड़ना उचित न होगा। राजेन्द्र मनोरमा से जीत नहीं पायेगा और फिर इस घटना का अन्त तो निश्चय ही है, दोनों का विवाह !'

राजेन्द्र को भी खुशी थी अपनी सफलता पर और साथ ही एक पुत्री का जन्म हुआ था। वह भागा-भागा कश्मीर गया। सुहासिनी उसकी सफलता पर फूली न समाई।

पर अब पति पत्नी के बीच अन्तर पड़ गया था, और वह धीरे धीरे बढ़ता ही गया। राजेन्द्र के चेहरे पर उदासी के बादल छाये रहते। उसका कश्मीर जाना

सुन्दर कोमल हाथों से ग्रे-हाऊन्ड को सहलाना आरम्भ कर दिया। "मैं
व्यवहार के लिये क्षमा-प्रार्थी हूँ।"

"कदाचित् यही इसका, मेरे स्वागत करने का ढंग हो।" राजेन्द्र ने कहा-
"मैं आप ही के यहाँ से आ रहा हूँ, क्या मेरी एक प्रार्थना स्वीकार कीजियेगा

"प्रार्थना नहीं, आज्ञा कहिये," मनोरमा ने राजेन्द्र की तरफ़ देखते हु
कहा—"यहाँ आ कर बैठिये।"

पर शीघ्र ही उसने लजा कर आँखें नीची कर लीं।

यदि राजेन्द्र कुछ अधिक अनुभवी होता, कुछ अधिक समझदार होता,
कदाचित् उन नयनों की भाषा को समझ लेता, और समझ लेता कि क
एकाएक लज्जित हो नयन नीचे हो गये, क्यों ओंठों पर एक कँपकँपी-सी दौ
गई, क्यों ये नाज़ुक हाथ एकाएक कुत्ते को सहलाने लगे।

पर वह अनुभवी न था, समझदार न था, और दूसरे उसको स्वप्न में
आशा न थी कि मनोरमा के हृदय में उसके लिये कोई स्थान होगा।

राजेन्द्र ने अपनी सम्पूर्ण महत्वाकांक्षायें मनोरमा के समक्ष खोल कर
दीं। वह बोलता ही गया, यह प्रतीत होता था कि उसके शब्दों का अंत
समाप्त ही नहीं होगा। अन्त में उसने कहा—"आप ही बताइये, क्या मेरी
अभिलाषायें, महत्वाकांक्षायें, अनुचित हैं?"

"कदापि नहीं! बल्कि मैं तो यह कहूँगी कि वह पुरुष, जिसमें महत्व
कांक्षायें न हों, पुरुष कहलाने योग्य नहीं।"

"तो फिर आप...?"

"सहर्ष, राजकुमार! मैं आप की सहायता करूँगी और जिस समय आप
सफलता का समाचार सुनूँगी, उस समय जितना हर्ष मुझे होगा, कदाचि
किसी को भी नहीं।"

पर राजेन्द्र इन शब्दों के असली तत्व को न समझ सका।

"राजकुमार, कल आप भोजन मेरे यहाँ ही कीजियेगा," मनोरमा ने कहा
और फिर वह विदा माँग कर चल दी।

राजेन्द्र वहीं खड़ा रहा, उसने उस साड़ी की तरफ़, उस कुत्ते की तर
तब तक देखा जब तक वे नज़रों से ओझल न हो गये। फिर भी वह ख
रहा कुछ बेहोश-सा-कुछ नशे में-सा। अरे, मैं इस तरह से क्यों खड़ा हूँ
और फिर उसके लिये क्या, उसके तो एक पत्नी है, सुन्दर, सुशील! और
घोड़े पर सवार हो चल दिया, पर यह विचार बार-बार उसके हृदय में उठ

रहे—काश, मनोरमा मेरी हो जाती ! इतनी सुन्दर, इतनी शालीन, इतनी सुशील, इतनी कोमल ! और मन यहाँ हृदय में संघर्ष होने लगा ।

रणधीर सिंह जी भी सारी बातें सुन कर खुश हुये, और अपनी सम्मति प्रकट की—"जागीरदार साहब तुम्हारे लिये कोशिश करेंगे, तो तुम्हारी जीत निश्चित है । क्या तुम मनोरमा से भी मिले ?" पर उनसे राजेन्द्र की घबराहट छिपी न रही, जिस समय उसने बताया कि किस तरह वह मनोरमा से मिला, और बातचीत की ।

उस रात रणधीर सिंह जी बड़ी ही निश्चिन्तता की नींद सोये । सोते समय उन्होंने सोचा—"अब मैं उन भावी के प्रेम के बारे में नहीं सुनता हूँ, शायद सब खतम हो गया । राजेन्द्र सफल होगा और जागीरदार साहब की अवश्य ही । और जब जागीरदार साहब मेरे सम्बन्धी बन जायेंगे, तो फिर वे अपने जामाता को आगे बढ़ाने से नहीं चूकेंगे, एक न एक दिन राजेन्द्र भी सभापति होगा, और मेरे घराने का नाम अमर हो जायेगा ।"

राजेन्द्र को सफलता प्राप्त हुई । जागीरदार साहब की सफलता तो निश्चय ही-सी थी । राजेन्द्र राज्य परिषद् का सदस्य बन गया । राज्य परिषद् में प्रवेश प्राप्त कर लेना साधारण कार्य न था । प्रान्त के राजाओं की, बड़े बड़े जागीरदारों की, एक प्रतिनिधि राज्य-परिषद थी ।

राजेन्द्र की सफलता पर सभी प्रसन्न थे । और जब रणधीर सिंहजी जागीरदार साहब तथा मनोरमा को धन्यवाद देने गये, तो उनकी तेज़ और कुशाग्र निगाहों ने यह बात ताड़ ली, जिसे राजेन्द्र की निगाहें न देख पाई थीं कि मनोरमा राजेन्द्र की ओर पूर्ण रूप से आकर्षित है । 'मनोरमा की जीत अवश्य होगी' उन्होंने सोचा—'मेरा इस समय बीच में पड़ना उचित न होगा । राजेन्द्र मनोरमा से जीत नहीं पायेगा और फिर इस घटना का अन्त तो निश्चय ही है, दोनों का विवाह !'

राजेन्द्र को भी खुशी थी अपनी सफलता पर और साथ ही एक पुत्री का जन्म सुन कर । वह भागा-भागा काश्मीर गया । मृणालिनी उसकी सफलता पर फूली न समाई ।

पर अब पति पत्नी के बीच अन्तर बढ़ गया था, और वह धीरे धीरे बढ़ता ही गया । राजेन्द्र के चेहरे पर उदासी के बादल छाये रहते । उसका काश्मीर जाना

धीरे-धीरे कम होता गया। यद्यपि वह नहीं चाहता था कि मृणालिनी इस अन्तर को जान ले, पर वह जान ही गई—किसी तरह इस गुप्त भेद का आभास पा ही गई। समझ गई कि वह पति के मार्ग में काँटे के समान है। पर उसने अपना सन्देह राजेन्द्र पर नहीं प्रगट होने दिया, अन्दर ही अन्दर घुलती रही, जलती रही, रोती रही। अन्त में जो कुछ होना था वही हुआ। वह बीमार पड़ गई।

उसकी बीमारी का समाचार पा कर राजेन्द्र को दुख हुआ। उसका हृदय ही उसे धिक्कारने लगा। कायरता उसी की थी, प्रथम उसे विवाह ही नहीं करना चाहिये था। और जब विवाह कर लिया था, तो उसे इस तरह से चला नहीं छोड़ना चाहिये था। उसने चाहा कि वह काश्मीर जाये, पर जा न सका। घोड़े से गिर जाने से उसके चाचा श्री रणवीर सिंहजी की मृत्यु हो गई। बेचारे अपनी बहू का मुँह तक भी न देख पाये, लालसा लगी रही। अन्त समय में भी वह राजेन्द्र को मनोरमा से विवाह कर लेने पर ज़ोर देते रहे।

दाह-कर्म के बाद राज्य के प्रबन्ध से पन्द्रहवें दिन छुट्टी मिली, तो वह सीधे काश्मीर भागा। वह पक्का इरादा करके गया था कि मृणालिनी को अब सर्व साधारण के सामने अपनी पत्नी स्वीकार कर लेगा। पर विधना का विधान विचित्र है। उसके पहुँचने के तीसरे दिन अपनी तीन साल की पुत्री रानी को छोड़ कर अपने पति की गोद में मृणालिनी ने दम तोड़ दिया।

राजेन्द्र के हृदय को धक्का पहुँचा। पर वह कर ही क्या सकता था? रियासत में उसे शीघ्र ही पहुँचना ज़रूरी था। अतः वह पुत्री का प्रबन्ध करके शीघ्र ही वापस लौट आया।

मृणालिनी की मृत्यु का उस पर काफ़ी असर हुआ। वैसे तो राज्य-परिषद् में वह काफ़ी दिलचस्पी लेता था, यहाँ तक कि उसकी अंतरंग कमेटी का भी सदस्य बना लिया गया, पर हृदय में उसके उत्साह नहीं था। उसका दिल टूट गया था।

राज्य-परिषद् के उपसभापति का चुनाव हुआ, और राजेन्द्र सर्व-सम्मति से उपसभापति चुन लिया गया।

एक मनुष्य के लिये, जो एक साल से परिषद् का सदस्य बना हो, इतनी जल्दी इस पद पर पहुँच जाना असाधारण था।

मनोरमा यह समाचार सुन कर हर्ष-विभोर हो गई। बधाई देने के लिये राजेन्द्र के घर आई, पर राजेन्द्र को यात्रा की तैयारी करते देख कर उसे

आश्चर्य हुआ। राजेन्द्र के स्वास्थ्य को देख कर तो और भी ज़्यादा आश्चर्य हुआ। और जब राजेन्द्र ने बताया कि स्वास्थ्य-सुधार के लिये विदेश जा रहा है, तो उसने पूरी सहानुभूति दिखाई, तथा उसके शीघ्र ही स्वस्थ हो जाने की मंगल-कामना की।

राजेन्द्र चला गया स्वास्थ्य सुधार के लिये—यदि सच कहा जाय, तो मस्तिष्क को शान्ति देने के लिये। वह जब चला, तो उदास था। मनोरमा ने उसे विदा दी, वह भी उदास थी। 'यदि मनोरमा मेरी हो सके...पर यह विचार व्यर्थ है। वह मेरी हो ही नहीं सकती!'—उसने सोचा। पर यदि उसे इसका विश्वास हो जाता कि मनोरमा उसकी हो सकती है, तो कदाचित् वह न जाता, और यदि जाता भी तो शीघ्र ही लौट आता, इतनी देर न लगाता, जितनी कि उसने लगाई।...

जब वह वापस लौटा, तो उसने मनोरमा के बारे में तरह तरह की बातें सुनीं कि बड़े-बड़े लोगों ने उससे विवाह करने की इच्छा प्रकट की है। मनोहरदास तथा उनकी पत्नी तो कइयों के प्रस्ताव पर सहमत भी हो गये, पर मनोरमा सहमत न हुई। उसने साफ़ इन्कार कर दिया।

उसके एक मित्र ने उससे कहा—"मनोरमा अवश्य किसी से प्रेम करती है।"

"हो सकता है।"—उस ने उत्तर दिया। और दिल में सोचने लगा कि वह भाग्यवान् व्यक्ति कौन हो सकता है?

उसके एक दूसरे मित्र ने कहा—"तुम्हें नहीं मालूम, मनोरमा बहुत बीमार है।"

मनोरमा के बीमार होने का समाचार पा कर वह अपने को रोक न सका। मनोरमा को देखने की इच्छा प्रबल हो उठी।

उसको देखते ही मनोरमा के ओठों पर एक क्षीण मुस्कान दौड़ गई। उसने बैठने की इच्छा प्रकट की। राजेन्द्र ने बिठा दिया। पीठ को सहारा देने के लिये राजेन्द्र ने तकिये को उठाया। 'उसकी आँखें धोखा तो नहीं दे रही हैं!' उसने एक बार आँखें बन्द कीं, और फिर खोलीं। नहीं, यह धोखा नहीं है। क्या वह स्वप्न-लोक में तो नहीं है?

मनोरमा से उसकी यह अवस्था छिपी न रही। उसने उस चित्र को उठा लिया, और ज़रा-सी हँसी ला कर बोली—"यह तस्वीर आप की ही है। मैं चोरी से ले आई थी।" और राजेन्द्र ने उसी मुख से सुना कि प्रथम भेंट में ही मनोरमा के हृदय पर उसने अधिकार कर लिया था।

ओह! कितना नासमझ था राजेन्द्र!

मनोरमा शीघ्र ही स्वस्थ हो गई। मंगल-वाद्य बजे। जागीरदार तथा उनकी पत्नी की अभिलाषायें पूर्ण हो गईं, और मनोरमा को तो मनोवांछित फल मिल गया। राजेन्द्र भी ख़ुश था।

नये राजा तथा रानी का स्वागत प्रजा ने दिल खोल कर किया। राज्य-परिषद् के सदस्यों ने बधाइयाँ दीं। और राजेन्द्र का घर 'स्वर्ग' हो गया। वह पिछली बातें भूल गया—वे बीते दिन याद न रहे, और इसी तरह सुख-चैन में कई वर्ष बीत गये।

लोगों का यह विचार है कि विवाह के बाद, शीघ्र ही नहीं तो अधिक से अधिक तीन वर्ष के भीतर यदि विवाह का फल प्राप्त न हो, तो डाक्टरों, वैद्यों, हकीमों की राय लेनी चाहिये।

दो-तीन वर्ष की कौन कहे, यहाँ तो आठ वर्ष बीत गये। मनोरमा चिन्तित थी, राजेन्द्र चिन्तित था और सभी इष्ट-मित्र चिन्तित थे। तरह-तरह की सलाहें देते थे। स्वयं जागीरदार साहब ने यह कहा कि—"बेटा, ख़ानदान का नाम चलाने के लिये पुत्र का होना आवश्यक है। तुम दूसरी शादी कर लो।"

मनुष्य कितना नादान तथा कितना स्वार्थी होता है! यदि सन्तान न हुई तो स्त्री का दोष!

पर राजेन्द्र इस पर सहमत न हुआ। चिन्ता ने शीघ्रता धारण करनी शुरू कर दी। और निराशा भी बढ़ती ही गई।

ऐसा नियम है कि अधिक सुख में या अधिक दुःख में प्रिय-जनों का स्मरण हो ही आता है। राजेन्द्र को भी स्मरण हो आया मृणालिनी का, जिसके बारे में उसने एक भी शब्द मनोरमा या किसी से भी नहीं कहा था। और जब मृणालिनी का स्मरण हो आया, तो याद आ गई मृणालिनी की पुत्री—अपनी पुत्री—रानी! वह व्यथित हो गया।

'क्या इसी का फल तो भगवान् मुझे नहीं दे रहे हैं? ओह, मैं भी कितना नीच हूँ कि जिस दिन से उसे कोकिला देवी के पास छोड़ा, एक बार भी देखने नहीं गया।' [illegible] क्रोध आने लगा स्वयं पर ही। 'यह अपराध अक्षम्य

है ! इसका सुधार करना चाहिये।' और वह आगे न सोच सका। दोनों हाथों से सिर थाम कर बैठ गया।

अब दिन-रात वह इसी चिन्ता में रहने लगा। यही पीड़ा उसे सताने लगी। यही व्यथा उसे व्यथित करने लगी। उसको ऐसा लगने लगा कि जैसे कोई उसके हृदय पर हथौड़े की चोट मार रहा हो, और कह रहा हो—'तुम नीच हो ! कायर हो ! तुम्हारा यह अपराध अक्षम्य है। शीघ्र ही इसका सुधार करो।' पर सुधार कैसे किया जाय ? रानी को ले आया जाय ? मनोरमा से सब बातें कह दी जायें ? वह फिर क्या समझेगी ? उसके कोमल हृदय को ठेस तो न पहुँचेगी ? मैं उसकी निगाहों में पतित तो नहीं हो जाऊँगा ?

चिन्ता चिता से भी भयानक होती है। चिता मुर्दे को जलाती है, चिन्ता जीवित को। राजेन्द्र दिन पर दिन सूखने लगा, स्वास्थ्य गिरने लगा।

मनोरमा से उसकी यह दशा न देखी गई। वह एक दिन बोली—"नाथ ! यह आप की दशा कैसी हो रही है ? क्या दुःख है आप को ?"

"क्या करोगी जान कर ?"

"क्यों, क्या मैं आप की अर्धांगिनी नहीं हूँ ? आप के सुख दुःख की साथिनी नहीं हूँ ?"

"हो, पर फिर भी..."

"रुक क्यों गये ? कहते चलिये, क्या मुझ पर विश्वास नहीं ?"

"तुम पर तो विश्वास है, पर डर है कि कहीं मेरा विश्वास न उठ जाये।"

"एक पत्नी का पति पर विश्वास नहीं उठ सकता, चाहे पति कैसा ही क्यों न हो !"

"यदि पापी हो तो ?"

"पापी हो, खूनी हो, पतित हो, कोढ़ी हो, अन्धा हो, पर है तो पति, और पति ही पत्नी का परमेश्वर है। पति ही के सहारे पत्नी इस संसार से पार होती है। विवाह बन्धन कोई कच्चे धागे की गाँठ नहीं है।"

"मनो, पर मेरी एक पाप-कथा है।"

"सुनाइये, स्वामी, शीघ्र बताइये, जिससे कि मैं भी आप का भार बँटा सकूँ।"

"तुम देवी हो मनोरमा !" और उसने कथा सुनानी आरम्भ कर दी। जब वह अन्त पर आया, तो मनोरमा रो दी। "बेचारी लड़की माँ का स्नेह ही न जान पाई। आप ने बड़ी भूल की नाथ ! पहले ही से मुझे सब

बतला देना था। वह माँ के प्रेम का मूल्य तो समझ लेती! अब भी समय है, शीघ्र जाइये, नहीं, हम दोनों चलेंगे और उसे लायेंगे।"

वाह रे, भारतीय नारी! धन्य है तुम्हारे पति-प्रेम को, धन्य है तुम्हारे हृदय की विशालता को!

पर मनोरमा की साध मन की मन में ही रह गई। इन्फ्लुएंजा ने दोनों पर आक्रमण किया। राजेन्द्र तो जीत गया, पर मनोरमा हार गई।...

और जब राजेन्द्र मनोरमा की भस्म को नदी में प्रवाह करके लौटा, तो वह पूर्व का राजेन्द्र न रह गया था।

काश्मीर में एक रमणीक उपत्यका में दो बालायें घूम रही थीं। दोनों ही कवियों की कल्पना की साकार मूर्तियाँ थीं—चंचल, अल्हड़, सुन्दर! दोनों में समानता थी। वयस भी लगभग बराबर ही था। पर एक विभिन्नता भी थी—एक स्वभाव की विनीत थी, नम्र थी, दयालु थी; और दूसरी स्वभाव की कुछ हठी, कुछ कठोर तथा गर्वीली थी।

"आह! यदि मैं एक राजकुमारी होती, तो कितनी सुखी होती!" उस गर्वीली बाला ने कुछ उच्च वाणी में कहा। लोग उसे कमला कहते थे।

"तुम भूल रही हो बहिन!" मधुर वाणी वाली ने कहा—"सुख के साधन हमारे अन्दर हैं, बाहर नहीं।"

"ओह! विमला, यह अपने ही उपयुक्त बात तुमने कही," कमला ने मज़ाक के तौर पर कहा—"तुम तो गुण की खान हो, जीती-जागती भलाइयों की प्रतिमा हो!"

"तुम भी बन सकती हो कमला, पर तुम तो ध्यान ही नहीं देतीं, ज़रा-ज़रा-सी बात पर तूल बाँध देती हो।"

कमला को जैसे यह विषय प्रिय नहीं लगा। वह एक गाना गुनगुनाने लगी। विमला ने टोक दिया—"इस गाने को न गाओ, माँ इसको नहीं पसन्द करतीं।"

"पर मैं तो पसन्द करती हूँ। माँ पसन्द नहीं करतीं, इससे उनके सामने नहीं गाती। इस [illegible] माँ यहाँ पर नहीं हैं। वह तो घर में [illegible] है।"

घर इसी उपत्यका में झील के किनारे पर था। उसी की तरफ़ देखती हुई विमला बोली—"हम लोगों का घर कितना सुन्दर है!"

"होगा! मुझे तो घर तथा जेल एक समान लगता है। मुझे तो यहाँ घर के बाहर ही अच्छा लगता है।"

"जेल देखा नहीं है तभी यह बात है। एक बार जेल देख लो, तो अन्तर मालूम पड़ जायेगा।"

कमला ने कोई उत्तर न दिया। केवल 'हाँ' कह दी, और एक तितली को पकड़ने के फिराक में लगी रही। फिर बोली—"विमला, तुम इतनी भली हो, कि हर जगह सन्तुष्ट रहती हो। परमात्मा को धन्यवाद है कि मैं तुम्हारी तरह नहीं हूँ।"

विमला न बोली।

कमला ने कहा—"क्यों? चुप क्यों हो विमला? वास्तव में जो मैं कहती हूँ, ठीक है। मेरा जी इस प्रकार के घर में नहीं लगता। मैं चाहती हूँ नई नई, तरह-तरह की साड़ियाँ, फ़ैशन के सामान, नाटक, और सिनेमा। यदि मैं अभिनेत्री बन सकती!"

"क्या तुम्हें माँ का ख्याल नहीं है कमला?"

"है, पर जीवन भर तो नहीं रह सकता। विमला, क्या तुम कभी भी नहीं सोचा करती हो, प्रेम, प्रेमी और विवाह के बारे में? उस जीवन के बारे में जो इस जीवन से भिन्न है?"

एक लज्जा की लहर नम्र तथा सुशील चेहरे पर दौड़ गयी। "ये बातें सोचने की होती हैं, वह देखो, डाकिया आ रहा है।"

कमला ख़त लेने दौड़ गई। केवल एक ही ख़त था। कमला को उसे देख कर निराशा हुई। डाकिया लौट गया।

"विमला, मैं तो समझती थी कि कोई निमन्त्रण पत्र होगा, पर यह निकला एक मामूली लिफ़ाफ़ा, संयुक्त प्रान्त से..।"

"संयुक्त प्रान्त से? मुझे नहीं मालूम था कि माँ के कोई रिश्तेदार वहाँ भी रहते हैं।"

"न मुझे ही। पर अगर वहाँ की जल वायु की तरह ही वहाँ के मनुष्य भी हैं, तो मेरा दूर से नमस्कार है। आओ, माँ को ख़त दे आयें।"

दोनों बालायें दबे पैरों घर में घुसीं। किसी को न पा कर उसी तरह झील की तरफ़ वाले दालान की ओर बढ़ीं। उनकी माँ मशीन पर सिलाई करने में व्यस्त थी, इतनी व्यस्त थी कि इनका आना न जान सकी।

विमला ने पीछे से आ कर चुपचाप माँ की आँखें बन्द कर लीं।

"छोड़ कमला, मुझे अच्छा नहीं लगता।"

"मैं तो यहाँ खड़ी हूँ, मुझ पर क्यों नाराज़ होती हो?"

"मेरी अच्छी बेटी विमला..." और विमला ने आँखें खोल दीं।

समय के साथ-साथ कोकिला देवी में भी परिवर्तन हो गया था। चेहरा अब भी सुन्दर था, पर झुर्रियाँ पड़ गई थीं। बाल लम्बे थे, पर आधे से अधिक श्वेत हो गये थे। आँखें चमकदार थीं, पर अधिक पीड़ा लिये हुये।

"माँ, तुम्हारे लिये सब से आनन्ददायक क्या हो सकता है?" कमला ने पूछा।

एक आह कोकिला देवी के मुँह से निकल गई—"मेरी मृत्यु!"

"नहीं माँ, ऐसा न कहो," विमला रूआँसी हो कर बोली।

"यह एक ख़त है, संयुक्त-प्रान्त से आया है," कमला बोली—"क्यों माँ, क्या वहाँ कोई अपना है?"

कोकिला देवी ने कुछ उत्तर न दिया। केवल ख़त ले लिया। लेते समय हाथ काँप उठा। पर उन्होंने उसे तभी खोला जब दोनों लड़कियाँ चली गईं।

कोकिला देवी उठ कर खड़ी हो गई। उन्हें दोनों बालायें झील के किनारे पानी में पैर लटकाये लहरों में खेलती दिखाई दीं। वह एकटक हो कर उन्हें देखने लगीं। उन्हें दोनों से प्रेम था। एक से इसलिये कि वह उन्हीं की पुत्री थी, और दूसरी से इसलिये कि उसे पाला था। वह खड़ी-खड़ी कुछ सोचती रहीं।

'नहीं, मैं ने जो कुछ विचारा है वही ठीक है,' अपने आप से बोलीं। यह लगा जैसे किसी अज्ञात शक्ति ने उन्हें कुछ चेतावनी दी, क्योंकि एकाएक वे कुछ पीली पड़ीं, और काँप गईं। और फिर कुछ सोचने लगीं।

झील के किनारे से आती हुई कमला की हँसी ने उनकी विचार-धारा तोड़ दी। उन्हें स्मरण हो आया कि वह ख़त अब भी उन्हीं के हाथ में है। उन्होंने आवाज़ दी—"कमला, विमला, यहाँ आओ!" आवाज़ देने के बाद वह फिर बैठ गईं तथा कुछ उदास, कुछ [illegible]

"माँ, जो कुछ कहना है [illegible]
की आदत को जानती थी, [illegible]
न बनो। मैं जो [illegible] सम्बन्ध हम सब से है, और ख़ास तौर पर तुम से।"

"मुझे खुशी है कि मेरे सम्बन्ध की कोई बात तो चाहे," कमला ने कुछ उत्सुक हो कर कहा। पर माँ के चेहरे की गम्भीरता से उसे कुछ सहमा-सा हुआ।"

"मैं ने तुम लोगों से एक भेद छिपा रखा था, इसलिये कि बता देने से हम लोगों के आनन्द में बाधा पड़ती, और दूसरे इसलिये कि बता देने से तुम से एक को . खैर ऐसे बहुत...से कारण हैं कि मैं ने उस भेद को गुप्त रखना ही उत्तम समझा। इस भेद का सम्बन्ध तुम से है कमला। मैं ने तुम दोनों को अपनी लड़कियों की तरह पाला, पर वास्तविकता तो यह है कि मेरे दो नहीं, बल्कि एक ही पुत्री थी। कमला, तुम मेरी बेटी नहीं हो!"

"तुम्हारी बेटी मैं नहीं हूँ! नहीं माँ, ऐसा न कहो!"

"कैसे न कहूँ, बेटी! यह सच है कि मैं ने तुम्हें पाला, पर तुम मेरी पुत्री नहीं हो। तुम राजा राजेन्द्र प्रताप की पुत्री हो। जब तुम तीन वर्ष की थीं, तब वह तुम्हें सौंप गये थे।"

"राजा राजेन्द्र प्रताप की पुत्री! मुझसे मज़ाक कर रही हो, माँ!"

"नहीं, कमला, सच कह रही हूँ, यद्यपि यह सच कहने में मुझे कितनी पीड़ा हो रही है, यह मैं ही जानती हूँ। सुनो, तुम्हारे पिता ने एक शादी की थी, जिसे उन्होंने गुप्त ही रखना अच्छा समझा।"

"क्यों?"

"इसलिये कि शादी बराबरी की नहीं थी। तुम्हारी माँ एक मास्टर की पुत्री थीं।"

कमला ने कुछ कहना चाहा, पर कोकिला देवी ने रोक दिया, और सारी कहानी उसे सुना दी।

"मेरे पिता की गलती थी। उन्हें शादी गुप्त नहीं रखनी चाहिये थी।"

"कमला, यह कहना तुम्हें शोभा नहीं देता।"

"मैं भी उचित समझती हूँ, अवश्य कहूँगी। अरे, विमला! रो क्यों रही हो?"

"माँ, तुम ने यह क्यों बताया" विमला ने रोते रोते कहा—"कि कमला मेरी बहिन नहीं है। यह चली जायेगी, तो फिर मैं अकेली कैसे रहूँगी?"

"पगली कहीं की!" माँ ने प्यार की झिड़की दी—"तू ने पूरा हाल सुना ही कहाँ? सुनो कमला, यह जो ख़त आया है उन्हीं का है। उन्होंने तुम्हें तो बुलाया ही है, पर यह सोच कर कि तुम्हें कहीं मेरा वियोग अधिक न खले,

मुझे भी बुलाया है। और वह यह भी जानते हैं कि मेरे एक पुत्री है, इसलिये उसे भी बुलाया है। हम लोग साथ-साथ रहेंगे, समझी विमला!"

"सच माँ!" विमला ने आँसू पोंछते हुये और मुस्कराने की चेष्टा करते हुये कहा—"तब तो कमला मुझसे अलग नहीं होगी।"

"तो मैं राजा राजेन्द्र प्रताप की पुत्री हूँ!" कमला ने कुछ रुकते-रुकते कहा। उसका गर्वीलापन अपनी छटा दिखाने को उत्सुक हो रहा था। "माँ, मैं तुम्हें माँ ही कहा करूँगी। माँ, मेरे हाथों को देखो, कितने छोटे, कोमल तथा सुडौल हैं। तुम तो हमेशा यही कहा करती थीं कि ये उच्च वंश की निशानी हैं।"

"हाँ हाँ, प्यारी बेटी! मैं तुम्हें कमला कह कर पुकारा करती हूँ। मैंने यह नाम इसलिये रखा, क्योंकि यह नाम मुझे प्रिय था, मेरी एक अत्यन्त प्रिय सखी का था, पर तुम्हारा असली नाम 'रानी' है।"

भोजन का समय हो गया था। पर कमला आज ज़्यादा न खा सकी। वह इतनी प्रसन्न थी कि प्रसन्नता ही से उसका पेट भर गया था। राजा राजेन्द्र प्रताप का नाम लोग बड़े ही आदर तथा गौरव के साथ लिया करते थे। वे अत्यन्त धनी थे। उनकी पुत्री होना कोई कम गौरव की बात न थी।

-

जिस दिन राजेन्द्र ने कोकिला देवी को पत्र लिखा उसी दिन अपने एक अनन्य मित्र को भी।

और मित्र के पत्र के उत्तर-स्वरूप, उनका पुत्र कोमलसिंह तीसरे ही दिन आ गया, क्योंकि राजेन्द्र ने उसी को भेजने के लिये लिखा था। उनके बुलाने के कारण भी थे, जो कारण उन्होंने व्यक्त किया था, वह तो साधारण ही था, पर जो उनके हृदय में था वह था कोमलसिंह से रानी का विवाह! उनका कोमलसिंह पर स्नेह भी अधिक था। कोमलसिंह होनहार था, स्वरूपवान था, प्रतिभाशाली था। राजेन्द्र के ख़ानदान में अब कोई भी न था। उन्हें कोमलसिंह से बढ़ कर राज्य का अधिकारी कोई भी दृष्टिगोचर न हुआ। कोमलसिंह का यह प्रथम ही  । वह मनोरमा के सामने भी आता-जाता था। एक प्रकार से ...यक्ति बन गया था।

...ो बुला कर सारा राजमहल सजाने की आज्ञा दी। ... समान ख़बर फैल गई। स्वभाव से परिचित राजा की ... को सब उतावले हो उठे।

और अन्त में उनके आने का दिन आ ही पहुँचा।

राजेन्द्र अपने कमरे में बैठे हुये विचारों में निमग्न थे। उनके सामने मृणालिनी तथा मनोरमा दोनों के ही चित्र टँगे हुये थे। वे इस समय रानी का ध्यान कर रहे थे—'वह कैसी होगी? क्या वह मृणालिनी-जैसी ही सुन्दर, सुशील, मधुर-भाषिणी होगी?'

अचानक कोमलसिंह ने आ कर विचार-प्रवाह में बाधा डाल दी। "चाचा-जी, वे लोग आ गये। गाड़ी फाटक के भीतर आ गई।"

राजेन्द्र चुपचाप उठ कर चल दिये। पीछे-पीछे कोमलसिंह था। उन्होंने तीन स्त्रियों को गाड़ी से उतरते देखा। उनके हृदय में अनेक भाव उठने लगे। हृदय में एक भयानक संग्राम होने लगा। वे तीनों निकट आईं। तीनों ने नमस्ते की। राजेन्द्र ऐसे खड़े थे, जैसे प्रस्तर मूर्ति हों।

"श्रीमान्। यह आप की बेटी है रानी! जिसे आप ने मुझे सौंपा था और जिसका नाम मैं ने कमला रख दिया है,"—कोकिला देवी ने कहा। राजेन्द्र ने बढ़ कर कमला को हृदय से लगा लिया, और बोले—"क्षमा करना, बेटी! मैं पापी हूँ।"

पुत्री पिता को पा कर हर्ष के आँसू बहा रही थी। पिता पुत्री को पा कर आँसू बहा रहे थे।...

कोकिला देवी पिता और पुत्री का मिलन देख रही थीं। सखीसी विमला एक तरफ़ चुपचाप खड़ी थी। और कोमलसिंह की निगाहें किसी के चेहरे पर जमी हुई थीं।

"चाचा जी, मुझे कोकिला देवी एक पहेली सी लग रही है," कोमलसिंह बोला। राजा राजेन्द्र प्रताप सिंह और कोमलसिंह बाग़ में टहल रहे थे।

"क्यों? तुम्हारी यह धारणा क्यों हुई? मुझे तो उनमें कोई बात ऐसी नहीं नज़र आती। बेचारी दुख की मारी हैं। उच्च घर की हैं। किसी समय काफ़ी धनवान् थीं, पर दुर्भाग्यवश अपना सब खो बैठीं।"

"सब नहीं, एक रत्न बच गया, उनकी पुत्री!"

राजेन्द्र एक क्षण के लिये विचलित हो गये, पर तुरन्त ही सँभल कर बोले—"हाँ, तुम ठीक कह रहे हो। विमला एक सुन्दर, सुशील लड़की है।

उसकी वाणी में तथा उसके व्यवहार में एक ख़ास आकर्षण है। वह वास्तव में रस है। पर तुम ने मेरी बात का जवाब नहीं दिया। तुम्हें क्यों कोकिला देवी पहेली-सी लगती हैं ?"

"इसका उत्तर तो स्वयं मुझे ही नहीं मालूम, लेकिन मुझे वह इतनी उदास, इतनी एकान्त प्रिय लगती हैं कि जैसे वह कोई रहस्य छिपाये हुये हों।"

"तुम आजकल कोई तिलिस्मी या जासूसी उपन्यास तो नहीं पढ़ रहे हो ?" राजेन्द्र ने हँस कर कहा—"वह कोई रहस्य नहीं छिपाये हुये हैं।"

"हो सकता है। वह उच्च वंशीय, सुन्दर, मिलनसार, मिष्ठ-भाषिणी, व्यवहार-कुशल हैं, पर मुझे यह लगता है, जैसे हर समय वह किसी विचार में डूबी रहती हों। जब मैं एकाएक कुछ कह बैठता हूँ, तो वह ऐसे चौंक पड़ती हैं, जैसे डर-सी गई हों। उनके हृदय पर कोई बोझ-सा लगता है।"

राजेन्द्र ने हँसते हुये कहा—"तुम्हारा सोचना सही है। उन्हें हर समय अपने गत जीवन का ख्याल बना रहता है, पर वह रहस्यमयी नहीं हैं।"

"वह कब तक यहाँ ठहरेंगी ?"

यदि कोई चतुर मनुष्य होता, तो अवश्य ताड़ लेता कि कोमलसिंह यह प्रश्न पूछते समय कुछ लज्जित-सा हो गया था, उसकी वाणी में कुछ कम्पन था।

"जब तक मैं उन्हें ठहरने के लिये राज़ी कर सकूँ, पर कमला रानी के विवाह तक तो अवश्य ही।"

"कमलारानी का विवाह ! मुझे तो सन्देह होता है कि वह विवाह के लिये शीघ्र तैयार न होंगी।"

"क्यों ?" राजेन्द्र ने उत्सुक हो कर पूछा।

"वह आसानी से प्रसन्न होने वाली लड़की नहीं। अन्य सभी ख़ूबसूरत लड़कियों की तरह..."

"क्या तुम उसे ख़ूबसूरत समझते हो ?"

"अवश्य।"

इस उत्तर से राजेन्द्र मन ही मन ख़ुश हुये।

"और [illegible] ?"

[illegible] नों में कोई तुलना नहीं कर

नहीं। [illegible] उठ पे, और कहे कि इन दोनों में जो

दे दो, [illegible] में आधा-आधा बाँट दूँ।"

पर [illegible] या झूठ था, यह तो उसी का

"अच्छा, एक बात बताओ, कोमल, क्या कमलारानी की तुमसे समानता है ?"

"नहीं। शायद वह अपनी माँ पर पड़ी हो। उनको माँ देखी थी ?"

"सुन्दर, अति सुन्दर ! सुडौल, भरा, गोदुआँ चकाचौंध। पर कमला रानी उनमें अंश नहीं आता। न वैसी आँखें, न उतना रंग। वह तो कुछ दबी, गर्वीली-सी है।"

"ऐसा ही तो स्वभाव बड़े चाचाजी का था।" कोमलसिंह का तात्पर्य राजा रघुवीरसिंह से था।

राजेन्द्र के मन में आया कि कुछ और प्रश्न पूछें, पर वह चुप रहे। इस समय उन्होंने चुप रहना ही उचित समझा। उनकी हार्दिक इच्छा थी कि कोमलसिंह का विवाह उनकी पुत्री से हो जाय। परन्तु उन्होंने अभी अपनी इच्छा प्रकट न करना ही अच्छा समझा। यदि वे चाहते, तो शादी कर सकते थे। दोनों में कोई भी उनकी आज्ञा का उल्लंघन नहीं कर सकता था। पर वह चाहते थे कि इन दोनों में कुछ प्रेम हो जाय तब वह अपनी इच्छा प्रकट करें। और प्रेम हो जायगा, इसका उन्हें पूर्ण विश्वास था। उनके विचार में किसी नवयुवक का, ख़ास कर कोमलसिंह-जैसे का किसी युवती के प्रेम में पड़ना, ख़ास कर कमलारानी-जैसी युवती में, असम्भव नहीं था। पर इतना अवश्य जानते थे कि कुछ समय लगेगा।

इसी से जब उन्होंने देखा कि दोनों काफ़ी समय साथ-साथ व्यतीत करते हैं, तो उन्हें बड़ी ही प्रसन्नता हुई। कमलारानी ने घुड़सवारी सीखने का निश्चय किया, और सो भी कोमलसिंह से ही; पढ़ने का निश्चय किया और वह भी कोमलसिंह से ही।

राजेन्द्रप्रताप यह सब देखते तो ख़ुश होते, पर कहते कुछ नहीं।

..."तुम्हारे पिताजी कितने अच्छे हैं !" विमला ने एक दिन कमला से कहा—"मैं तुम्हारे धन से ईर्षा नहीं करती, न तुम्हारे भवन से, पर ऐसे पिता पाने पर ज़रूर ईर्षा करती हूँ।"

"पर मैं तो तुमसे, इतनी अच्छी माँ पाने पर, ईर्षा नहीं करती !"

"यदि तुम चाहो, तो मैं माँ के प्रेम में हिस्सा दे सकती हूँ, पर मैं तुम्हारे पिता को बहुत चाहती हूँ। यदि वह मेरे पिता होते, तो आजन्म पूजा करती !"

"शौक़ से अब भी कर सकती हो। मैं बुरा न मानूँगी।"

इसी तरह और भी विषयों पर इन दोनों में बातें होती थीं। और लगभग सभी मनुष्यों के बारे में, परन्तु कोमल के बारे में कभी चर्चा नहीं चली। केवल

एक बार विमला ने पूछा—"क्या कोमलसिंह तुम्हारे पिता के रिश्तेदार हैं ?"

"नहीं, उनके दोस्त के पुत्र हैं ।"

"बड़े अच्छे मनुष्य हैं ।"

बस, फिर कोई बात नहीं हुई । क्योंकि कमला के चेहरे का भाव विमला ने देख लिया था ।

तीनों के लिये कमरे सुव्यवस्थित किये गये थे । पर एक कमरा ख़ास तौर पर सजाया गया था । क्योंकि अपनी बेटी के लिये कुछ विशेषता होनी ही चाहिये थी । यद्यपि इन तीनों के कमरे बराबर-बराबर थे, फिर भी कमलारानी का कमरा और दोनों कमरों से भिन्न था । उसमें बहुमूल्य कालीन बिछे थे । एक सोफ़ा सेट रखा था । एक किनारे रेडियो भी था । कमलारानी अपने इस कमरे को देख कर बड़ी प्रसन्न थी । उसकी वर्षों की साध पूरी हो गई थी । वह जो तड़क-भड़क पसन्द करती थी, वह यहाँ मिल गयी ।

अचानक एक दिन कोकिला देवी ने जाने का विचार किया । इस पर राजेन्द्र ने प्रार्थना की कि कमलारानी के विवाह तक यदि वह यहीं रहें, तो अति उत्तम होगा । प्रार्थना ही नहीं की बल्कि आग्रह भी किया । कोकिला देवी इस आग्रह के आगे परास्त हो गईं । राजेन्द्र ने एक बात का और अनुरोध किया कि विमला और कमला दोनों बहिनों के समान ही रहीं, अतः अब भी बहिनों के ही समान रहें । कोकिला देवी इस बात की आज्ञा दे दें कि वह विमला को भी अपनी बेटी की ही तरह मानें । कोकिला देवी को इस पर स्वीकृति देनी पड़ी ।

उसी दिन राजेन्द्र ने कमलारानी को अपने कमरे में बुलाया । आज यह प्रथम ही दिन था जब कि पिता ने पुत्री को बात करने के लिये बुलाया था । इसके पहिले उन्हें कुछ शर्म-सी आती थी उस लड़की से बात करने में, जिसके साथ उन्होंने इतना अन्याय किया था ।

बोले—"कमलारानी, जानती हो तुम्हें क्यों बुलाया है ?"

"नहीं, पिता जी ।"

"तुम ख़ुश तो हो ?"

"बहुत ख़ुश ।"

"हाँ बेटी, यही मैं भी चाहता हूँ । तुम्हारे ख़र्च के लिये मैं ने काफ़ी

रुपया रख दिया है। पैसे जो चाहे ख़र्च करना। पर हाँ, फ़िजूल ख़र्ची मत करना। मेरी इच्छा केवल तुम्हें सुखी देखने की है।"

"पिता जी, मैं बहुत सुखी हूँ। और यहीं रहना भी चाहिये, क्योंकि वास्तव में इसी जगह पर तो मेरा अधिकार है।"

"क्या तुम कोकिला देवी के पास सुखी नहीं थीं?"

"हाँ थी, वहाँ की मैं कोई शिकायत नहीं कर रही हूँ। उनका बरताव मेरे साथ अच्छा था, पर वहाँ का जीवन नीरस था।"

बात करते करते कुछ उसका चेहरा ऐसा हो जाता था कि राजेन्द्र को अच्छा नहीं लगता था।

"देखो, बेटी, कपड़े, गहने, और भी चीज़ें, जो तुम्हें पसन्द हों, सब ख़रीद लो, दाम सब का मैं दूँगा। इसका तुम्हारे मासिक ख़र्च से कोई सम्बन्ध नहीं। मैं चाहता हूँ कि तुम अच्छे से अच्छे कपड़े पहिनो, गहने पहिनो। तुम चाहो तो इन बातों में कोकिला देवी की राय ले सकती हो।"

"उनकी राय ठीक न होगी। हाँ, बीस साल पहिले ज़रूर हो सकती थी। वह बुढ़िया सूसट आजकल के फ़ैशन के बारे में क्या जाने?"

सुन कर राजेन्द्र अवाक् रह गये।

"अच्छा तो जो ठीक समझना करना। हाँ, एक बात ख़ूब याद आई, मैं तो उसे भूल ही गया था। विमला भी यहीं रहेगी। जैसी चीज़ तुम अपने लिये ख़रीदना वैसी ही उसके लिये भी।"

कमला की नाक-भवें सिकुड़ गईं। क्षण भर चुप रह कर बोली—"पिता जी, और कुछ कहना है, तो शीघ्र कह डालिये, मुझे घुड़सवारी सीखनी है।"

राजेन्द्र ने केवल सिर हिला कर प्रकट कर दिया कि और कोई बात नहीं कहनी है। वह चली गई।

'यह तो मृणालिनी से ज़रा भी नहीं मिलती। न मालूम इस में यह गर्व तथा हठ कहाँ से आ गया! मृणालिनी का हृदय तो बड़ा ही विशाल था। इसका इतना संकीर्ण कैसे हो गया? मुझ में भी तो ये बातें नहीं हैं। वाणी में भी कुछ कठोरपन है।' यही सोचते सोचते वह खिड़की के पास खड़े रहे। उन्होंने कमलारानी को एक जानदार, मुहज़ोर घोड़े पर चढ़ते देखा, जिसको उसने सीधे-सादे घोड़े की अपेक्षा पसन्द किया था।

वास्तव में उनकी पुत्री स्वयं उन्हीं के लिये एक पहेली बन रही थी। राजेन्द्र ने बड़े ग़ौर से कमला को चढ़ने में मदद करते कोमल को देखा। बातें कर रहे थे, पर प्रेमियों की भाँति नहीं।

वह खड़े-खड़े यही देख रहे थे कि दरवाज़े पर किसी ने एक हल्की-सी थपकी दी।

"अन्दर आ जाओ!"

और उन्होंने आश्चर्य से देखा—दरवाज़े पर विमला खड़ी है—लजाई-सी सिकुड़ी-सी, आँखें नीचे किये।

विमला लजाती हुई बोली—"मैं इस तरह आ गई, क्षमा कीजिये। माँ ने मुझे सब बताया है। आप कितने उदार हैं! आप को धन्यवाद देने के लिये मैं उत्सुक हो उठी, इसीलिये आई हूँ।"

कितनी मधुर थी उसकी वाणी! राजेन्द्र के कानों में अमृत घोलने लगी, और जब वह चली गई, तब भी उसकी बातें उनके कानों में गूँजती रहीं।

ऐसा मुझे सोचना तो न चाहिये, पर क्या करूँ मैं ऐसा सोचने के लिये बाध्य हो गया हूँ, कितना अच्छा होता यदि कमलारानी इस लड़की के समान होती! विमला कितनी सीधी-सादी, सुन्दर, भोली-भाली है! इसका हृदय कितना कोमल तथा विशाल है! ऐसी स्त्रियाँ सुख देने के लिये पैदा होती हैं। ऐसी ही स्त्रियाँ वास्तव में लक्ष्मी-स्वरूपा होती हैं। जिसको विमला ऐसी पुत्री मिले वह धन्य है, और जिसको विमला ऐसी पत्नी मिले, उसका जीवन ही सफल है। यदि कमलारानी भी इसकी तरह हो जाय, तो मेरे भाग्य खुल जायँ। पर मुझे तो संशय होता है कि कमला के पास हृदय कहलाने वाली कोई वस्तु है भी या नहीं। वह तो एकदम हृदयहीन-सी लगती है। अच्छा मैं इसकी जाँच करूँगा।

और जाँच करने के लिये उन्होंने कमलारानी को अपने साथ-साथ घुड़सवारी करने को कहा। वह तैयार हो गई। दोनों साथ साथ चल दिये।

रास्ते में वह बोले—"कमलारानी! जानती हो मैं तुम्हें कहाँ ले चल रहा हूँ? उस जगह पर, जो तुम्हारे लिये अति पावन तीर्थ स्थान स्वरूप है।"

"मेरे लिये तो कोई भी स्थान पावन तथा तीर्थ स्थान नहीं हो सकता। मुझे तो तीर्थ स्थानों में कोई भी विश्वास नहीं।" और वह हँस दी।

उसकी हँसी और उसके कहने का ढंग दोनों ही राजेन्द्र को अधिक अप्रिय लगे।

"किसी और के लिये न हो पर तुम्हारे लिये तो यह स्थान पवित्र होना आवश्यक है। तुम उस जगह चल रही हो, जहाँ तुम्हारी माँ रहा करती थी।"

राजेन्द्र को निराशा हुई। वह कमलारानी में जो भाव देखना चाहते थे, न देख पाये। रास्ते भर फिर वह कुछ न बोले। निरन्तर उनके हृदय में यही प्रश्न उठता रहा कि क्या इसके हृदय है?

और उधर कमलारानी भी रास्ते भर सोचती रही—'न जाने पिताजी मुझे यहाँ क्यों ले जा रहे हैं, वे मुझसे क्या चाहते हैं?'

दरवाज़े पर घोड़ा खींचने समय राजेन्द्र की आँखें गीली हो गईं, उन्हें याद आ गई स्वरूप नगर की राजधानी की बातें।

"क्या मेरी माँ वास्तव में इसी मकान में रहती थी?" कमला की वाणी में कुछ घृणा-सी थी।

"हाँ।"

"यह तो बहुत छोटा सा मकान है। इसमें वह कैसे रहती रही होगी? *इस गन्दी जगह को तो मैं तीर्थ-स्थान नहीं मान सकती।"*

राजेन्द्र को बहुत निराशा हुई। यह कैसी लड़की है, जो अपनी माँ की जगह को तीर्थ-स्थान मानने से इन्कार करती है? दृढ़ निश्चय कर लिया कि अब इससे वह कभी भी इस प्रकार की बातें न करेंगे। तो भी मन में जाने क्या आया, पूछ बैठे—' बेटी, क्या तुम्हें अपनी माँ के बारे में जानने की कोई इच्छा नहीं?"

"नहीं, पिताजी! प्रथम तो मुझे उनकी याद भी नहीं, और फिर यह एक दुख भरी कहानी है, वह जितनी जल्दी भुला दी जाय, उतना ही अच्छा।"

क्या वास्तव में यह एकदम हृदयहीन है? सोचा, और उसे साथ ले वह बग़ीचे में गये, जहाँ गुलाब लहलहा रहे थे। कमला को दिखा कर बोले—"बेटी, इन गुलाबों को देखती हो, कितने सुन्दर हैं! इनको तुम्हारी माँ ने और मैं ने लगाया था। क्या तुम्हें पसन्द हैं?"

"मुझे ये पसन्द हैं, पर इनमें कोई विशेषता तो मुझे नज़र नहीं आती।"

राजेन्द्र से न रहा गया। कह उठे—"कमला, तुम में तो अपनी माँ के समान एक भी गुण नहीं है। कोई भावना क्या तुम्हारे हृदय में है ही नहीं?"

"अभी तो नहीं है, और फिर इन ज़रा ज़रा सी बातों के लिये बिलकुल भी नहीं!"

बेचारे राजेन्द्र को बड़ी निराशा हुई।

चुपचाप दोनों लौट पड़े।

'क्या इसके हृदय है ?'—उनके हृदय में विचार उठा, और उत्तर मिला—'नहीं !' और कमला के भी हृदय में विचार उठा, पिताजी का साथ देने के लिये विमला ही उपयुक्त रहेगी। इनके विचारों से तो उसी के विचार मिलते हैं। मेरे लिये तो कोमल सिंह ही उपयुक्त हैं।

इसीलिये जब फिर राजेन्द्र ने कमला से अपने साथ चलने को कहा, तो उसने अनिच्छा प्रगट की—बहाना कर दिया। पर राजेन्द्र वास्तविक कारण समझ गये थे।

अपनी पुत्री के आ जाने से राजेन्द्र खुश थे। सारा वातावरण ही बदल गया था। स्वयं उनकी दिन-चर्या में भी परिवर्तन हो गया था। उनकी पुत्री उनको भी अच्छी लगी थी। उस पर उनको गर्व भी था। वह सुशिक्षित तथा तेज़ थी, वाक्-पटु भी थी। किसी का चरित्र-चित्रण करने में तो अति कुशल थी। थोड़े से शब्दों में अधिक प्रगट कर देती थी।

उसका मज़ाक निर्दोष रहता, हाँ कभी-कभी कड़ुवा, चरपरा तथा कुछ सस्ता भी हो जाता।

इतना सब होते हुये भी हृदय में राजेन्द्र को सन्तोष न था। उनके विचारों के अनुसार उनकी पुत्री में एक बड़ी भारी कमी थी—स्नेह की, ममता की, प्रेम की!

फिर भी इस विचार को उन्होंने अपने हृदय में ही रखा। कमला तथा विमला दोनों के लिये तरह-तरह के उपहार देते रहे—उनकी एक-एक माँग को पूरा करते रहे। पर एक में कमी करते रहे। कमला नाच, गाने, तमाशे की शौक़ीन थी। इसी में राजेन्द्र ने कुछ कमी की, और यदि कोई ऐसा जलसा किया भी तो अधिकतर स्त्रियाँ ही आमन्त्रित कीं।

उनके इस कार्य का मतलब बहुत-से लोग समझ गये थे कि क्यों राजेन्द्र अभी नवयुवकों को नहीं बुलाते हैं। पर कोकिला देवी इसे समझ न पाईं और जब समझीं भी तो बड़ी देर में।

राजेन्द्र अभी तक पता न पा सके थे कि कोमल कमला रानी से प्रेम करता है या नहीं। पर इसका उन्हें विश्वास हो चला था कि कमला करने लगी है। और जब कमला प्रेम करने लग गई है, तो कोमल को भी करना होगा, क्योंकि कमला का प्रेम कोई मामूली प्रेम न होगा। वह आग के समान होगा, और उस आग के सामने कोमल नहीं ठहर पायेगा।

वास्तव में कमला कोमल से प्रेम करने लग गई थी। पर उनका प्रेम निर्मल प्रेम नहीं था। वह तो कोमल से उसके बाह्य गुणों के कारण प्रेम करने लग गई थी, आन्तरिक गुणों के कारण नहीं।

लेकिन उसने अपना प्रेम व्यक्त नहीं किया। वह गर्वीली थी। उसके गर्व ने यह स्वीकार नहीं किया। जब कोमल ने ही प्रेम व्यक्त नहीं किया, तो वह क्यों करे? वह हठी थी, इसलिये यह मानने को तैयार न थी कि कोमल उसके आगे कभी न झुकेगा। वह किसी के चरित्र का अनुमान लगाने में कुशल थी। पर कोमल के मनोभावों को जानने में वह सफल न हुई। कोमल उसके लिये पहेली सा बना रहा। वह इस पहेली को सुलझाने में लगी रही। एक दिन कुछ ऐसा ही अवसर आ गया; जब कोमल ने कहा—"कमलारानी, सुना है, तुम बहुत अच्छा गाती हो, एक गाना सुनाओ न आज!"

"कैसा गीत तुम पसन्द करते हो? वीर-रस का जिसको सुन कर खून फड़क उठे, या प्रेम रस का, या करुण-रस का, जिसको सुन कर तुम्हारा हृदय द्रवित हो जाय।"

"मुझे तो तुम्हारी इस अन्तिम बात पर संशय होता है।"

"ऐसा क्यों?"—ज़रा गम्भीर होकर कमला ने पूछा।

कोमल उत्तर में हँस दिया।

"इस उत्तर से मैं सन्तुष्ट नहीं हूँ। आप को बताना ही पड़ेगा।"

"किसी के दिल पर असर करने का गुण आप के स्वाभाव से परे है। किसी के हृदय को द्रवित करने के लिये एक द्रवित हृदय ही चाहिये।"

"तो आप के कहने का तात्पर्य यह है कि मेरा हृदय द्रवित नहीं हो सकता?"

कोमल सिंह की समझ में न आया कि क्या उत्तर दे। उसी समय कमरे में विमला आ गई। कोमल को जैसे अनायास ही सहायता मिल गई हो।

बोला—"विमला, मैं एक अजीब मुसीबत में फंस गया हूँ। मैं ने कमला से अपना एक विचार प्रगट किया, उस पर यह नाराज़ हो गई। तुम मेरी सहायता करो।"

विमला ने दोनों की बातें सुन कर निर्णय दिया—"कमला बहिन का हृदय द्रवित हो सकता है, पर किसी साधारण बात पर नहीं।"

कोमल सिंह के विपक्ष में निर्णय हुआ था, अतः उसने कमला से क्षमा माँग ली। कमला प्रसन्न हो गई।

कोमल बोला—"अब तो गाओ!"

कमला पियानो पर बैठ गई। कोमल सिंह अपलक दृष्टि से देखने लगा।

हाथी-दाँत के परदों पर पड़ती हुई कोमल, पतली अँगुलियों को, सुन्दर चेहरे को और धनुष सदृश भौंहों को। उसके हृदय में अनेक विचार आये, पर उनमें से प्रेम का एक भी नहीं था।

अब कमला ने गाना शुरू किया। उसने एक के बाद दूसरा ऐसा करुण-रस से ओत-प्रोत गीत गाया कि कोमल की आँखें सजल हो उठीं। उसने प्रेम के गीत गाये, उस अमर, अमिट, अनादि प्रेम के गीत गाये कि कोमल का हृदय मचल गया, और वह इस लोक को छोड़ कर स्वप्न-लोक में विचरने लग गया।

"मैं एक बार फिर क्षमा माँगता हूँ कमलारानी! आपके गीत अति सुन्दर तथा हृदयग्राही थे," गाना समाप्त होने पर कोमल ने कहा।

"आप को पसन्द आये?"

"बहुत ज्यादा।"

"मेरा सौभाग्य है।"—और कमलारानी मुस्करा पड़ी।

इस समय वह अति सुन्दर प्रतीत हो रही थी। गालों की लालिमा बढ़ गई थी, आँखें भी सजल थीं। और सर्वोपरि थी उसकी मुस्कान जो अति आकर्षक थी। कोमलसिंह के नयन उस पर स्थिर हो गये। अचानक उसके नयन विमला के नयनों से जा टकराये, उनमें कोई उलझन न था, पर था कुछ आश्चर्य तथा पीड़ा!

कोमलसिंह के नेत्र नीचे की ओर झुक गये। यदि इसका कारण कमला को मालूम पड़ जाता, तो अवश्य ही वह अपने नम्र प्रतिरोधी की हत्या करने तक में न चूकती। पर वह न जान पाई थी। वह अपने ही विचारों में निमग्न थी—'मैंने कोमल को खुश कर दिया है। मैं ने देखी है उसकी आँखों में एक विचित्र ज्योति! क्या मैं उनसे नहीं जीत सकूँगी?'

राजा राजेन्द्र प्रतापसिंह पुराने विचारों के न थे, और न वह आधुनिक सभ्यता के विरोधी ही थे। अतः उन्होंने सभी ऐसी बातें कमलारानी को सिखलाईं, जो आधुनिक काल में होती हैं। घुड़सवारी का तो उन्होंने विरोध किया ही नहीं था। इसके अतिरिक्त संगीत तथा नृत्य-विद्या भी उसको सिखलाई—और वह केवल भारतीय ही नहीं, वरन् पाश्चात्य भी। विमला तो कमला की बहिन के समान समझी जाती थी, अतः उसने भी सब सीखा।

फिर एक दिन उन्होंने एक बड़े जलसे तथा भोज का आयोजन किया।

अवसर ही ऐसा था। मनोहरपुर के जागीरदार तथा उनकी पत्नी आ रहे थे। और प्रान्त के गवर्नर भी सपत्नीक पधार रहे थे। इससे उत्तम अवसर क्या हो सकता था? तुरन्त ही विचार कार्य रूप में परिणत होने लगा। राजमहल सजाया जाने लगा। इष्ट मित्रों तथा सहयोगियों को निमन्त्रण भेज दिये गये।

गवर्नर साहब विदेशीय थे। अतः पाश्चात्य नृत्य का भी प्रबन्ध होने लगा। महल का सब से बड़ा कमरा ही इसके लिये उपयुक्त समझा गया। सभी लोग बड़ी उत्सुकता से उस दिन का इन्तजार करने लगे—कमला खास तौर पर! अन्त में केवल एक दिन बाकी रह गया। उस दिन कोमलसिंह ने विमला से कहा—"विमला तुम प्रथम नृत्य तो मुझे ही दिलाओगी!"

पाश्चात्य नृत्य भारतीय नृत्य से कुछ विभिन्न होता है। अधिकतर नृत्य जोड़े में किया जाता है, तथा कई जोड़े साथ साथ नृत्य करते हैं। एक उत्सव में सात या आठ नृत्य होते हैं, तथा प्रत्येक के बीच में कुछ आराम करने के लिये अवकाश।

विमला चुप रही। लजा गई। कपोल कुछ अधिक लाल हो गये। आँखें नीचे कर लीं।

"विमला, वैसे तो मुझे यह नृत्य अधिक पसन्द नहीं, पर यदि तुम स्वीकार करो तो ''

विमला कुछ पूछना चाहती थी। पर मुँह से कोई शब्द न कह सकी। केवल उसके नेत्र कुछ ऊपर उठे। कोमल ने भी आगे कुछ नहीं कहा। उसने विमला के नेत्रों में स्वीकृति पढ़ ली थी।

उसी दिन संध्या को, जब कोमल कमलारानी के साथ था, राजेन्द्र आ गये।

"कोमल, मैं तुम्हारी ही खोज में था। इस नृत्य समारोह का आरम्भ तुम्हीं को करना होगा, और वह भी कमलारानी के साथ।"

"यह क्यों पिताजी?"—कमलारानी ने पूछा।

"मेरी प्यारी बच्ची, शिष्टाचार के नाते यही उचित होता है। इसमें अपनी इच्छा से काम नहीं होता। तुम मेरी पुत्री हो, आज के समारोह की रानी। तुम्हारा तो प्रथम नृत्य में रहना आवश्यक है, और तुम्हारे साथ के लिये कोमल का।"

कोमलसिंह ने रुकते रुकते कहा—"पर मैं तो किसी दूसरे से वादा कर चुका हूँ।"

कमलारानी कुछ उदास हो गई। राजेन्द्र कुछ नाराज से हो गये। उनकी हार्दिक इच्छा थी कि संसार जान जाये कि ये दोनों एक दूसरे से प्रेम करते हैं।

बोले—"कोमल, मैं तुम को मजबूर नहीं करता। पर यह मेरी इच्छा है। क्या तुम मेरी इच्छा पूरी न करोगे? मेरा यह अनुरोध है। क्या मेरे अनुरोध को टाल दोगे? तुम से मुझको ऐसी आशा तो नहीं है।"

कोमल निरुत्तर हो गया। स्वीकृति दे दी। राजेन्द्र प्रसन्न हो कर चल दिये। पर कमला ने मुँह फेर लिया।

कोमल बोला—"कमलारानी, तुम नाराज़ हो गईं?"

"तुम्हारी बला से!"

कोमल ने कमला की आँखों में आँसू देखे। वह हृदय का भी कोमल था। वे आँसू न देखे गये।

"मुझे क्षमा कर दो कमला रानी!" और उसने पास में लगे एक फूल को तोड़ लिया—"लो, इसे ग्रहण करो!"

"उसी को जा कर दो, जिससे प्रथम नृत्य का वादा कर लिया था।"

कोमल चकित रह गया। कमलारानी की इस ईर्षा का तो कोई कारण न था। वे दोनों मित्र अवश्य थे, पर प्रेमी नहीं। कभी भी कोमल ने अपना प्रेम कमला पर व्यक्त नहीं किया था। फिर क्यों यह ईर्षा कर रही है?

कुछ रुक कर बोली—"क्या तुम वास्तव में क्षमा चाहते हो?"

"हाँ।"

"क्षमा कर सकती हूँ, पर एक शर्त पर। उस युवती का नाम बता दो।" अतिथियों में कई युवतियाँ भी थीं, इसी से कमला को नाम जानने की जिज्ञासा थी।

"नाम जान कर क्या करोगी?"

कमला के जी में आया कि कह दे—'इसलिये कि मैं उससे घृणा करने लगूँ।' पर उसने केवल यही कहा—"केवल उत्सुकतावश पूछ लिया।"

कोमल की ज़ुबान पर नाम था, और कहने ही जा रहा था, पर रुक गया। बोला—"क्षमा करो, कमला, ऐसा करना सज्जनता के विरुद्ध होगा।" कमला को यह सुनने की आशा न थी। वह नाराज़ हो गई। चल दी। कोमल ने कई आवाज़ें दीं, पर वह रुकी नहीं, न मुड़ कर ही देखा। सीधी जा कर कमरे में लेट गई। उसके पिता समझदार थे। समझ ही गये कि किससे उनकी बेटी लड़ कर आई है। उन्होंने कुछ नहीं कहा—न कमला से, न कोमल से। केवल उन्होंने धीरे से कुछ शब्द कहे—इतने धीरे से कि उनके अतिरिक्त और कोई न सुन सके, वे शायद ये थे—'प्रेमियों में लड़ाई प्रेम की पुनरावृत्ति के ही लिये हुआ करती है!'

कमला कोमल से प्रेम करती थी। और अपना मन दे कर सब प्रकार से व्यक्त भी किया करती थी। यदि कोमल पसन्द की, कमला ने वही पहिनी। यदि कोमल के मुँह से कमला ने वही कहने की कोशिश की। इसीलिये कमला ने कभी उससे कोमल से नाराज़ हो कर झगड़ा नहीं किया। इससे तो वह मैं गिर जायगी।

इधर कोमल ने भी सोचा—'कमला इस गृह की स्वामिनी है, की पुत्री है। राजाजी मुझे कितना चाहते हैं! उनकी पुत्री को नाराज़ मैंने कभी नहीं किया।'

दोनों के विचारों में एक ही बात थी, पर सुलह होने में देर लगी। कोमल का बर्ताव पहिले से अधिक मधुर था। कमला इतने प्रसन्न हो गई। कोमल का दिया हुआ पुष्प बालों में लगा लिया। वह धारा में निकल गई। चाँदनी छिटक रही थी, वह उसमें नहाने लगी।

"कमला बेटी, आज तो बड़ा प्रसन्न हो।"—अचानक कोकिला ने आ कर कहा। कमला चौंक गई।

"बेटी, मैं कई दिनों से तुम से कुछ कहने के लिये समय ढूँढ रही थी, ऐसा अवसर मिलता ही नहीं था। पहिले तो हम लोग घण्टों बातें किया करते थे, पर यहाँ आ कर तो एक क्षण भी नहीं मिलता।"

"मैं यहाँ आ कर बहुत प्रसन्न हूँ।"

"मुझे यह सुन कर हर्ष है—कमला, यह तो तुम जानती ही हो कि मैं तुम को अपनी बेटी की तरह पाला है, और अब भी अपनी ही बेटी समझती हूँ, इसीलिये तुम से कुछ बातें करना चाहती हूँ।"

"कोई आपत्ति तो न होगी?"—कमला ने कुछ हँस कर पूछा।

"नहीं, बेटी! एक बात बताओगी? सच सच बताना, क्या तुम कोमल को चाहती हो?"

कमला लजा गई, फिर पीली पड़ी, और फिर बड़े ही धीरे से कहा—"हाँ।"

"मेरी बच्ची, जब मैं दूसरों के हृदयों के विचार जान जाती हूँ, तो तुम्हारा क्यों न जान सकूँगी। फिर भी मैं ने पुष्टि के लिये तुम से पूछ लिया। मैं तुम्हें एक सलाह देती हूँ, एक चेतावनी देती हूँ, उससे प्रेम मत करना।"

कमला अब अपने को न रोक सकी। उसके गर्व और हठ ने ज़ोर किया,

उत्सव की रात्रि आ ही गयी। राजेन्द्र ने राजमहल को स्वर्ग बनाने में कोई कसर न रखी थी। एक तरफ मधुर वाद्य बज रहे थे। स्थान-स्थान से संगीतज्ञ भी बुलाये गये थे। वैसे तो सभी स्त्रियाँ, अवस्था का ध्यान छोड़ कर तितलियाँ बन कर फुदक रही थीं, पर इस स्वर्ग की रानी तो वास्तव में कमलारानी ही थी। सचे काम की नीली साड़ी और वैसा ही ब्लाउज़। बालों में फूल, दो नागिन सी लटें दोनों कन्धों पर अठखेलियाँ करती थीं। कानों में झिलमिलाते हुये ईयरिंग। दोनों भवों के तनिक ऊपर में एक लाल टीका। गले में माला की भेंट, एक जड़ाऊ जगमगाता हुआ हार। हाथ में एक फूलों का गुच्छा। उँगलियों में चकदमक करती हुई अँगूठियाँ। पैरों में ऊँची एड़ी की सैन्डल—सभी उस पर शोभायम न हो रहे थे। वह इस रात्रि में जितनी सुन्दर लग रही थी, वैसी कभी भी नहीं लगी थी। वह आज जितनी प्रसन्न थी, उतनी कदाचित् पहले कभी न हुई थी। और इसका कारण भी था—कोमल का आचरण उसके प्रति अति कोमल हो गया था। वह बेचारी उस कोमलता को प्रेम समझ बैठी थी।

कमला सुन्दरी थी, इसमें कोई सन्देह नहीं था, और अपनी सुन्दरता के जादू से अनभिज्ञ भी था। वह धनी थी, और धन का उसे मद भी था। वह न रहीली थी, पर वह यह सब प्रेम के आगे तुच्छ समझ बैठी थी, इसमें भी कोई सन्देह न था। यह वही कमला थी, जो प्रेम और प्रेमियों पर हँसा करती थी। जो धन के आगे संसार की अन्य वस्तुओं को हेय समझती थी, उसी कमला के मन में ये विचार कि मैं कोमल से प्रेम करती हूँ। उसको भी मुझसे प्रेम करना पड़ेगा। मेरे प्रेम की विजय अवश्य होगी। मेरा प्रेम कोई साधारण प्रेम नहीं है, पानी की तरह निर्मल नहीं है, आग के समान है। आग के सामने कोई ठहर सकता है? यदि किसीने बीच में बाधा डालने का साहस किया, तो भस्म हो जायगा, चाहे वह कोई हो क्यों न हो!...

नृत्य के समारोह का समय आ पहुँचा था। प्रथम नृत्य के लिये कोमल कमला के पास गया।

कमला बोली—"कोमल तुम इन फूलों को पहचानते हो?"

"इसे पहचानता तो हूँ, पर डर है कि कहीं तुम्हें झगड़े की याद न दिलाये।"

"नहीं, यह तो मुझे फिर कभी भी झगड़ा न करने की शिक्षा देंगे।" इन दोनों की जोड़ी को देख कर सभी यह कह रहे थे कि कैसी अनुपम जोड़ी है!

"मुझे क्या मालूम।"—कोकिला देवी ने इस ढंग से उत्तर दिया, जैसे विमला से उनका कोई भी सम्बन्ध नहीं है।

"उसके लिये परेशान क्यों हो रहे हो?" कमला ने कहा—"वह भी दिल बहला रही होगी।"

परन्तु कोमल को विश्वास नहीं हुआ। क्योंकि जब उसने विमला से कहा था कि राजेन्द्र इस बात पर ज़ोर दे रहे हैं कि प्रथम नृत्य में वह कमला के साथ रहे, तो वह उदास हो गई थी, और वह उदासी कोमल से छिपी न रह सकी थी। बेचारा कोमल विवश था। वह उस उदासी को दूर करने के लिये सब-कुछ करने के लिये तैयार था, क्योंकि वह विमला से प्रेम करने लगा था। वह उसके प्रेम में डूब गया था। वह सब-कुछ, यहाँ तक कि अपने प्राण तक, उसके प्रेम के लिये उत्सर्ग करने को तैयार था।

प्रथम प्रेम पवित्र, सलिल की भाँति निर्मल होता है। कोमल का यह प्रथम प्रेम था, और उसकी समझ में अन्तिम भी।

और शायद यही कारण था कि कमलारानी-जैसी सुन्दरता की मूर्ति के सम्मुख होते हुये भी उसने विमला के लिये पूछा था, और अब भी उसीकी तलाश में दृष्टि दौड़ा रहा था।

कमला का अब पाँचवा नृत्य उसके साथ था, इसलिये वह चली गई, पर वह वहीं खड़ा अपने कार्य में रत रहा। अन्त में उसे सफलता [illegible]।
मनोहरपुर की [illegible]
लग रही थी [illegible]
के अतिरिक्त [illegible] एक [illegible] भी थीं। उनका भी यही ख्याल था कि विमला कमला से भी अधिक सुन्दर लग रही है। एक हल्की, बसन्ती रंग की साड़ी और वैसा ही ब्लाउज़। कानों में सादे ईयरिंग तथा गले में केवल एक लाकेट। काले-काले केशों में सफ़ेद पुष्प थे। हाथ में भी सफ़ेद पुष्पों का गुच्छा। भोला भाला मुखड़ा, नम्रता की मूर्ति!

कोमल उसी तरफ़ अग्रसर हुआ, पर बीच में राजेन्द्र ने उसे रोक लिया, तथा कुछ मेहमानों के बारे में बातें करने लगे। जब उनसे पीछा छूटा, तो फिर वह उसी तरफ़ बढ़ा, पर अब तो आशीर्वादानी अकेली थीं।

दूसरे नृत्य के लिये वाद्य बजने आरम्भ हो गये थे, और इस नृत्य के लिये विमला ने उससे वायदा भी कर लिया था।

विमला कहाँ चली गई? वह तलाश करने लगा।

अगर कोमल को विमला के मनोभावों का पता चल जाता, तो उसे आश्चर्य

न होता। अगर विमला के हृदय में उठती हुई नई पीड़ा का अनुभव हो जाता, तो भी आश्चर्य न होता।

विमला ने कोमल और कमला के बारे में लोगों की रायें सुनी थीं। उसने यह भी सुना था कि इन दोनों की कितनी अनुपम जोड़ी रहेगी। पर न मालूम क्यों, ये शब्द उसके हृदय में तीर की तरह चुभे थे। वह स्वयं से पूछती, कि ये शब्द सुन कर क्यों उसे पीड़ा हो रही है?

पर उसे पीड़ा हो रही थी, और वह भी असह्य! इसी से वह उस जलसे से भाग आई। नृत्य-घर के समीप ही एक छोटा-सा तहख़ाना था। उसमें एक लैम्प जल रहा था; हल्का प्रकाश हो रहा था। विमला ने उसे ही उपयुक्त समझा, और वहीं भाग आई, और एक कुर्सी पर बैठ गई।

लोग कहते हैं कि एकान्त स्थान में रोने से पीड़ा का भार हल्का पड़ जाता है। उसने जूते की चरचराहट सुनी, और कोमल को आते देखा, तो सिर नीचे कर लिया।

"विमला, तुम यहाँ क्यों आई?"—कोमल ने आते ही पूछा।

"मैं अकेले रहना चाहती थी।"

"तुम क्यों उदास हो? अरे, तुम रो रही हो! क्या कारण है?" लैम्प के हल्के प्रकाश में गर्म आँसुओं से भीगा हुआ वह सुन्दर चेहरा और भी सुन्दर लग रहा था।

विमला आँसू पोंछ कर बोली—"कारण सुन कर क्या कीजियेगा?"

"इसलिये कि...विमला...इसलिये कि...मैं तुम से प्रेम करता हूँ। मैं सच कह रहा हूँ, विमला! जिस समय से मैं ने तुम्हें देखा उसी क्षण से तुम्हें प्रेम करने लग गया हूँ, और मरते समय तक प्रेम करता रहूँगा!"

विमला चुप हो गई।

"तुम नाराज़ तो नहीं हो गईं? मेरी धृष्टता को क्षमा करना, क्या तुम मेरा प्रेम स्वीकार न करोगी? कह दो हाँ...कहो हाँ, बोलो, यदि नहीं कहोगी, तो मेरे समान दुखी तुम्हें कोई भी न दिखाई देगा। कहो हाँ!"

इसने धीरे से 'हाँ' निकला, जिसे एक प्रेमी ही सुन सकता था।

"ओह, मैं कितना ख़ुश हूँ, विमला, मेरी हृदयेश्वरी! विमलारानी, मैं इस क़दर बहुत ख़ुश हूँ। आज की रात, मुझे जीवन भर याद रहेगी। यह क्षण मेरे जीवन का सब से बड़ा मुबारक पल है!"

और इसने काँपते हाथों से विमला का हाथ पकड़ लिया। विमला काँप उठी। कोमल भी काँप उठा। दोनों के लिये नवीन अनुभव था। हृदय तेज़ी से

"मुझे क्या मालूम।"—कोकिला देवी ने इस ढंग से उत्तर दिया, जैसे विमला से उनका कोई भी सम्बन्ध नहीं है।

"उसके लिये परेशान क्यों हो रहे हो?" कमला ने कहा—"वह भी दिल बहला रही होगी।"

परन्तु कोमल को विश्वास नहीं हुआ। क्योंकि जब उसने विमला से कहा था कि राजेन्द्र इस बात पर ज़ोर दे रहे हैं कि प्रथम नृत्य में वह कमला के साथ रहे, तो वह उदास हो गई थी, और वह उदासी कोमल से छिपी न रह सकी थी। बेचारा कोमल विवश था। वह उस उदासी को दूर करने के लिये सब कुछ करने के लिये तैयार था, क्योंकि वह विमला से प्रेम करने लगा था। वह उसके प्रेम में डूब गया था। वह सब कुछ, यहाँ तक कि अपने प्राण तक, उसके प्रेम के लिये उत्सर्ग करने को तैयार था।

प्रथम प्रेम पवित्र, सलिल की भाँति निर्मल होता है। कोमल का यह प्रथम प्रेम था, और उसकी समझ में अन्तिम भी।

और शायद यही कारण था कि कमलारानी जैसी सुन्दरता की मूर्ति के सम्मुख होते हुये भी उसने विमला के लिये पूछा था, और अब भी उसीकी तलाश में दृष्टि दौड़ा रहा था।

कमला का अब पाँचवा नृत्य उसके साथ था, इसलिये वह चली गई, पर वह वहीं खड़ा अपने कार्य में रत रहा। अन्त में उसे सफलता मिल ही गई। मनोहरपुर की जागीरदारनी के पास विमला खड़ी दिखाई दी। कितनी सुन्दर लग रही थी वह! कम-से-कम कोमल को तो यह लग ही रही थी। पर कोमल के अतिरिक्त और भी कई दर्शक थे, जिनमें एक जागीरदारिनी भी थीं। उनका भी यही ख़याल था कि विमला कमला से भी अधिक सुन्दर लग रही है। एक हल्की, बसन्ती रंग की साड़ी और वैसा ही ब्लाउज़। कानों में लाइे इयरिंग तथा गले में केवल एक लाकेट। काले-काले केशों में सफ़ेद पुष्प थे। हाथ में भी सफ़ेद पुष्पों का गुच्छा। भोला भाला मुखड़ा, सरलता की मूर्ति!

कोमल उसी तरफ़ अग्रसर हुआ, पर बीच में राजेन्द्र ने उसे रोक लिया, तथा कुछ मेहमानों के बारे में बातें करने लगे। जब उनसे पीछा छूटा, तो फिर वह उसी तरफ़ बढ़ा, पर अब तो जागीरदारनी अकेली थीं।

दूसरे नृत्य के लिये वाद्य बजने प्रारम्भ हो गये थे, और इस नृत्य के लिये विमला ने उससे वायदा भी कर लिया था।

विमला कहाँ चली गई? वह तलाश करने लगा।

अगर कोमल को विमला के मनोभावों का पता चल जाता, तो उसे आश्चर्य

यदि इस समय कोई उसकी मुद्रा देखता, तो अवश्य कहता कि यह जो कुछ कह रही है वह पूरा भी करेगी।

ब्याह को हुये तीन सप्ताह हो गये थे, पर अभी तक विमला की भेंट गुप्त ही रही। इस बीच में कई दफ़े कोमल ने उसे प्रगट करने की इच्छा की, विमला से आज्ञा माँगी, पर प्रत्येक समय विमला ने असहमति ज़ाहिर की।

"कोमल, जब तक यह भेद गुप्त रहे तभी तक अच्छा है। न मालूम क्यों मेरा हृदय यही कह रहा है कि जब तक हमारा प्रेम गुप्त है, तभी तक सुरक्षित है।"

"ऐसा विचार करने का कारण?"

"कारण नहीं बता सकती, पर यह विचार हर समय मेरे हृदय में रहता है—दिन-रात सोते-जागते, उठते-बैठते, बस एक यही विचार मेरे हृदय को मथे डालता है।"

"इस विचार को छोड़ो। किसी को क्या, जो इसमें बाधा डाले। चाचाजी और तुम्हारी माँ हम दोनों को इतना प्यार करते हैं कि हमारे सुख में बाधा डालना पसन्द न करेंगे।"

पर विमला न मानती थी। वह अपनी हठ पर अड़ी ही रही, उसके हृदय से यह विचार दूर नहीं होता था, और वह इसी कारण उदास रहा करती थी।

और इसी कारण से उन दोनों का प्रेम गुप्त ही रहा। और इसी कारण से कदाचित् कमला को, सोचने का अवसर मिला कि क्यों कोमल इतना फटा-फटा-सा रहता है? क्यों उसकी सुन्दरता का असर उस पर नहीं होता है? उसने तो अपनी समझ से कोई कसर उठा नहीं रक्खी थी। वह तो हर समय [illegible] चित्र खींच खींच कर प्रदर्शित करती थी। हर समय उसीके साथ घूमने जाने की ज़िद किया करती थी। ऐसे-ऐसे प्रेम से सराबोर गाने सुनाती थी, जिसे सुन कर पत्थर भी पसीज उठे।

"कोमल!" एक दिन वह कह ही बैठी, जब कि वे दोनों एक पेड़ के नीचे बैठे थे। तीसरे पहर का समय था, धूप सुहावनी लग रही थी, एक दूसरे पेड़ के नीचे राजेन्द्र और विमला भी बैठे थे, और कोकिला देवी एक तरफ़ दूर पर बैठी एक किताब पढ़ रही थीं। "कोमल, तुम्हारी आवाज़ बड़ी सुरीली है। और जब तुम प्रेम के गीत गाते हो, तो यह लगता है कि तुम किसी से प्रेम करने लगे हो।"

कोमल चुप रहा।

"तुम किस तरह की स्त्री से प्रेम करते हो?"

धड़क रहे थे। धमनियों में रक्त तेज़ी से बह रहा था। श्वासें शीघ्रता से आ-जा रही थीं।

धड़कते हुये हृदय एक-दूसरे से मिल गये।...

"पर कोमल, क्या हमारा प्रेम करना उचित है?"

"यह विचार क्यों उठा? अनुचित तो नहीं, अति उचित है। तुम ने यह सोचा क्यों?"

"तुम हँसोगे, हँसोगे तो नहीं? लोगों का विचार है कि तुम्हारा और कमला का..."

"कहने दो लोगों को।..."

"चाचाजी की भी शायद यही इच्छा है।" विमला राजेन्द्र को चाचा कहा करती थी।

"नहीं, उनकी कोई ऐसी इच्छा नहीं है। जहाँ तक मेरा ख्याल है, और यदि हो भी, तो मेरा तो नहीं है। और न शायद कमला ही का है। और फिर मैं उससे प्रेम भी नहीं करता, फिर बिना प्रेम के विवाह...,अच्छा मैं आज ही जा कर चाचाजी को सब बात सुनाता हूँ।"

"अभी नहीं, कोमल, कुछ दिन ठहर जाओ," विमला ने लाड़ेट से ले,जते हुये कहा।

"जैसी तुम्हारी इच्छा।"

'मेरी समझ में नहीं आता कि क्यों वह मेरी परवाह नहीं करता? क्यों वह मुझे नहीं चाहता? पर वह चाहेगा! वह परवाह करेगा!' कमला ने सोचा—'उसे प्रेम करना पड़ेगा। यदि आग के सामने कोई रुकावट डाले, तो आग क्या करती है? जला देती है, भस्म कर देती है, विनाश कर देती है। वही मैं भी करूँगी। जो कोई मेरे और कोमल के बीच में आयेगा, उसका विनाश कर दूँगी, उसके टुकड़े-टुकड़े कर डालूँगी, जैसे मैं इसके करती हूँ।' और उसने हाथ से फूल नोच-नोच कर फेंक दिया।

उसका चेहरा इस समय तमतमा उठा था।

'विनाश करने में, अपने मार्ग की रुकावटों को दूर करने में मुझे तनिक भी दया नहीं होगी। मैं अपने हृदय को कठोर बना लूँगी पत्थर का कर लूँगी, पर रुकावट को जड़ से उखाड़ फेंकूँगी।' कमला मन ही मन कहती गई।

राज्य-परिषद् का अधिवेशन होने वाला था। इस अवसर पर सभी सदस्य अपने इष्ट-मित्रों और बन्धु-बान्धवों-सहित तथा आमन्त्रित राजा, रायसाहब, जागीरदार, ताल्लुकेदार आदि पधारा करते थे।

राजा राजेन्द्र ही इस अधिवेशन के सभापति मनोनीत हुये थे। उन्होंने सोचा कि इस अवसर पर कमला, विमला और कोकिला देवी सभी साथ चलें। कोकिला देवी ने कुछ बहाने भी बनाये, चाहा कि वह और विमला न जायँ, पर राजेन्द्र के आगे कुछ न चली, और उन दोनों को भी जाना पड़ा।

कोमल कुछ समय पहिले ही चला गया था। उसको कुछ घर पर काम था। और राजेन्द्र ने यही उससे कह दिया था कि वह भी अपने पिता के साथ वहाँ पहुँच जाय, तथा दोनों उनके ही अतिथि बन कर रहें। राजेन्द्र जानते थे कि इस अधिवेशन पर सभी प्रकार के मनुष्य होंगे—बूढ़े, नवयुवक, बालक और वह इस कारण से चाहते थे कि कमला और कोमल अधिकतर साथ-साथ रहें।

इन दोनों लड़कियों ने तो वहाँ हलचल-सी मचा दी। जिसको देखो वही उनकी सुन्दरता का गीत गाता था। नवयुवक राजा, राजकुमार, जागीरदार, सभी एक तरफ़ से इन दोनों के प्रेम प्राप्त करने के लिये होड़ लगाने लगे। धीरे-धीरे और सब तो निरुत्साह हो गये, पर स्वरूप नगर के राजकुमार ने आशा न हारी। वह अपनी धुन में लगा रहा। वह कमला के प्रेम में पागल हो गया था।

स्वरूप नगर का राजकुमार उत्तम स्वरूपवान्, धनवान, समृद्धिशाली था। फिर भी जाने क्यों राजा राजेन्द्र प्रताप उससे कुछ उदासीन थे, यही लोगों को चकित करने वाली बात थी। स्वयं उत्तम को भी इसी बात पर आश्चर्य था कि क्यों राजा राजेन्द्र प्रताप उससे इतने खिंचे-खिंचे-से रहते हैं। सभ्याचार के नाते उसकी आवभगत करते हैं, पर व्यवहार में कुछ शुष्कता रहती है। और इस बात को देख कर और भी आश्चर्य था कि कमला भी अपने पिता की तरह खिंची रहती थी।

उत्तम और कोमल एक दूसरे के दोस्त थे। कोमल अधिकतर कमला के साथ रहता, पर उत्तम को कोमल के किसी भी कार्य से यह पता न लगा कि कोमल कमला से प्रेम करता है। फिर क्यों कमला उसकी तरफ़ से उदासीन है? उसके साथ घूमने चली जाती, बातें करती है, पर बेमन-सी। परन्तु जब कभी कोमल साथ होता है, तो उत्तम से खुल कर बातें कर लेती है, हँस भी लेती, पर जब कभी अकेली होती है, व्यवहार सर्वथा भिन्न होता है।

"नम्र हो, पर शरा हठी, सुशील हो, उच्च विचारवाली हो, हृदय की विशाल हो, आत्मा की पवित्र हो, स्वार्थी न हो। मेरे प्रेम का उसी मात्रा में प्रत्युत्तर दे—सारांश यह कि वह देवी हो।"

क्या तुमको कोई ऐसी मिल गई है ?" उत्तर सुनने के लिये वह व्यग्र हो उठी। पर कोमल ने कोई उत्तर न दिया। उनकी आँखें विमला पर लगी थीं।

"क्या तुमको कोई मिल गई है ?" कमला ने प्रश्न दोहराया।

"हाँ !"छोटा सा, सस्मित उत्तर मिला।

कमला थोड़ी देर चुप रही, फिर बोली—"उसका नाम तो मुझे न पूछना चाहिये।"

"हाँ, किसी दिन मालूम हो जायगा।"

कमला के ध्यान में विमला न आई थी। उसने सोचा यह मुझे प्रेम करता है, मुझमें सब चीजें हैं। किसी न किसी दिन वह स्वयं प्रेम व्यक्त करेगा। और उसका चेहरा खिल उठा। उधर कोमल ने कमला के खिले चेहरे को देखा और सोचा—विमला कितनी ग़लती पर थी। यह सुन कर कि मैं ने किसी से प्रेम करना शुरू कर दिया है, कमला कितनी दुखी हुई है!

और इसी तरह एक दूसरे के भावों को वे ग़लत समझते रहे, और इसी तरह प्रत्येक छोटी से छोटी घटना ग़लतफ़हमी को बढ़ाती गई।

कोमल उठ कर राजेन्द्र के पास चला गया। कमला को अकेली देख विमला उसके पास चली आई। विमला ने कमला को अति प्रसन्न देखा।

"कमला,क्या ! तुम बहुत खुश दिखाई पड़ रही हो !"

"हाँ, पगली ! मैं ने अभी एक ऐसी ही बात सुनी है जो मुझे जीवन भर आनन्द दायक होगी।"

विमला स्तब्ध होगई। कमला झूठ नहीं कह रही है। तब ! क्या इसे कोई प्रेम-पत्र मिला है ? क्या कोमल ने किसी का सन्देशा दिया है ? यही होगा। पर क्यों कोमल ने उससे कुछ नहीं कहा ?

"तुम अंतिम पर्यन्त आनन्दित रहो, कमला बहिन ! तुम जैसी सुन्दर तथा उच्च आत्मायें दुख उठाने के लिये नहीं बनाई गईं"

"और तुम विमला ?"

"न मैं खूबसूरत हूँ, और न उच्च।"

स्वीकार न किया और अपने नम्र, विनीत, लजीले स्वभाव से उनको प्रभावित कर दिया।

कोकिला देवी ने भी विमला को समझाया, क्योंकि वह भी विमला की इच्छा के विरुद्ध उसकी शादी नहीं करना चाहती थीं। उन्होंने उसे अपने भरसक समझाया, पर विमला अपने निश्चय से न डिगी। कोकिला देवी ने इस अस्वीकृति का कारण नहीं पूछा; क्योंकि वह जानती थीं कि विमला कोमल से प्रेम करती है, और यह भी जानती थीं कि इस प्रेम का फल अनिष्टकारी होगा।...

अधिवेशन समाप्त हो गया। सब लोग अपने-अपने घर चलने को तैयार हो गये। मनोहरपुर के जागीरदार हठ पकड़ गये कि सब लोग उनके यहाँ चलें, और राजेन्द्र का आग्रह था कि सब लोग उनके यहाँ चलें। अन्त में सुलह इस बात पर हो गई कि सब लोग पहले तो जागीरदार साहब के यहाँ चलें, और फिर दो-तीन दिन वहाँ ठहर कर सब सब लोग राजेन्द्र के यहाँ चलेंगे।

परन्तु कोमल ने मनोहरपुर जाने से विवशता प्रगट की। उसके पिताजी पहले ही चल दिये थे, अतः उसने आवश्यक कार्य का बहाना बना दिया। विमला से उसने साफ़-साफ़ कह दिया था यदि वह साथ चलेगा, तो अपने गुप्त रहस्य को प्रगट किये बिना उसे चैन न आयेगा। विमला ने उससे कुछ दिन और ठहर जाने की प्रार्थना की, और कहा कि जब वह उनके यहाँ आयेगा तभी इस पर विचार करेंगे।

राजेन्द्र को कोमल के साथ न चलने पर आश्चर्य हुआ। अभी तक उन्होंने उसके साथ कमला की शादी के बारे में आशा नहीं छोड़ी थी। कोमल उत्तम को अपने साथ ले गया था। उत्तम को स्वयं तो कोमल के साथ जाना बुरा लगा, पर किसी अन्य को नहीं। पर वह कोमल से मना भी नहीं कर सकता था, क्योंकि वह उसका अंतरंग मित्र था। उत्तम को यही सन्तोष था कि तीन-चार दिन बाद पुनः कमला के दर्शन होंगे।

मनोहरपुर में इन लोगों के लिये आमोद-प्रमोद के पर्याप्त साधन थे। पर कमला को कुछ भी अच्छा न लगा। उसे कोमल का न होना खल रहा था। कमला के लिये कोमल ही सब-कुछ था। कोमल के साथ आनन्द, आमोद-प्रमोद सभी थे। अब कोमल ही नहीं तो ये भी नहीं। वह यह चाहती थी कि जितनी जल्दी हो, अपने घर पहुँच जाय, क्योंकि कोमल ने वहीं आने का वादा किया था।

उत्तम तो भी निराश न हुआ, हृदय न हारा, वह अपनी धुन में लगा रहा, और अन्त में एक दिन जब कमला उसके साथ घूमने गई, तो उसने अपना हृदय चीर कर रख दिया, परन्तु आश्चर्य है कि कमला पर कोई भी असर न हुआ, उसने स्वरूप नगर की रानी बनने से साफ़ इन्कार कर दिया।

उत्तम हतोत्साह हो गया, पर आशा तो भी न हारी। मन में कहता—'कदाचित् तुम मुझे अपने योग्य नहीं समझतीं, कमला, पर आशा नहीं छोड़ूँगा। अपने को तुम्हारे योग्य बनाने की चेष्टा करूँगा। या तो सफलता मिलेगी या मृत्यु!'

कमला के मन में कई बार आया कि कह दे कि तुम्हारी चेष्टा सर्वथा निरर्थक होगी, क्योंकि वह किसी दूसरे से प्रेम करती है। पर उसने यह कहा नहीं। कहे भी कैसे जब कि उसका प्रेम अभी तक स्वीकृत नहीं हुआ था।

और उधर स्वीकृति पाने के लिये कमला ने चेष्टायें कीं। उत्तम से कोमल की उपस्थिति में हँस हँस कर बातें करके कोमल के मन में ईर्षा के भाव पैदा करना चाहा। पर उस पर तो कोई भी असर न हुआ। उल्टा खुश होता था। जब कभी देखता कि उत्तम और कमला किसी कमरे में बैठे हैं, जान-बूझ कर न जाता। कमला सोचती—'कोमल कदाचित् चाहता है कि मैं उत्तम से प्रेम करने लगूँ। नहीं, यह नहीं हो सकता। कदाचित् वह मेरी परीक्षा ले रहा है।' पर कोमल के भावों को लक्ष्य कर कमला के आश्चर्य ही आश्चर्य होता था।

और भी एक आश्चर्य की बात थी—कमला अपने प्रति द्वन्द्वी को खोज निकालने में सर्वदा चौकन्ना रहती थी, पर खोज नहीं पाती थी। एक से बढ़ कर एक सुन्दरियों का जमाव था, पर कोमल को किसी की भी तरफ़ आकर्षित होने नहीं देखा। विमला उसकी प्रतिद्वन्द्वी हो सकती है—इसका उसे स्वप्न में भी अनुमान न था।

'वह केवल मेरी परीक्षा कर रहा है, और कोई बात नहीं।'—यही सोच लेती। यही उसके विचारों का फल निकलता।

जो प्रेमी लोग कमला की तरफ़ से निरुत्साह हो गये थे वे सब विमला की तरफ़ झुके। विमला भी कमला से कम न निकली। एक को छोड़ कर सभी मैदान छोड़ गये, वह था मनोहरपुर के जागीरदार का सब से छोटा पुत्र—मनोरमा का सब से छोटा भाई—राजेन्द्र का सब से छोटा साला। नाम था उसका मनोहर।

राजेन्द्र को भी विमला के लिये मनोहर से बढ़ कर कोई दूसरा पति नहीं दिखाई दिया। उन्होंने विमला से इस विषय पर बात चीत की, पर विमला ने

नित्य की तरह थक कर कमला एक आरामकुर्सी पर लेटी थी। और विमला को एक तरफ़ बातें करते देखा। 'परमात्मा करे, ा से प्रेम करने लग जाये',—उसने सोचा। पर वास्तव में उन बातें हो रही थीं यदि वह सुन पाती! उत्तम विमला से अपनी कह रहा था। कोमल से तो प्रार्थना कर ही चुका था। अब विमला कर रहा था।

ला ने दूसरी तरफ़ देखा—कुछ लोग बैडमिन्टन खेल रहे थे। कोमल था, पर उनकी निगाहें इसी तरफ़ थीं।

नों की निगाहें मिलीं। वह उठ कर आया, और बोला—"कमला, मैं एक बात कहना चाहता हूँ।"

"कहिये!"

"यहाँ नहीं, बग़ीचे में चलो। वह बात ऐसी नहीं है, जिसे कोई और ।"

कमला चुप बैठी रही।

कोमल ने कहा—"अच्छा अगर नहीं चलना चाहती तो न सही, मैं फिर ह दूँगा।"

"नहीं, नहीं, चलो!"—हँस कर बोली।

वह मन-ही-मन प्रसन्न हो रही थी। एकान्त स्थान प्रेम की बातें करने के लिये ही उपयुक्त समझा जाता है।

बगीचे में पहुँच कर दोनों एक जगह बैठ गये। कोमल ने कहना शुरू किया—"कमला, हम लोगों ने कितना समय साथ-साथ बिताया है! हम लोगों के हृदय में एक-दूसरे के लिये स्थान है।"

"हाँ।"

"मैं तुम्हें सुखी देखना चाहता हूँ। इसलिये, चाहता हूँ कि तुम मेरी बात मान लो। इसको मज़ाक मत समझना। कमला, तुम और लड़कियों से भिन्न हो, अधिक सुन्दर हो। यदि आज्ञा हो तो कहूँ?"

"कहो!" कमला ने संक्षिप्त-सा उत्तर दिया, पर दिल पुकार-पुकार कर कह रहा था—'शीघ्र कहो—'कमला, मैं तुम्हें प्यार करता हूँ!'

"तुम शादी के योग्य हो गई। मैं तुम से इसी विषय पर कुछ कहना चाहता हूँ। उत्तम तुम से इतना प्रेम करता है, तुम क्यों उसकी तरफ़ से उदासीन हो?"

उसे भ्रम हुआ कि कमला का चेहरा सफ़ेद पड़ गया है, पर यह केवल भ्रम

निश्चय के अनुसार सब लोग मनोहरपुर से राजेन्द्र के यहाँ पहुँच गये। पर कमला घर पहुँच कर भी खुश न थी। कोमल के बिना उसे दिन युग के समान मालूम पड़ रहे थे। वह बाग़ में, एकान्त में, एकाकी बैठी हुई कोई गीत गुनगुना रही थी कि उसकी तल्लीनता में डाकिये ने आ कर बाधा पहुँचाई। अनमनी-सी हो कर कमला ने पत्र ले लिया। और बिना देखे एक तरफ़ रख दिया। पर फिर वह पत्र कहाँ से आया है, किसका है, यह जानने का लोभ संवरण न कर सकी। लिफ़ाफ़े को उलट कर देखा। अरे, कोमल ने भेजा है! पिताजी के लिये कुछ-न-कुछ सुखद समाचार अवश्य होगा। और वह भागी भागी गई, पिता को पत्र देने के लिये। और जब पिता ने पत्र पढ़ा, तो उनका चेहरा खिल उठा। उनके खिले हुये चेहरे को देख कर सभी खुश हो गये। और जब उन्होंने यह बताया कि कोमल आज आठ बजे रात्रि की गाड़ी से उत्तम के साथ आ जायगा, तो कमला के हर्ष का पारावार न रहा। वह सोचने लगी—'कोमल इतनी जल्दी क्यों आ रहा है, उसीके लिये! विरह में ही प्रेम का स्वाद मालूम होता है। बिछुड़ कर ही मिलन का आनन्द आता है। पर यह उत्तम फिर आ रहा है! क्या ही अच्छा हो यदि विमला उसके गले मढ़ जाय, कम से कम मेरा तो पीछा छूटे!' विचारों में कमला इतनी मग्न थी कि उसने यह नहीं देख पाया कि विमला का चेहरा पीला पड़ता जा रहा था। प्रेम के गुप्त भेद के खुलने का समय निकट आता जा रहा था। इसीसे विमला भय के मारे पीली पड़ी जा रही थी।

धीरे-धीरे सन्ध्या आ पहुँची।

आज कमला ने अपने को ख़ूब सजाया था। माली को ख़ास तौर पर [illegible] आज [illegible] दूसरा [illegible] 'मख मे [illegible]

माली बेचारे को लाल गुलाब लाने पड़े। और कमला ने उन्हें बालों में सजाया, हाथ में भी एक गुच्छा ले लिया।

पर जब कोमलसिंह आया, तो उसने उन लाल गुलाबों की तरफ़ ध्यान तक न दिया। वह सब झगड़े को भूल चुका था।

कोमल को आये दो दिन हो गये थे। ये दो दिन बड़ी अच्छी तरह से कटे थे। आमोद-प्रमोद के सभी साधन थे। कभी घुड़सवारी होती, तो कभी टेनिस खेली जाती। कभी नृत्य होता, तो कभी संगीत समाज जुड़ता।

बेचारे चाचाजी भी उठ कर अपने कमरे की तरफ़ चल दिये। और जब कमरे के दरवाज़े अन्दर से लगा लिये गये, तब उन्होंने पूछा—"बेटा, क्या कहना चाहते हो ?"

पर कोमल का साहस न पड़ा। वह चुपचाप हाथी-दाँत के बने हुये एक क़लम से खेलने लगा। उसकी उँगुलियाँ काँप रही थीं।

"बेटा, शर्माओ नहीं, साफ़-साफ़ कह दो। तुम जानते हो कि मैं तुम्हारी प्रत्येक इच्छा को पूर्ण करने के लिये तैयार हूँ।"

"चाचाजी ! मैं आप की अनुमति चाहता हूँ, पिताजी ने दे दी..."

राजेन्द्र हँस दिये, और हँस कर बोले—"समझ गया। तुम शादी करना चाहते हो, तुम्हारी और कमला की बड़ी ही अच्छी जोड़ी रहेगी !"

"कमला नहीं, चाचाजी, विमला !"

राजेन्द्र पर जैसे अकस्मात् वज्रपात हुआ। पर वह तुरन्त ही सँभल गये और पूछा—"क्या वह भी...? क्या तुम्हारी यह हार्दिक इच्छा है ?"

"जी, चाचाजी !"

"बेटा, तो मैं भी तुम्हें अनुमति देता हूँ। मैं तुम्हारे मार्ग में बाधक नहीं बनना चाहता। हाँ, यह बात सच है कि मेरी आशाओं पर तुषार-पात हो गया, मेरी हार्दिक इच्छा तुम को अपना भावी राज्याधिकारी बनाने की थी। तुम को और कमला को एक सूत्र में बाँधने की थी, पर मेरी आशा फलीभूत न हो सकी।" राजेन्द्र की निराशा को देख कर कोमल कुछ उदास हो गया।

"उदास न हो कोमल ! मैं तुम से नाराज़ नहीं हूँ। विमला जैसी लड़की के लिये तुम उपयुक्त भी हो। मेरे हृदय में विमला के लिये कमला के ही बराबर स्थान है। उसको सुखी देख कर मेरे हृदय को शान्ति मिलेगी। तुमने कोकिला देवी से भी अनुमति ले ली ? जाओ बेटे, उनकी भी अनुमति ले लो।"

कोमल चल तो दिया, पर कुछ उदास चित्त हो कर। वह राजेन्द्र से इतना स्नेह करता था कि उससे उनकी आन्तरिक व्यथा न देखी गई। पर वह विवश था, कारण कि उसके रोम-रोम में विमला ही समाई हुई थी।

उसकी बातों को सुन कर कमला और राजेन्द्र को तो दुःख तथा निराशा ही हुई थी, पर कोकिला देवी के व्यवहार ने उसे चकित कर दिया, जब कोमल ने उनसे बताया कि वह विमला को प्यार करता है। और उनसे विमला के साथ विवाह करने की अनुमति माँगी, तो उन्होंने अनुमति तो दे दी पर वह रो पड़ीं, सिसकियाँ भरने लगीं, और सिसकियाँ भरती-भरती बोलीं—"कोमल

ही समझ कर उसने अधिक ध्यान न दिया, और कहता गया—"उत्तम एक योग्य युवक है। मेरी निगाह में उससे उत्तम वर मिलना कठिन है। वह मेरा सब से प्रिय मित्र है, इसीलिये दावे के साथ कह सकता हूँ कि उससे बढ़ कर कोई तुम्हारे लिये उपयुक्त नहीं हो सकता। वह तुम से हृदय से प्रेम करता है।"

"तुम मुझसे यह कह रहे हो! तुम मुझको उत्तम के साथ विवाह करने की सलाह दे रहे हो? तुम!"

"हाँ, मैं, क्योंकि मुझे तुम्हारे सुख का ध्यान है, तुम्हारी भलाई की चिन्ता है।"

"आह कोमल, मुझको तुम से ऐसी आशा न थी। तुम जिसको... मैं..."

शब्दों से अधिक उसके भावों ने, उसके चेहरे, ने उसके नयनों ने व्यक्त कर दिया। और जो-कुछ व्यक्त किया उससे कोमल चकित हो गया—स्तब्ध हो गया। कमला उससे प्रेम करती है, इसका उसे स्वप्न में भी ध्यान न था। [illegible] विषम समस्या थी! कमला उसे [illegible]

उसका हृदय इस लड़की के लिये आर्द्र हो गया था, और आँखें इसको बता रही थीं, पर कमला ने इस पर कोई ध्यान नहीं दिया। केवल इतना ही कहा—"आप जा सकते हैं।"

कोमल उदास हो चला आया।

चन्द्रमा और तारों ने विचित्र-विचित्र दृश्य देखे होंगे, पर आज जैसा न देखा होगा—और न देखा होगा ऐसा चेहरा, दुःख से भरा हुआ, न देखा होगा ऐसा गर्व, क्रोध, घृणा, तिरस्कृत प्रेम, क्षुब्ध क्षोभ, निराशा की आँधी जो उस लड़की के हृदय में उठ रही थी।

कोमल भी इस तरह कमला को दुःख पहुँचाने पर उदास था। वह सोच रहा था—यदि कमला उससे प्रेम करने लगी थी, तो इसमें उसका क्या दोष? मुझको अपने और विमला के प्रेम की बात गुप्त नहीं रखनी थी। यदि कमला को यह मालूम पड़ जाता, तो वह कदापि यह मूर्खता न करती। अब भी समय है। पिताजी ने तो अनुमति दे दी है, पर चाचाजी की भी अनुमति लेने के लिये कह दिया था। चलूँ उनकी भी अनुमति ले लूँ, जितनी शीघ्रता हो उतना ही अच्छा। और वह सीधा राजेन्द्र के पास गया।

जाते ही बोला—"चाचाजी, मुझे आप से कुछ कहना है। यहाँ, यहाँ नहीं, एकान्त में।"

"माँ की यही राय है।"

इस समय का दृश्य ऐसा था कि यदि कोई चित्रकार देखता, तो प्रफुल्लित हो जाता, एक चित्र तैयार कर देता। वह दो सुन्दरी लड़कियाँ बनाता—एक कोमल, लजीली प्रेम की मूर्ति, पर कुछ भयभीत। दूसरी—गर्वीली, पर कुछ उदास तथा कुछ भयानक मुद्रा। और उस चित्र का शीर्षक देता—प्रेम और प्रतिहिंसा की देवियाँ।

"माँ की राय को छोड़ो, मुझे बताओ, क्या तुम उनसे प्रेम करती हो?" वाणी कुछ कठोर थी। विमला सहम गई, आँखें नीचे कर लीं।

"मुझसे संकोच करने की कोई ज़रूरत नहीं, बताती क्यों नहीं? सच बताना, क्या तुम वास्तव में कोमल से प्रेम करती हो?"

उत्तर के लिये शब्दों की कोई आवश्यकता न थी, कोमल का नाम सुनते ही आँखों में एक ज्योति आ जाना, ओठों पर मुस्कान का दौड़ जाना, गालों पर लालिमा का छा जाना, ही पर्याप्त उत्तर था, पर फिर भी विमला ने उत्तर दिया—"हाँ, प्राणों से भी अधिक।"

"तुम-जैसी लड़की में इतना प्रेम?"

"क्यों बहिन, मैं तुम्हें जो इतना प्रेम करती हूँ!"

"उस प्रेम में और इसमें महान् अन्तर है। एक बात बताओ, विमला, मान लो, तुम्हें कोई कोमल से भी अधिक धनी, रूपवान्, शिक्षित वर दिलाने का वायदा करे, तब भी क्या तुम कोमल को ही पसन्द करोगी?"

विमला को यह वाणी अति कोमल प्रतीत हुई, पर वह यह न देख पाई कि कमला की आँखों से अग्नि निकल रही है।

"मैं रानी बनना भी पसन्द न करूँगी।"

"तुम कोमल के प्रेम में इतनी दिवानी हो, पर क्या वह भी इतना प्रेम करता है? यदि उसे कोई रानी मिल जाय, तो वह न चूकेगा। वह तुम्हारे-जैसा भावुक नहीं है!"

विमला ने अपनी दोनों बाहें कमला के गले में डाल दीं—"तुम मुझे चिढ़ाना चाहती हो, चिढ़ा लो, बहिन! मुझे बुरा नहीं लगता, बिल्कुल ही नहीं, क्योंकि मैं जानती हूँ कि ये केवल तुम्हारी दिखावटी बातें हैं। हृदय से तुम बहुत भली हो, क्योंकि तुम मुझे बहुत चाहती हो। तुम्हारी इन बनावटी बातों में मैं नहीं आने की, अगर मैं ही अपनी बहिन का स्वभाव नहीं पहिचानूँगी, तो और कौन पहिचानेगा मैं जानती हूँ इस गर्वीले, हठी, क्रोधी, शरीर के भीतर कितना कोमल हृदय है!"

तुम ने भारी भूल की, जो कमला को छोड़ कर विमला से प्रेम किया, और इसका परिणाम मुझे अच्छा नहीं दिखाई देता। यदि तुम कमला से विवाह करते, तो तुम्हें अधिक सुख होता।"

और

हो

मला,

पालित कन्या का ध्यान है!

उत्तम कोमल का सर्वोत्तम मित्र था, अतः प्रातःकाल होते ही सर्वप्रथम यह आनन्ददायक समाचार कोमल ने उसे ही सुनाया। इसमें एक कारण भी था, और वह काम भी कोमल का पूरा हो गया। वह स्वयं कमला से यह कहना नहीं चाहता था, पर यह भी चाहता था कि कमला को समाचार मालूम पड़ जाय, वह काम उत्तम ने कर दिया।

कमला सफ़ेद गुलाबों के बाग में खड़ी हुई, एक फूल को हाथ में ले कर देख रही थी।

और जब उससे उत्तम ने बताया कि कोमल और विमला का विवाह अक्टूबर में होने जा रहा है, तो वह स्तब्ध रह गई। अपने दोनों हाथों को इस तरह ज़ोर से दाब लिया कि गुलाब का काँटा उसके कोमल हाथों में चुभ गया, पर उसे कुछ भी पीड़ा न हुई। सारा संसार उसको घूमता-सा नज़र आ रहा था। इस समय मृत्यु ही उसको सुखदाई लग रही थी।

पर यह दशा अधिक देर तक न रही। शीघ्र ही उसने अपने को सँभाल लिया।

बोली—"उत्तम बाबू, अगर यह बात है, तो मुझे वधू को अवश्य बधाई देना चाहिये। विमला मेरी बहिन के समान है।" और वह विमला को बधाई देने के लिये चल दी।

उत्तम की आशायें मन की मन ही में रह गईं। उसने सोचा था कि इस समय फिर अपना प्रेम व्यक्त करूँगा, कमला से प्रार्थना करूँगा, पर कमला ने उसे अवसर ही न दिया।

विमला अपने कमरे में बैठी भविष्य की कल्पना में तल्लीन थी कि कमला ने आ कर कल्पना लोक से उसे इस लोक में ला दिया।

"सच बताओ, विमला! क्या तुम कोमल से विवाह कर रही हो?"

"पर बात बड़ी विचित्र है, मुझे निर्लज्ज तो न समझोगे !"

"तुम भी कैसी बातें करते हो, कमला ! मैं तुम्हें निर्लज्ज समझूँगा, क्या इतने दिनों तक साथ रह कर भी हम एक-दूसरे को समझ नहीं सके, जो ऐसा कहती हो !"

"तुम कहते हो कि प्रथम क्षण ही से तुम ने विमला को प्रेम करना शुरू कर दिया था—अगर मान लो कि विमला न आती, तो क्या मुझे यह अधिकार मिल सकता था ?"

"बड़ा अजीब सवाल है ।"

"मैं ने तो पहिले ही कह दिया था ।"

मुझे यह स्वीकार करने में कोई हिचक नहीं है कि विमला के बाद मेरे हृदय में तुम्हारा ही ख्याल है । कमला, तुम में कोई कमी नहीं है । यदि विमला को मैं ने न देखा होता, तो अवश्य तुम से ही शादी करता ।"

जीवन अब कमला के लिये नीरस हो गया । आन्तरिक कमला और बाहरी कमला के बीच प्रति क्षण के संघर्ष ने जीवन को नरक के समान बना दिया । क्षोभित, निराश, पीड़ा-भरे हृदय की वास्तविक भावनाओं को अन्दर ही रख कर ऊपर से प्रसन्न चित्त दिखाई देना—उसके लिये एक यातना हो गई । दूसरों को तो धोखा देने में सफल हो गई । पर स्वयं अपने आप को धोखा न दे सकी । अन्दर आग लगे, और बाहर उसको प्रकट न होने दे, हृदय विदीर्ण हो जाये, और बाहर उसका आभास तक न लगने दे—इसमें कितनी अशान्ति, कितनी पीड़ा, कितनी यन्त्रणा होती है, यह केवल वही जान सकता है, जिस पर ऐसी बीती हो !

राजा राजेन्द्र प्रताप को तो कमला के व्यवहार से विश्वास हो ही गया था कि वह इस विवाह से प्रसन्न है, अतः उन्होंने सरल स्वभाव से कमला को बुला भेजा ।

"कमला बेटी, मेरी इच्छा विमला की शादी यहीं से करने की है ।"

"जैसी आपकी इच्छा ।"

"और मैं कोमल को एक उपहार भी देना चाहता हूँ । वह बेचारा समझता है कि मैं उससे नाराज़ हूँ ।"

"पिताजी ऐसा क्यों समझते हैं वह ?"

एक क्षण को कमला के हृदय में कोमलता का प्रकाश प्रकट हुआ, पर दूसरे ही क्षण लुप्त हो गया—कभी न चमकने के लिये ।

"कितनी भावुक तुम हो !" उसने अपने को विमला के आलिंगन से छुड़ाते हुये कहा—"तुम जानती हो, भावुकता से मैं कोसों दूर रहती हूँ। अच्छा चलूँ, कोमल को भी बधाई दे आऊँ, क्योंकि मैं ने सुना है कि वह शीघ्र ही जाने वाले हैं ।" और वह चल दी । दरवाज़े पर आ कर रुक गई—"एक बात और बताओ, विमला ! शादी कब की तय हुई ?"

"माँ का इरादा अक्टूबर में है ।"

'अक्टूबर तक तो काफ़ी समय है',—कमला ने सोचा—'इतने समय में तो समय को कायापलट हो सकती है । सब कुछ सम्भव है, दुर्घटना, बीमारी, दु:ख मृत्यु ! संसार ही परिवर्तनशील है, एक पल में बदलता है—और यहाँ तो काफ़ी समय है, कोमल...विमला...सभी में परिवर्तन हो सकता है !

इन्हीं विचारों में निमग्न वह अपने कमरे में आ कर लेट रही। एकाएक उसे ध्यान आया कोमल को बधाई देने का । पर वह उससे मिलने का साहस कैसे करेगी ? नहीं, नहीं, वह अवश्य मिलेगी, और इस बात का ध्यान रखेगी कि कोमल को उसके आन्तरिक विचारों का पता लग जाय, हृदय की वेदना तथा निराशा का पता लग जाय । पर निराशा किस बात की ? जब तक साँस तब तक आस ! यही सोच कर उसने अपने वस्त्र ठीक किये, केशों को सँवारा ।

इस तरह बन-ठन कर वह जाने को तैयार हो थी कि कोमल स्वयं ही उसके कमरे में आ गया । वह अपने घर जा रहा था, इसीलिये विदा लेने आया था ।

कमला बोली—"कोमल, मैं तुम्हारे ही पास आ रही थी, बधाई देने । पर तुम हो बड़े चालाक, इतने दिन तक बताया भी नहीं !"

"चालाकी की कोई बात नहीं । मैं तो समझता था तुम समझ गई होगी ।"

"प्रेम में किसी का वश नहीं चलता, यह अपने आप पैदा हो जाता है । घृणा की भी यही विशेषता है ।"

"ये गूढ़ तत्व की बातें मैं नहीं समझी ।"

"जब प्रेम करने लगोगी, तो स्वयं समझ जाओगी ।"

कमला कुछ देर चुप रही फिर बोली—"एक बात बताओगे, कोमल ?"

"अवश्य ।"

"वायदा करो ।"

"अवश्य बताऊँगा ।"

"पर बात बड़ी विचित्र है, मुझे निर्लज्ज तो न समझोगे !"

"तुम भी कैसी बातें करती हो, कमला ! मैं तुम्हें निर्लज्ज समझूँगा, क्या इतने दिनों तक साथ रह कर भी हम एक-दूसरे को समझ नहीं सके, जो ऐसा कहती हो !"

"तुम कहते हो कि प्रथम क्षण ही से तुम ने विमला को प्रेम करना शुरू कर दिया था—अगर मान लो कि विमला न आती, तो क्या मुझे यह अधिकार मिल सकता था ?"

"बड़ा अजीब सवाल है।"

"मैं ने तो पहिले ही कह दिया था।"

मुझे यह स्वीकार करने में कोई झिझक नहीं है कि विमला के बाद मेरे हृदय में तुम्हारा ही ख्याल है। कमला, तुम में कोई कमी नहीं है। यदि विमला को मैं ने न देखा होता, तो अवश्य तुम से ही शादी करता।"

जीवन अब कमला के लिये नीरस हो गया। आन्तरिक कमला और बाहरी कमला के बीच प्रति क्षण के संघर्ष ने जीवन को नरक के समान बना दिया। क्षोभित, निराश, पीड़ा-भरे हृदय की वास्तविक भावनाओं को अन्दर ही रख कर ऊपर से प्रसन्न चित्त दिखाई देना—उसके लिये एक यातना हो गई। दूसरों को तो धोखा देने में सफल हो गई। पर स्वयं अपने आप को धोखा न दे सकी। अन्दर आग लगे, और बाहर उसको प्रकट न होने दे, हृदय विदीर्ण हो जाये, और बाहर उसका आभास तक न लगने दे—इसमें कितनी अशान्ति, कितनी पीड़ा, कितनी यन्त्रणा होती है, यह केवल वही जान सकता है, जिस पर ऐसी बीती हो !

राजा राजेन्द्र प्रताप को तो कमला के व्यवहार से विश्वास हो ही गया था कि वह इस विवाह से प्रसन्न है, अतः उन्होंने सरल स्वभाव से कमला को बुला भेजा।

"कमला बेटी, मेरी इच्छा विमला की शादी यहीं से करने की है।"

"जैसी आपकी इच्छा।"

"और मैं कोमल को एक उपहार भी देना चाहता हूँ। वह बेचारा समझता है कि मैं [illegible] नाराज़ हूँ।"

[illegible] समझते हैं वह ?"

और जब राजेन्द्र ने कमला से सारा कारण कह सुनाया, तो कमला ने केवल इतना ही कहा—"अगर आप मुझसे पहिले ही पूछ लेते, तो कभी के जान लेते कि आप के विचार पूरे नहीं होने के।

"अच्छा, अच्छा," हँसते हुये उन्होंने कहा—"मैं मानता हूँ कि ऐसा सोचने में मेरी ही ग़लती थी। पर उपहार के बारे में तुम ने नहीं बताया कि विमला को क्या उपहार दिया जाय ?" कमला और उसके पिता में फिर इस विषय पर काफ़ी वार्तालाप हुआ, पर राजेन्द्र को ज़रा भी कमला के हृदय के तूफ़ान-बवंडर का पता न लग पाया। लेकिन कमला के हृदय में अब यही विचार ज़ोर कर रहा था कि मैं कब तक इसको सहन कर सकूँगी ! मैं कैसे इसको सहन करूँगी ?

इसी बीच में विमला भी आ गई। आते ही बोली—"कमला, मैं तुम्हें ही ढूँढ रही थी। चलो, मेरे साथ, ज़रा साड़ियाँ पसन्द कर दो।"

"चलने को चलती हूँ, पर मेरी पसन्द तुम्हारे पसन्द आयेगी ?"

"चलो भी, हम से न बनो !"

और दोनों जैसे ही कमरे में घुसीं, उनकी दृष्टि कोकिला देवी पर पड़ी, जो साड़ियों, जम्परों, ब्लाउज़ों के ढेर से उलझी हुई थीं। इनकी आहट पा कर उन्होंने सिर उठाया, और कमला को देख कर, सर्वदा की भाँति उनका चेहरा खिल उठा—"तुम आ गईं कमला रानी ! बड़ा ही अच्छा हुआ। मेरी तो जान बची !"

कमला जल्दी-जल्दी अपनी राय दे कर चल दी।

विमला ने उसके चले जाने पर ज़्यादा महत्त्व नहीं दिया। कोकिला को कुछ आभास हुआ, पर फिर भी उनको कमला के हृदय में उठती हुई आँधी का पूर्ण मात्रा में आभास नहीं हो पाया था।

पर कमला को इस समय इस आँधी का वेग सँभालना असह्य हो गया। मन में बोली—'इस समय यदि मैं यहाँ रही, तो अवश्य मर जाऊँगी !' और वह बाहर निकल गई, बाग़-बग़ीचे, झाड़-झंखाड़ सब को पार करती झरने के किनारे जा पहुँची। कोई भी मनुष्य आस-पास नहीं था, परन्तु एक चिड़िया शीघ्र ही टूटे दिल की हृदय-विदारक पुकार से चौंक उठी। और वायु भी उस दुःखी आत्मा के क्रन्दन को सहन न कर, डोल उठा।

'मुझसे सहन नहीं होता, अब अधिक नहीं सह सकती, नहीं, नहीं...नहीं सह सकती !' और वह हरी हरी घास में मुख छिपा कर फूट-फूट कर रोने लगी।

फिर अचानक ही उसने अपने दोनों हाथ प्रार्थना-स्वरूप ऊपर की तरफ़ उठाये, और कहा—'नहीं, नहीं, यह नहीं! मैं ऐसा नहीं कर सकती, इतनी पापिन नहीं बन सकती!'

पर इसी पास अपना संदेशा कहनी हो गई। यह विचार उसके हृदय में दृढ़ होता ही गया, क्योंकि रोना बन्द हो गया था।

यदि उसकी जगह पर कोई दूसरी लड़की होती, तो अपने माता-पिता या सखी से अवश्य सब सच बात कह देती, और किसी दूसरी जगह दिल बहलाने के लिये चली जाती, पर कमला का गर्व तथा हठ कब यह स्वीकार कर सकता था कि वह दूसरों से कहे—'जिसे मैं प्रेम करती हूँ, वह मेरी तनिक भी परवाह नहीं करता। दूसरे से विवाह करने जा रहा है!' उसने दुनिया को अपनी कमज़ोरी बताने की अपेक्षा दुःख तथा पीड़ा सहना पसन्द किया। कई बार उसके हृदय में आत्म-हत्या के भी विचार उठे।

'यदि मैं मर जाऊँ, तो?'—उसने हृदय से प्रश्न किया।

'तो क्या? थोड़े दिन लोग याद करेंगे, फिर भूल जायेंगे। तुम्हारे पिता विमला को चाहते हैं। तुम्हारे बाद उनका समस्त धन, राज्य कोमल और विमला को मिल जायगा,'—हृदय ने उत्तर दिया।

'नहीं, नहीं, ऐसा करना उचित न होगा, फिर इन दोनों को सुखी देख कर मुझे नरक तक में चैन नहीं आयेगा,'—उसने कहा।

अच्छा तो वह आत्म-हत्या नहीं करेगी, फिर?

इस 'फिर' के उत्तर में उसके हृदय में विमला के प्रति घृणा उत्पन्न हो गई। यदि वह न होती, तो कमला की दुनिया ही बदल गई होती। कोमल ने स्वयं ही स्वीकार कर लिया है कि यदि विमला न होती, तो वह उसीसे प्रेम करता, उसीसे विवाह करता। विमला, वास्तव में घृणा के योग्य है, और मैं उससे घृणा करती हूँ। वह...यहाँ आई ही क्यों? उसे तो मर जाना चाहिये। और ऐसे ही विचार उसके हृदय में बारम्बार उठने लगें। और ज्यों-ज्यों दिन बीतने लगे, उसकी घृणा बढ़ती गई, और यह विचार दृढ़ होता गया।

कमला अपनी घृणा को औरों के सामने तो छिपा रखने में समर्थ हो जाती, पर जब कभी विमला से अकेले में बात करती, तो ये भाव अपने आप उसके चेहरे पर व्यक्त हो जाते।

विमला बेचारी इन भावों को देखती, तो सोचती कि कदाचित् उससे कोई अपराध हो गया है, जिससे कमला बहिन नाराज़ है। इसीसे वह एक दिन जब कि कमला अपने कमरे में अकेली बैठी थी, उसके पास पहुँच गई। और

ली—"कमला बहिन, मुझसे अनजाने में यदि कोई अपराध हो गया हो, तो
मा कर दो। तुम मुझसे नाराज़ क्यों हो ?"

"तुम से यह किसने कहा ?" कमला की वाणी कठोर थी।

"कहा किसी ने भी नहीं, पर तुम नाराज़ हो सी लगती हो। क्षमा कर
न बहिन !" और टप्-टप् करके अश्रु बह चले, फिर धार बन गई उन
ाँसुओं की, जिसमें पत्थर तक को भी पिघलाने की शक्ति थी। पर कमला का
दय पत्थर से भी कठोर हो गया था। विमला रो रो कर बोली—"कमला,
म लोग हमेशा बहिन की तरह रही हैं। तुम इतनी निर्दय पहिले तो न थीं,
ब कैसे हो गईं ? याद है, जब मैं गिर पड़ी थी तो तुम ने अपनी सारी फाड़
[illegible]

यह विमला के चेहरे पर पीड़ा के भाव देख कर, मन में खुश हो रही थी,
ऊपर से बोली—"ऐसे व्यर्थ के विचार तुम्हारे लिये इस समय उचित
हीं विमला ! छुटपन की बात और थी, फिर भी हम दोनों के विचारों में
न्तर रहता ही था।"

विमला ने कुछ उत्तर न दिया, और यह देख कर कि कमला को उसकी
परिस्थिति पसन्द नहीं है, वह चुप चाप सिर नीचा किये चली आई। पीछे मुड़
र न देखा, और उसका पीछे मुड़ कर न देखना अच्छा ही हुआ, क्योंकि यदि
ह कमला की घृणा, प्रतिहिंसा या क्रोध से भरी दृष्टि देख पाती, तो अवश्य ही
ौर भी अधिक दुखी होती।

कोमल अपने कमरे में बैठा हुआ हिसाब लगा रहा था। आज तीसरी
तम्बर हो गई, केवल सत्ताइस दिन इस महीने में और पन्द्रह दिन अक्टूबर
, कुल ४२ दिन अब उसके तथा स्वर्ग के मध्य में रह गये हैं। ओह ! कितना
च्छा हो, यदि ४२ दिन ४२ घण्टों में परिवर्तित हो जायँ !

"बाबूजी, आप का ख़त है," पोस्टमैन ने आ कर कहा।

कोमल ने ख़त डाकिये से ले लिया। खोल कर पढ़ा, और पढ़ते ही चेहरे
र चिन्ता छा गई। पिता से कुछ बहाना बना, वह बिस्तर बाँध कर पहिली ही
ाड़ी से चल दिया।...

यहाँ दरवाज़े पर ही राजेन्द्र मिल गये ।

बोले—"अच्छा हुआ जो तुम आ गये कोमल ! आज विमला की तबियत कुछ ठीक नहीं है । कल तो ज़्यादा ख़राब हो गई थी । वह घबरा जल्दी जाती है, अब कोई फ़िक्र की बात नहीं है ।"

तब उनकी आज्ञा ले कर कोमल विमला को देखने उसके कमरे में गया ।

कमरे के एक किनारे चारपाई पर विमला लेटी हुई थी । खिड़की से धूप की रोशनी उस पर पड़ रही थी । उसी सूर्य के प्रकाश में कोमल ने देखा कि कितना परिवर्तन हो गया है । चेहरा इतना पीला पड़ गया था कि कोमल स्तब्ध रह गया ।

विमला ने उसे देखा । और दूसरे ही क्षण वह चारपाई के समीप था ।

"विमला, तुम इतनी बीमार रहीं, और मुझे ख़बर तक नहीं !"

"मैं तुम्हारी व्यर्थ की परेशानी नहीं बढ़ाना चाहती थी, और अब तो अच्छी हूँ ।"

"विमला, अचानक कैसे तुम इतनी बीमार पड़ गईं ?"

"बीमारी का कोई कारण नहीं, हृदयेश्वर, सिर्फ़ भय के कारण ।"

"भय किसका ?"

"न मालूम क्यों हृदय में आशंकायें उठा करती हैं, भय लगता है कि मैं तुम्हें..."

"पगली हो तुम विमला, तुम से मैं ने कितनी बार समझाया है कि ऐसी निर्मूल आशंकाओं को ध्यान ही में मत लाया करो ! कब से बीमार हो ?"

"क़रीब एक हफ़्ता हुआ । एक दिन शाम को अचानक जाड़ा-सा लगा, फिर आँखें जलने-सी लगीं, गला सूखने लगा, पर अब तो अच्छी हूँ ।"

पर कोमल ने महसूस किया, विमला का बदन अब भी गर्म था, हाथ तप रहे थे, ओंठ जल रहे थे ।

"इलाज किसका हो रहा है ?"

"किसी का भी नहीं । मैं ने इसकी ज़रूरत ही नहीं समझी । भाभाजी भी परसों ही बाहर से लौटे हैं ।"

"किसी डाक्टर को दिखाना आवश्यक है । मैं जाता हूँ और अभी डाक्टर वर्मा को लाता हूँ ।

विमला ने मना भी किया, पर वह न माना, और आध घण्टे के भीतर ही डाक्टर वर्मा को रोगिणी के पास ला कर खड़ा कर दिया ।

डाक्टर वर्मा ख्याति प्राप्त, अनुभवी तथा कुशल डाक्टर थे । फिर भी

विमला के रोग ने उन्हें चक्कर में डाल दिया। कोकिला देवी पास में खड़ी थीं। उनसे उन्होंने पूछना आरम्भ कर दिया—"क्या आप के ख़ान्दान में किसी को टी० बी० हुई थी?"

"नहीं, मेरी याद में तो किसी को नहीं हुई थी।"

डाक्टर ने कुछ देर विचार किया, फिर पूछा—"रोगिणी को कुछ सदमा तो नहीं पहुँचा है, कोई ऐसी बात तो नहीं हुई है, जिससे इसे दुःख हुआ हो?"

"कोई भी नहीं। शीघ्र ही इसकी शादी होने वाली है।"

"शादी इसकी मर्ज़ी के ख़िलाफ़ तो नहीं हो रही है?"

"नहीं।"

डाक्टर वर्मा कुछ आश्चर्य में पड़ गये। बाहर आ कर कोमल से बोले—"लक्षण तो टी० बी० ही के से हैं। पर अभी कोई ख़ास बीमारी नहीं वरी। एक अच्छा सा टानिक, और आराम देना काफ़ी होगा। घबराने की कोई बात नहीं। शीघ्र अच्छी हो जायगी।"

"धन्यवाद, डाक्टर साहब! सच बात तो यह है कि इसके लिये मैं बहुत डर गया था। न मालूम क्यों इसके दिमाग़ में यह विचार जम गया है कि वह बचेगी नहीं।"

"ताज्जुब है! ऐसा विचार क्यों? ख़ैर, आप घबरायें नहीं। किसी को आप भेज दें, मैं दवा दे दूँगा।"

डाक्टर साहब चले गये। कोमल उनको पहुँचा कर वापस आया, तो उसको कमला दिखाई दी।

"कोमल बाबू! आप कब आये?"—अति प्रसन्न हो कर उसने पूछा।

"आज ही आया। चाचाजी ने विमला की बीमारी का हाल लिखा था। बेचारी काफ़ी बीमार है।"

कमला के चेहरे पर एक धीमी-सी घृणा की रेखा दौड़ गई।

"आप को चाचाजी ने व्यर्थ में परेशान किया। विमला इतनी बीमार तो नहीं है।"

"पर कमला, यह बदल कितनी गई, कितनी कमज़ोर हो गई है!"

"प्रेमियों की आँखों में कुछ-न-कुछ विचित्रता अवश्य रहती है, क्या अभी डाक्टर आये थे?"

"हाँ, वह पूछ रहे थे कि विमला के वंशज में किसी को टी० बी० तो नहीं हुई थी।"

"मुझको क्या पता, और फिर यदि हो भी तो कोई बतायेगा क्यों?"

"कमला, तुम विमला का पूरा ख्याल रखोगी।"

"यह भी कोई कहने की बात है, कोमल, यह तो मेरा फ़र्ज़ है !"...

डाक्टर की दवा आ गई। दवा ने असर दिखाया, विमला की दशा में परिवर्तन हुआ।

परन्तु उसी रात कोमल को एक और आश्चर्य हुआ। उसको नींद नहीं आ रही थी। वह चारपाई पर लेटा करवटें बदल रहा था। रात कैसे कटे ? यही प्रश्न था। उसने सोचा कि कुछ पढ़े ही, पर किताब जो रास्ते में पढ़ता आया था, वह तो उसी कमरे में थी, जिसमें और किताबें रखी हुई थीं।

सोचा—चलो, उसी को ला कर पढ़ें। और वह किताब लेने चल दिया।

कमरे में रोशनी जलती देख कर उसे आश्चर्य हुआ। उसे आशंका हुई कि कहीं चोर न हो, और वह दबे पैरों आगे बढ़ा। कमरे के दरवाज़े से कान लगा कर सुनने लगा। कमरे में सन्नाटा था। नहीं, चोर नहीं हो सकता। कदाचित् कोई लैम्प भूल से जलता छोड़ गया है। फिर भी सावधानी से उसने धीरे से दरवाज़ा खोला।

घड़ी ने टन-टन करके दो बजाये।

मेज़ पर झुका हुआ कोई पढ़ रहा था। कोमल के पैरों की आहट पा कर सिर उठाया। कोमल चकित रह गया। वह कमला थी !

"अरे कमला, तुम यहाँ इस समय क्या कर रही हो !"

कमला का चेहरा सफ़ेद हो गया। जो किताब वह पढ़ रही थी उसे छिपा लिया।

"नींद नहीं आ रही थी, इससे सोचा कुछ पढ़ ही लूँ।"

"कौन-सी किताब है ?"

"एक किताब है," उसने उस किताब को और भी छिपाते हुये कहा—"ऐसी ही एक किताब है, पर कोमल बाबू, किसी से कहियेगा नहीं।"

लाइब्रेरी में सभी प्रकार की पुस्तकें थीं। कोमल ने सोचा कि कोई उपन्यास होगा। "नहीं कहूँगा, विश्वास करो।" पर उसे यह ताज्जुब अवश्य हो रहा था कि कमला इतनी घबराई हुई-सी क्यों है ? शायद प्रेम का उपन्यास है, या कोक-शास्त्र है, तभी तो वह उसे दिखाने में घबरा रही है। और जब कमला चली गई, तो वह मुसकराया। परन्तु यदि वह उस पुस्तक का नाम पढ़ लेता तो अवश्य ही न मुसकराता।

कोमल जा कर अपने कमरे में लेट गया, और पुस्तक पढ़ने लगा।

बार बने उसको भ्रम हुआ कि कोई दबे पैरों बाहर चल रहा है। पर उसने केवल इसे अपना भ्रम ही समझा।

प्रातःकाल कोमल, कमला तथा राजेन्द्र चाय पी रहे थे कि कोकिला देवी घबराई हुई सी आ कर बोलीं—"विमला की हालत बहुत ख़राब हो गई है।"

राजेन्द्र भी घबरा गये। उनको विमला से बहुत स्नेह था।

"क्या बात है?"

"बताती है कि प्यास अधिक है, गला जकड़ रहा है, कलेजे पर जलन है, मूर्छा आ आ जाती है।"

कोमल चाय का प्याला वैसे ही छोड़ कर डाक्टर को बुलाने दौड़ा।

डाक्टर वर्मा भी विमला की अवस्था देख कर घबरा गये। कोमल को एकान्त में ले जा कर बोले—"क्या आप ही के साथ इनकी शादी होने वाली थी? मैं एक ख़ास कारण से यह पूछ रहा हूँ।"

"जी।"

"रोगिणी की अवस्था ज्यादा ख़राब है, और ऐसी कि मैं किसी और भी डाक्टर की राय लेना ज़रूरी समझता हूँ।"

कोमल के चेहरे का रंग उड़ गया।

"तो डाक्टर साहब ?"

"जीवन और मरण तो परमात्मा के हाथ में है, पर इस समय अवस्था ख़तरनाक है। इसलिये मैं यह चाहता हूँ कि आप तार द्वारा डाक्टर कौशल किशोर को बुलवा लें। मुझे तो इस केस ने आश्चर्य में डाल दिया है। अब तक ऐसा केस मैं ने देखा ही नहीं।"

कोमल चुप रहा।

डाक्टर ने कहना जारी रखा—"अगर आप की जगह मैं होता, तो तार भेजने में देरी न करता।"

और कोमल चला गया तार देने। तार घर लगभग तीन मील दूर था। जब कोमल तार घर पर पहुँचा, तो वह और घोड़ा दोनों ही पसीने से तर थे।

विमला की अवस्था ने राजेन्द्र को बहुत अधिक चिन्तित कर दिया। वह बेचैन हो गये। कोकिला देवी भी व्यग्र हो गई थीं।

दूसरे दिन प्रातःकाल नौ बजे डाक्टर कौशल किशोर आ गये। डाक्टर वर्मा स्टेशन पर उनको लेने गये। रास्ते ही में डाक्टर कौशल किशोर ने उनसे रोगिणी की अवस्था के बारे में पूछा। पर जो उत्तर डाक्टर वर्मा ने दिया उससे उन्हें वास्तव में आश्चर्य हुआ। डाक्टर वर्मा ने कहा—"रोगिणी की अवस्था आप स्वयं ही देख कर अनुमान कर लेंगे। पर मेरी एक प्रार्थना है, आप उसकी परीक्षा करते समय मेरी राय मत जानियेगा, स्वयं अपना निर्णय कीजियेगा। फिर बाद में हम और आप-अपना-अपना निर्णय मिला लेंगे।"

डाक्टर कौशल किशोर ने डाक्टर वर्मा की प्रार्थना को स्वीकृत कर लिया और वह आते ही सीधे रोगिणी को देखने गये।

प्रश्न पर प्रश्न उन्होंने पूछे, और उत्तर पर उत्तर मिले और उनका चेहरा गम्भीर हो गया।

परीक्षा समाप्त कर वह उस कमरे में गये, जो उनके लिये राजेन्द्र ने ख़ाली करवा रखा था। डाक्टर वर्मा का भी कमरा पास ही में था। वह भी डाक्टर कौशल किशोर के कमरे में पहुँच गये।

"डाक्टर वर्मा! ज़रा दरवाज़ा बन्द कर दीजिये, क्योंकि मैं नहीं चाहता कि हम दोनों की बातें कोई और सुने।"

डाक्टर वर्मा ने उठ कर दरवाज़ा बन्द कर दिया।

"डाक्टर वर्मा, मैं ने रोगिणी की परीक्षा की..."

"ऐसे नहीं डाक्टर किशोर, हम लोग अपना-अपना निर्णय एक काग़ज़ पर लिख लें, फिर मिलान करें।"

दोनों ने दो काग़ज़ों पर अपने-अपने निर्णय लिख लिये, तथा एक दूसरे से काग़ज़ बदल लिये। दोनों काग़ज़ों पर एक ही से शब्द थे—'रोगिणी की ऐसी अवस्था ज़हर की न्यून मात्रा दी जाने के कारण हुई है।'

दोनों डाक्टरों ने इसे पढ़ा। दोनों की मुद्रा गम्भीर हो गई।

"यह तो भयंकर बात है। किसने ऐसा किया? किसी घटनावश तो ज़हर रोगिणी के पेट में पहुँचा नहीं, किसी ने जान-बूझ कर दिया है, कौन हो सकता है डाक्टर वर्मा?"

"मैं इन्हीं विचारों में पड़ा हुआ हूँ। मैं पिछले कई वर्षों से इस परिवार का पारिवारिक डाक्टर हूँ, और मुझे तो रोगिणी सर्व-प्रिय दिखाई देती है, डाक्टर किशोर!"

"कोई नौकर आदि ? क्योंकि एक केस ऐसा ही मैं देख चुका हूँ, जिसमें नौकर ने मालिक को ज़हर दिया था।"

"यहाँ तो यह भी सन्देह निर्मूल है। प्रत्येक नौकर विमला से स्नेह करता है।"

"फिर भी इसमें कोई सन्देह नहीं कि इसको ज़हर दिया गया है। और यह काम भी किसी ऐसे का है, जो इस ज़हर की मात्रा से भिज्ञ है, क्योंकि उसने ज़हर ऐसी न्यून मात्रा में दिया है कि यह लड़की बीमार तो अधिक हो जाय, पर तत्काल मृत्यु न हो।"

"यह रहस्य हो सकती है या नहीं ?"

"दोनों बातें सम्भव हैं, डाक्टर वर्मा। इस मात्रा की एक या दो खुराकें हानि नहीं पहुँचावेंगी, लेकिन इसी मात्रा की चार खुराकें मृत्यु को निश्चित कर देंगी, अतः जिस तरह हो हमें उसका पता लगाना है। इस ज़हर को और भी अधिक रोगिणी के शरीर में पहुँचने से रोकना है। इसमें काफ़ी सतर्कता की आवश्यकता है। हम दोनों का सन्देह किसी पर भी प्रगट नहीं होना चाहिये, यदि हो गया, तो फिर अपराधी सतर्क हो जायेगा।"

"मैं आप के प्रस्ताव से सहमत हूँ।"

"क्यों डाक्टर वर्मा, आप तो यहाँ के पारिवारिक चिकित्सक हैं ? इस परिवार में किसको अपना साथी बनाना चाहिये ? बिना किसी को बताये काम नहीं चलेगा।"

"राजा राजेन्द्र प्रताप रोगिणी के कोई सम्बन्धी भी नहीं हैं, अतः उनको इस रहस्य से भिज्ञ करना बेकार है। रोगिणी की माँ, वह बड़ी जल्दी डर जाने वाली स्त्री हैं, फिर मुझे भय है कि वह इसे गुप्त भी रख सकेंगी या नहीं। राजेन्द्र की पुत्री कमलारानी के बारे में भी मेरी यही राय है। बाकी बचते हैं केवल कोमल। वही उपयुक्त भी होंगे, क्योंकि वही रोगिणी के भावी-पति हैं।"

"आप का कहना ठीक है। वही व्यक्ति हम लोगों के लिये उपयुक्त रहेगा। डाक्टर वर्मा, क्या आप उनको बुला लाने का कष्ट करेंगे ?"

कुछ क्षण उपरान्त जब कोमल डाक्टर वर्मा के साथ उस कमरे में घुसा, और जब डाक्टर कौशल किशोर का गम्भीर चेहरा देखा, तो वह सहम गया। और जब डाक्टर वर्मा ने दरवाज़ा बन्द कर ताला लगा दिया, तो वह चकित हो गया। और जब डाक्टर कौशल किशोर ने कहा—"कोमल बाबू, प्रतिज्ञा

कीजिये कि जो-कुछ हम लोग कहेंगे, उसे आप किसीसे न कहेंगे।" तब तो उसके आश्चर्य का पारावार न रहा।

डाक्टर वर्मा ने कहा—"देखिये, कोमल बाबू, बात ऐसी ही है, जिसे गुप्त ही रखने में हम लोग सफल हो सकते हैं। और हमारी सफलता या असफलता पर ही विमला का जीवन और मरण निर्भर है।"

कोमल से स्वीकृति पाने पर डाक्टर किशोर बोले—"कोमल बाबू, क्या आप बता सकेंगे कि विमला का शत्रु कौन है?"

"विमला का शत्रु! कोई भी नहीं है डाक्टर साहब!"

"उसकी मृत्यु से किसका लाभ हो सकता है?"

"लाभ किसीका नहीं, वरन् हानि ही होगी। मेरा सर्वस्व छिन जायगा। कमलारानी की बहन छिन जायेगी, कोकिला देवी की पुत्री छिन जायेगी। पर ऐसे सवाल आप क्यों पूछ रहे हैं डाक्टर साहब?"

"शान्त रहिये, अभी पता लग जायेगा। बस, एक सवाल और। क्या रोगिणी अपने जीवन से सुखी थी?"

"बहुत-बहुत! और इस विवाह से तो और भी।"

"ठीक है। आप यह जानना चाहते हैं कि क्यों मैं यह प्रश्न पूछ रहा था। बात यह थी कि मैं यह जानना चाहता था कि कहीं हम लोगों ने निष्कर्ष पर पहुँचने में ग़लती तो नहीं की। हम लोग इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि विमला देवी को ज़हर दिया जा रहा है। इतनी कम मात्रा में कि जान धीरे-धीरे निकले।"

कोमल स्तब्ध रह गया—"विमला को ज़हर दिया जा रहा है! नहीं, नहीं, ऐसा नहीं हो सकता!"

"यह सच है। मैं शपथ खा कर कहता हूँ कि यह सच है।"

"क्या यह सम्भव नहीं हो सकता कि आप लोगों ने निष्कर्ष पर पहुँचने में ग़लती की हो?"

"ग़लती मनुष्य से हुआ करती है, और हम लोग भी मनुष्य हैं। पर इसमें ग़लती नहीं हुई।" डाक्टर वर्मा ने कहा—"मुझे अपने पर पूर्ण विश्वास नहीं हुआ था इसीसे तुम से डाक्टर साहब को बुलाने को कहा था, और इनकी भी यही राय है।"

"कोमल बाबू, अधिक चिन्ता की कोई बात नहीं। परमात्मा की कृपा से अभी विमला की दशा क़ाबू के बाहर नहीं हुई है। पर हम को तो उसे पकड़ना

"कोई नौकर आदि ? क्योंकि एक केस ऐसा हो मैं देख चुका हूँ, जिसमें नौकर ने मालिक को ज़हर दिया था।"

"यहाँ तो यह भी सन्देह निर्मूल है। प्रत्येक नौकर विमला से स्नेह करता है।"

"फिर भी इसमें कोई सन्देह नहीं कि इसको ज़हर दिया गया है। और यह काम भी किसी ऐसे का है, जो इस ज़हर की मात्रा से भिज्ञ है, क्योंकि उसने ज़हर ऐसी न्यून मात्रा में दिया है कि यह लड़की बीमार तो अधिक हो जाय, पर तत्काल मृत्यु न हो।"

"यह स्वस्थ हो सकती है या नहीं ?"

"दोनों बातें सम्भव हैं, डाक्टर वर्मा। इस मात्रा की एक या दो खुराकें हानि नहीं पहुँचायेंगी, लेकिन इसी मात्रा की चार खुराकें मृत्यु को निश्चित कर देंगी, अब जिस तरह हो हमें उसका पता लगाना है। इस ज़हर को और भी अधिक रोगिणी के शरीर में पहुँचने से रोकना है। इसमें काफ़ी सतर्कता की आवश्यकता है। हम दोनों का सन्देह किसी पर भी प्रगट नहीं होना चाहिये, यदि हो गया, तो फिर अपराधी सतर्क हो जावेगा।"

"मैं आप के प्रस्ताव से सहमत हूँ।"

"क्यों डाक्टर वर्मा, आप तो यहाँ के पारिवारिक चिकित्सक हैं ? इस परिवार में किसको अपना साथी बनाना चाहिये ? बिना किसी को बनाये काम नहीं चलेगा।"

"राजा राजेन्द्र प्रताप रोगिणी के कोई सम्बन्धी भी नहीं हैं, अतः उनको इस रहस्य से भिज्ञ करना बेकार है। रोगिणी की माँ, यह बड़ी जल्दी घबरा जाने वाली स्त्री हैं, फिर मुझे भय है कि वह इसे गुप्त भी रख सकेंगी या नहीं। राजेन्द्र की पुत्री कमलारानी के बारे में भी मेरी यही राय है। बाक़ी बचते हैं केवल कोमल। यही उपयुक्त भी होंगे, क्योंकि यही रोगिणी के भावी-पति हैं।"

"आप का कहना ठीक है। यही व्यक्ति हम लोगों के लिये उपयुक्त रहेगा। डाक्टर वर्मा, क्या आप उनको बुला लाने का कष्ट करेंगे ?"

कुछ क्षण उपरान्त जब कोमल डाक्टर वर्मा के साथ उस कमरे में घुसा, और जब डाक्टर कौशल किशोर का गम्भीर चेहरा देखा, तो वह सहम गया। और जब डाक्टर वर्मा ने दरवाज़ा बन्द कर ताला लगा दिया, तो वह चकित हो गया। और जब डाक्टर कौशल किशोर ने कहा—"कोमल बाबू, प्रतिज्ञा

कीजिये कि जो-कुछ हम लोग कहेंगे, उसे आप किसीसे न कहेंगे।" तब तो उसके आश्चर्य का पारावार न रहा।

डाक्टर वर्मा ने कहा—"देखिये, कोमल बाबू, बात ऐसी ही है, जिसे गुप्त ही रखने में हम लोग सफल हो सकते हैं। और हमारी सफलता या असफलता पर ही विमला का जीवन और मरण निर्भर है।"

कोमल से स्वीकृति पाने पर डाक्टर किशोर बोले—"कोमल बाबू, क्या आप बता सकेंगे कि विमला का शत्रु कौन है?"

"विमला का शत्रु! कोई भी नहीं है डाक्टर साहब!"

"उसकी मृत्यु से किसका लाभ हो सकता है?"

"लाभ किसीका नहीं, वरन् हानि ही होगी। मेरा सर्वस्व छिन जायगा। कमलारानी की बहन छिन जायेगी, कोकिला देवी की पुत्री छिन जायेगी। पर ऐसे सवाल आप क्यों पूछ रहे हैं डाक्टर साहब?"

"शान्त रहिये, अभी पता लग जायेगा। बस, एक सवाल और। क्या रोगिणी अपने जीवन से सुखी थी?"

"बहुत-बहुत! और इस विवाह से तो और भी।"

"ठीक है। आप यह जानना चाहते हैं कि क्यों मैं यह प्रश्न पूछ रहा था। बात यह थी कि मैं यह जानना चाहता था कि कहीं हम लोगों ने निष्कर्ष पर पहुँचने में ग़लती तो नहीं की! हम लोग इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि विमला देवी को ज़हर दिया जा रहा है। इतनी कम मात्रा में कि जान धीरे-धीरे निकले।"

कोमल स्तब्ध रह गया—"विमला को ज़हर दिया जा रहा है! नहीं, नहीं, ऐसा नहीं हो सकता!"

"यह सच है। मैं शपथ खा कर कहता हूँ कि यह सच है।"

"क्या यह सम्भव नहीं हो सकता कि आप लोगों ने निष्कर्ष पर पहुँचने में ग़लती की हो?"

"ग़लती मनुष्य से हुआ करती है, और हम लोग भी मनुष्य हैं। पर इसमें ग़लती नहीं हुई।" डाक्टर वर्मा ने कहा—"मुझे अपने पर पूर्ण विश्वास नहीं हुआ था इसीसे तुम से डाक्टर साहब को बुलाने को कहा था, और इनकी भी यही राय है।"

"कोमल बाबू, अधिक चिन्ता की कोई बात नहीं। परमात्मा की कृपा से अभी विमला की दशा क़ाबू के बाहर नहीं हुई है। पर हम को तो उसे पकड़ना

है, जो ज़हर दे रहा है। और इसीमें आप की सहायता की आवश्यकता है। पर एक बात का ध्यान रखियेगा, कानोंकान किसीको हमारे सन्देह का पता न लगे, क्योंकि यदि पता लग गया, तो वह ज़हर देना बन्द कर देगा—विमला अच्छी हो जायेगी। पर कब तक ? यदि फिर वह व्यक्ति ऐसा करे, तो ?"

कोमल के मस्तिष्क में डाक्टर की बातें जमती आ रही थीं। एक ग़लती कर सकता है, पर दो नहीं। "मैं पूरी सहायता करूँगा," उसने कहा।

"तो सब से प्रथम हम को विमला के लिये व्यवस्था करनी पड़ेगी। क्या आप कोई ऐसा व्यक्ति बता सकते हैं, जो रोगिणी के पास रह सके, दवा दे, पथ्य दे। मैं कोई नौकर या नर्स नहीं चाहता।"

"दो ही हो सकते हैं—एक विमला की माँ, दूसरी उसकी बहिन।"

"माँ ही ठीक रहेंगी। वह अवस्था में भी बड़ी हैं। पर ध्यान रहे उनसे भी यह रहस्य गुप्त रखा जाय। स्त्रियोंको मैं श्रद्धा तथा आदर की दृष्टि से देखता हूँ, पर किसी बात को गुप्त रखने के लिये मुझे उन पर तनिक भी विश्वास नहीं। मैं उनको यह विश्वास दिला दूँगा कि रोगिणी की ख़बरदारी रखना अति आवश्यक है। पथ्य भी जो डाक्टर वर्मा समय समय पर बतायें, वही दिया जाय। और एक बात का ध्यान रखा जाय कि रोगिणी को आराम की अत्यन्त आवश्यकता है, अतः हम दोनों डाक्टरों तथा उसकी माँ के अतिरिक्त कोई भी कमरे में न जाय। आप का काम कोमल बाबू, उस ज़हर देने वाले का पता लगाना है।"

"मैं दिन-रात चौकसी करूँगा, डाक्टर साहब, जब तक उसे पकड़ न लूँगा, चैन न लूँगा।"

कार्य-क्रम के अनुसार डाक्टर वर्मा रोगिणी के पास चले गये। दो घंटे बाद डाक्टर किशोर को आना था, और उसके दो घन्टे बाद कोकिला देवी को।

*

कोमल की अवस्था इस समय विचित्र थी। उसके मस्तिष्क में नाना प्रकार के विचार उठ रहे थे—'कौन विमला के प्राणों का ग्राहक है ? यही प्रश्न बार बार उसके हृदय में उठ रहा था। कौन हो सकता है ? कोई नहीं हो सकता। सभी तो विमला से स्नेह करते हैं, सभी दास दासी उस पर प्राण न्योछावर करने को तैयार रहते हैं। यदि कोई उसके प्राणों का ग्राहक होगा, तो क्यों ? और वह इस प्रश्न का समुचित उत्तर न खोज पाता था। डाक्टरों की

राय है, कोई अवश्य विमला को ज़हर दे रहा है। एक बार यदि वह उसे पा जाय, केवल एक बार...!'

उत्तेजित मस्तिष्क को ठंडा करने के दो ही उपाय हैं, एकान्त स्थान तथा धूम्रपान।

कोमल ने भी यही किया। एक सिगरेट जला कर बाग़ में निकल गया। वह एकान्त स्थान चाहता था, पर नियति को उसको अकेले रहने देना स्वीकार न था। कमलारानी ने उसे अपने कमरे की खिड़की से देख लिया था और वह कोमल के पास चल दी। चलते समय कमला ने एक पुस्तक भी ले ली, क्योंकि वह यह दिखाना चाहती थी कि वह उसीसे मिलने आई है। कमला के हृदय में कोमल के प्रति प्रेम बढ़ रहा था, पर साथ-ही-साथ गर्व भी। प्रेम के कारण तो वह मिलने चली, गर्व के कारण पुस्तक ले ली, और जब कोमल को देखा, तो चेहरे पर आश्चर्य के चिह्न प्रकट कर लिये।

बोली—"मैं तो समझती थी कि आप तकिये में मुँह छिपाये सो रहे होंगे!"

कोमल को कमला की न तो वाणी ही भाई, न उसकी मुस्कान ही।

वह बोला—"कमला विमला की अवस्था चिन्ताजनक है।"

"इन डाक्टरों ने तुम्हें डरा दिया है व्यर्थ में। मुझे तो डाक्टरों पर तनिक भी विश्वास नहीं। एक होता तो ख़ैर, पर यहाँ तो दो-दो हैं! कोमल, मेरा तो विश्वास यह है कि यदि विमला को प्रकृति के भरोसे छोड़ दिया जाता, तो वह अवश्य अच्छी हो जाती।"

"कमला, विमला मृत्यु के मुख में है!"

"नहीं, मुझे विश्वास नहीं कि विमला मृत्यु के मुख में है। और यदि वह मर गई, तो वास्तव में यह अत्यन्त हृदय-विदारक घटना होगी। पर मनुष्य का इसमें क्या चारा—'हानि-लाभ, जीवन-मरण, यश-अपयश विधि हाथ'!"

"यह सभी जानते हैं, पर सभी के हृदय में पीड़ा होती है।"

"पर कुछ सान्त्वना भी तो अवश्य होती है।"

कोमल चुप रहा।

कमला ने फिर कहा—"यदि मैं मर जाऊँ, तो कितना अच्छा हो!"

"क्यों?"

"विमला इतनी अच्छी है, और मैं इतनी ख़राब! विमला यहाँ भी देवी है, और वहाँ भी स्वर्ग में देवी ही रहेगी, पर मुझे तो नर्क में सड़ना होगा!"

"कैसी व्यर्थ की बातें करती हो ? विमला के लिये तो जो कहा ठीक है, पर तुम ने अपने लिये जो कहा, वह ग़लत है।"

"मैं ठीक ही कह रही हूँ। माँ को कभी भी विमला को झिड़कना तक भी नहीं पड़ा, और मुझे मार तक खानी पड़ी।"

कोमल की आँखें सजल हो आईं।

"कमला, तुम किसी ऐसे को जानती हो, जो विमला से घृणा करता हो ?"

"विमला से घृणा !" कमला ने शान्त भाव से उत्तर दिया—"कोई क्यों करेगा ?"

"यही तो मैं भी स्वयं सोचता हूँ, पर समझ नहीं पाता हूँ।"

और फिर अचानक उसके ध्यान में आया कि वह गुप्त रहस्य को प्रकट करने के कितने निकट पहुँच गया है, अतः उसने बात बदल दी—"मैं यही सोच रहा था कि संसार में यदि कोई ऐसा है, जिसे सब चाहते हैं, तो वह विमला है।"

"मेरा भी यही विचार है। मैं उसको बचपन से जानती हूँ। कभी भी उसने अपनी ज़ुबान से अपशब्द नहीं निकाला। क्रोध करना तो वह जानती ही नहीं, पर तुम ने ऐसा अजीब सवाल क्यों पूछा ?"

"मैं उसीके बारे में विचार कर रहा था।" कोमल ने बहका बहका सा उत्तर दिया—"जब वह आई, तो इतनी स्वस्थ तथा सुन्दर थी। किसीको स्वप्न में भी विचार न था कि वह इतनी जल्दी मर जायगी ! उसकी दशा में कितना परिवर्तन हो गया है ! मेरी सारी प्रसन्नता विमला में केन्द्रित है। कमला ! तुम मेरी दशा का अनुभव अभी नहीं कर सकोगी। जब तुम भी किसी से प्रेम करने लगोगी तब समझोगी यह दुःख जो मुझे इस समय हो रहा है।"

एक क्षण के लिये कमला की आँखें उस पर केन्द्रित हो गईं। यदि उस दृष्टि को कोमल देखता, तो पता चल जाता कि कमला किसी को प्रेम करती है या नहीं। पर वह तो एकटक विमला के कमरे की खिड़की की तरफ़ देख रहा था। विमला का ध्यान आते ही उसके सजल नयनों से अश्रुधार बह निकली।

कमला ने उसके कंधे पर हाथ रख दिया—"कोमल, इतने कायर न बनो, इतने उदास न होओ, तुमसे तुम्हारा दुःख नहीं देखा जाता !"

कोमल इतना दुःखी था कि इस कोमल वाणी ने उसके हृदय में स्थान कर लिया।

"कमला मुझसे विमला का वियोग न सहा जायगा। यदि वह मर गई, तो क्या होगा ?"

कमला के हृदय में प्रेम तथा घृणा में संघर्ष हो रहा था। उस संघर्ष के कुछ चिह्न चेहरे पर भी दृष्टिगोचर हुये। पर केवल कुछ क्षणों के लिये।

"तो क्या तुम्हें विमला इतनी प्यारी है !"

"हाँ, यदि वह मर गई, तो संसार मेरे लिये एक मरुभूमि के समान हो जायेगा। आह, कमला ! विमला की मृत्यु का विचार आते ही मैं कातर हो जाता हूँ, पागल-सा हो जाता हूँ।"

उसकी समझ में नहीं आया कि क्यों कमला एकाएक जाने को तैयार हो गई, और फिर क्यों रुक गई।

"कोमल, मान लो कि वह हो जाय, जो होना न चाहिये, तब भी तुम्हें इतना निराश, इतना कातर न होना चाहिये। यह संसार है, बाद में कदाचित् तुम्हें कोई ऐसी मिल जाय, जो तुम्हें विमला से भी ज्यादा प्रेम करने लगे और तुम उसको।"

"नहीं, नहीं, कमला, यह सम्भव नहीं। संसार भर की सुन्दरता, गुण, सादगी, मेरे लिये दूसरी विमला नहीं बना सकती ! और मुझे आये कितनी देर हो गई ! मुझे चलना चाहिये, क्षमा करना कमला !" कोमल चला गया कमला को अकेली छोड़ कर। उसके जाते ही कमला अपने को न सँभाल सकी। घास पर गिर कर फूट-फूट कर रोने लगी—"आह, मेरा प्रेम, घायल, व्यथित, तिरस्कृत प्रेम ! वह कभी भी मुझसे प्रेम नहीं करेगा, और एक मैं हूँ कि उसके लिये अपना जीवन तक उत्सर्ग करने को तैयार हूँ ! आह, कोमल ! तुम कितने कठोर हो, कितने निर्दय हो !"...रोते-रोते हिचकियाँ बँध गईं। फिर हिचकियाँ बन्द हो गईं—और दूसरे भाव हृदय में उठने लगे।

अमावस्या की रात्रि थी। आकाश में बादल छाये हुये थे। घोर अन्धकार था। सारे राजमहल में सन्नाटा था। यदि सन्नाटे को तोड़ती थी, तो केवल घन्टे-घन्टे भर बाद घड़ी। सभी सो रहे थे, चारों तरफ़ निस्तब्धता का राज्य था। कोमल अपनी चारपाई पर पड़ा घन्टे की आवाज़ पर आवाज़ गिन रहा था—ग्यारह, बारह, एक, दो ! उसकी आँखों से नींद उड़ गई थी। उसका हृदय तो

विमला के पास था, सारे विचार उसी पर केन्द्रित थे। विमला मृत्यु के मुख में है, यही विचार उसे उद्विग्न किये था।

उसे भ्रम हुआ कि कोई दबे पैरों बड़ी सावधानी से आ रहा है। पर उसने उसे केवल अपना भ्रम समझ कर टाल दिया।

एकाएक उसके मस्तिष्क में बिजली सी कौंधी—'ज़हर देने वाला कहीं न हो'' और वह अपने भ्रम को मिटाने के लिये चारपाई से उठा। अत्यन्त सावधानी से दरवाज़ा खोला, और बाहर बरामदे में आया। और उसे दूर पर बरामदे पर बिछे हुये फ़र्श के ऊपर कोई छाया-मूर्ति जाती-सी दिखाई पड़ी। वह भी चुपचाप उसके पीछे लग गया। छाया मूर्ति दबे पैरों ज़ीने से नीचे उतरी और विमला के कमरे की तरफ़ चली। कोमल ने भी उसीका अनुसरण किया। विमला के कमरे के दरवाजे पर आ कर वह मूर्ति रुक गई। कोमल भी रुक गया। उसका उत्तेजित हृदय और भी तेज़ी से धड़कने लगा।

बड़ी ही सावधानी से, धीरे से दरवाज़ा खुला, और वह छाया-मूर्ति अन्दर प्रविष्ट हुई। दरवाज़ा खुला रह गया था। कोमल भी आ कर चुपचाप पर्दे की आड़ में छिप गया, जिससे वह उस मूर्ति पर नज़र रख सके।

विमला चारपाई पर पड़ी सो रही थी। एक किनारे एक छोटी सी मेज़ पर दवाई की शीशी तथा पथ्य की वस्तुयें रखी थीं, तथा उसी पर एक शीशे का लैम्प भी धुँधला सा प्रकाश दे रहा था।

कोकिला देवी की चारपाई ख़ाली थी। कमरे के बाक़ी भाग में अँधेरा था, यह सब कोमल ने एक ही दृष्टि में देख लिया।

उस मूर्ति ने एक बार इधर उधर देखा, फिर विमला के समीप गई, फिर इधर उधर देखा, तथा झुक कर विमला के कपोलों पर एक हलका-सा चुम्बन अंकित कर दिया। विमला बेचारी बेहोशी की नींद सो रही थी, उसे क्या पता कि कोई अपना प्रेम प्रदर्शित कर रहा है कि वह मूर्ति एकटक उसकी तरफ़ देखती रही, और फिर उस मेज़ की तरफ़ बढ़ी, जिस पर की दवा की शीशी रखी थी। लैम्प का धुँधला-सा प्रकाश उस पर पड़ा। कोमल ने देखा कि सिर से पैर तक ढँका हुआ है, केवल दो छेदों से दो आँखें चमक रही हैं। उस मूर्ति ने दवा की शीशी उठा ली, और अपने कपड़ों में से एक छोटी सी शीशी निकाली। कोमल ने स्पष्ट देखा कि उसने दवा वाली शीशी का कार्क खोला, तथा उस छोटी शीशी का भी। शीशी फिर रख दी गई। छोटी शीशी भी बन्द कर ली गई। कुछ क्षण वह मूर्ति खड़ी सोचती रही, फिर विमला की तरफ़ मुड़ी। कुछ क्षण तक उसे निहारती रही, फिर मेज़ की तरफ़ बढ़ी, और इस बार उस

छोटी शीशी में से उसने बूँद-बूँद कर के कुछ दवा शीशी में डालना शुरू किया। दवा की शीशी को हिला कर उसने मेज़ पर रख दिया, और वह छोटी शीशी हाथ में ही रही।

एकाएक शेर की तरह तड़प कर कोमल कूदा। अँधेरे में उसके पैरों से किसीको ठोकर भी लगी, पर उसने उसकी परवाह न करके उस मूर्ति का वह हाथ एक हाथ से जा पकड़ा, जिसमें शीशी थी और दूसरे हाथ से उसका गला। हड़बड़ा कर मूर्ति पीछे हटी। मेज़ को कुछ धक्का लगा। लैम्प ज़मीन पर गिर कर चकनाचूर हो गया। कमरे में अँधेरा छा गया।

कोमल के पैरों से जिसे ठोकर लगी थी, वह कोकिला देवी थीं। बेचारी विमला की चारपाई के पास बैठी-बैठी थक कर निद्रा के वशीभूत हो ज़मीन पर ही लुढ़क गई थीं। ज़मीन पर अँधेरा था ही, इसीसे कोमल उन्हें न देख सका था। ठोकर से तो वह घबरा कर जग ही गई थीं, पर लैम्प के गिरने से और भी घबराहट बढ़ गई। 'हो न हो चोर है, क्योंकि सोते समय मैं किवाड़ें बन्द नहीं कर पाई थी। अवश्य कोई चोर घुसा होगा, इस कमरे को खुला पा कर इसी में घुस आया'—इतने विचार बिजली की भाँति एक साथ उनके मस्तिष्क में दौड़ गये, और वह उसी घबराहट में चिल्ला उठीं—"चोर-चोर!"

विमला के बगल-बगल डाक्टर कौशल किशोर तथा राजा राजेन्द्र के कमरे थे। सौभाग्यवश दोनों ही जग रहे थे, और दोनों के ही विचारों में विमला थी। कोकिला देवी की आवाज़ दोनों ही ने सुनी, और दोनों शीघ्रता से कमरे में घुस आये। दोनों ही के टार्च की रोशनी कमरे में पड़ने लगी।

"चाचाजी, चोर नहीं है," कोमल उत्तेजित स्वर में बोला। राजेन्द्र की टार्च की रोशनी उस पर पड़ी, फिर उस मूर्ति पर, जिसके मुँह पर से आवरण हट गया था।

"कौन, कमला! यहाँ क्यों? कोमल क्या बात है—?" राजेन्द्र ने पूछा।

कोमल ने उनको कुछ भी उत्तर न दिया। "डाक्टर साहब, इसके हाथ से इस शीशी को ले लीजिये, और बतलाइये कि क्या है।"

डाक्टर किशोर ने शीशी ले ली।

"बताइये डाक्टर साहब, क्या है?"

और डाक्टर ने उस ज़हर का नाम लिया। अज्ञान से अज्ञान पुरुष भी उसके गुण को जानता है कि वह प्राणघातक है।

"पर इस सब के क्या माने हैं कोमल? तुम यहाँ क्यों हो कमला? तुम

क्या कर रही हो ? कोमल तुम ने क्यों कमला का हाथ इस तरह से पकड़ रखा है ?"

विमला इस शोर-गुल से अकस्मात् जग पड़ी। उसके कोमल, बीमार तथा कमजोर दिमाग़ में कुछ भी समझ में न आया। कोकिला देवी अचानक ही मूर्छित हो कर गिर पड़ीं।

"श्रीमान्," डाक्टर किशोर बोले—"यदि मेरा अनुमान सत्य है, तो आप कृपया अपने कमरे में चले जाइये। यहाँ रोगियों पर प्रभाव अच्छा न पड़ेगा। मैं यहाँ श्रीमती जी की देख-भाल करता हूँ।"

राजा राजेन्द्र प्रताप अपने कमरे को चल दिये। उनके पीछे-पीछे कोमल कमला का हाथ पकड़े चला गया। कमरे में पहुँच कर राजेन्द्र ने लैम्प की बत्ती तेज़ की। कोमल ने कमला का हाथ छोड़ दिया।

कोमल बोला—"आप कारण जानने के लिये व्यग्र थे। सुनिये, कारण केवल यह है कि कमला संसार भर की स्त्रियों से पतित है, कपटी है, दुष्टा है..."

"ख़ामोश कोमल ! तुम को मैं बेटे की तरह मानता हूँ, पर इसका अर्थ यह नहीं कि तुम मेरी ही पुत्री के प्रति ऐसे शब्द व्यवहार में लाओ ! मैं तुम्हें चेतावनी देता हूँ कि अगर एक भी ऐसा शब्द मुँह से निकला तो..."

"मेरी मृत्यु भी इसका अपराध कम नहीं कर सकती ! धैर्य धारण कीजिये चाचाजी ! मैं ने आप से पहिले कुछ भी नहीं बताया था, क्योंकि उस समय इस भेद को गुप्त रहने में ही भलाई थी। क्या आपको मालूम है कि विमला को क्या बीमारी है ? किस बीमारी से वह पीड़ित है ? क्यों वह घुली जा रही है ?"

"नहीं, पर विमला की बीमारी का इससे क्या सम्बन्ध ?"

"सम्बन्ध है। उसको धीरे-धीरे ज़हर दिया जा रहा है, और वह ज़हर देने वाली है, यह !"

"तुम झूठ बोलते हो, क्या तुम शपथपूर्वक यह कहते हो ?"

"जी। डाक्टर वर्मा को सन्देह हुआ, पर उन्हें विश्वास न हुआ कि विमला को ज़हर दिया जा रहा है। इसीसे उन्होंने डाक्टर किशोर को बुलवाया। उनकी भी यही सम्मति हुई। दोनों असमंजस में पड़े कि कौन ज़हर दे रहा है, और क्यों ? इसीलिये वे यहाँ ठहरे। इसीलिये उन्होंने मेरी सहायता ली। मेरा दिमाग़ चकरा गया कि यह काम मैं कैसे कर सकूँगा। पर ईश्वर ने मेरी मदद

की। आज दूसरी बार मैं ने किसीके दबे पैरों चलने की आहट पाई। एक रात और भी ऐसा हुआ, पर मैं ने अपना भ्रम समझ कर टाल दिया था।

मैं बड़ी सावधानी से कमरे के बाहर आया। एक मूर्ति को अति सावधानी से दबे पैरों नीचे उतरते देखा। मैं ने अनुसरण किया। वह छाया-मूर्ति विमला के कमरे में प्रविष्ट हुई। मैं पर्दे की आड़ में छिप गया। मैं ने देखा मूर्ति ने विमला के कपोलों का चुम्बन किया, फिर वह मेज़ की तरफ़ बढ़ी। लैम्प के प्रकाश में देखा कि मूर्ति सिर से पैर तक ढँकी है, केवल देखने के लिये दो छिद्र हैं। मूर्ति ने दवा की शीशी खोली और एक छोटी-सी शीशी अपने कपड़ों से निकाली। पर उसने फिर शीशी रख दी, और विमला की तरफ़ बढ़ी, फिर मेज़ की तरफ़ लौटी, जैसे कुछ विचार कर रही हो। बाद में उसने उस छोटी-सी शीशी से दवा की शीशी में कुछ बूँदें टपकाईं। मैं ने दौड़ कर उसे पकड़ा। अँधेरे में ज़मीन पर कोकिला देवी लेटी थीं, मेरी ठोकर उनके लगी, और वह जग गईं। उस मूर्ति का मेज़ में धक्का लगा। लैम्प गिर कर चूर हो गया। अन्धकार हो गया। कोकिला देवी चिल्लाईं। आप आये। आप की टार्च की रोशनी उस मूर्ति पर पड़ी। आप ने आश्चर्य से कहा—'कौन? कमला, यहाँ?' उस शीशी में क्या था यह तो आप ने डाक्टर किशोर के मुँह से सुन ही लिया होगा।"

"मुझे विश्वास नहीं होता," राजेन्द्र ने कहा। वाणी उत्तेजित अवश्य थी, पर आँखों में क्रोध की झलक मिट चली थी—"कोमल, तुम पागल तो नहीं हो गये हो?"

"मैं पागल हो सकता हूँ, पर डाक्टर कौशल किशोर तो नहीं।"

राजेन्द्र की दशा दयनीय हो गई थी।

"कोमल, तुम मुझ पर दया करो। यह मेरी अकेली बच्ची है। कह दो, यह सब झूठ है। कमला रानी, तुम्हीं बोलो, बताओ, क्या यह सच है? बोलो, कमला, बोलो, यह क्यों किया? तुम्हीं बताओ कोमल।"

कमला कुछ न बोली।

"चाचाजी, सत्य का मुँह आप कहाँ तक बन्द करेंगे? मुझे भी यह असत्य ही लगता, यदि मैं ने स्वयं न देखा होता। पर ऐसा इसने किया क्यों? यह मेरी भी समझ में नहीं आता। यह और विमला बहिनों की तरह रहीं, कभी भी विमला ने इसको हानि नहीं पहुँचाई। फिर ऐसा क्यों किया, यह, मैं नहीं बता सकता चाचाजी, केवल यह जानता हूँ कि इसने ऐसा किया।"

किसी के पैरों की आहट हुई। कोमल ने देखा—डरी-सी सहमी [illegible]-सी कोकिला [illegible] आ रही हैं। चेहरे का रंग सफ़ेद हो गया

कोमल से पूछा—"कोमल बाबू! यह क्या मामला है? विमला मूर्छित हो गई है। कमला ने क्या किया?" उनकी आवाज़ भी काँप रही थी। कोई उत्तर न पा कर वह कमला की तरफ़ मुड़ीं—"बेटी, बताओ, तुम ने क्या किया है?" और जब वह चुप रही तो राजेन्द्र से बोलीं—'श्रीमान्, आप ही बताइये, मेरी कमला ने क्या किया है?"

कोमल को कोकिला देवी के व्यवहार पर आश्चर्य हो रहा था कि कमला के लिये वह इतनी व्यग्र क्यों हैं?

"मैं केवल इतना ही बता सकता हूँ कि कोमल ने कमला पर विमला को ज़हर देने का दोषारोपण किया है। आप ही बताइये कोकिला देवी, क्या यह सच हो सकता है? क्या कमला-जैसी देवी ऐसा नीच तथा जघन्य कर्म कर सकती है? और उसको भी तो देखो, चुपचाप बैठी है, बोलती तक नहीं, जैसे गूँगी हो गई है!"

"कमला ने विमला को ज़हर दिया! नहीं, यह सम्भव नहीं,..." कोकिला देवी कहते कहते रुक गईं। उनके मस्तिष्क में चल-चित्र की भाँति पिछली कुछ घटनायें फिर गईं। उन्हें स्मरण हो आया कि एक दिन रात में जब उनकी आँख खुल गई थी; तो उन्होंने कमला को खड़े देखा था। उसके हाथ में दवा की शीशी थी। और जब उन्होंने कमला से उस समय आने का कारण पूछा था, तो उसने उत्तर दिया था कि नींद नहीं आ रही थी, तबियत घबरा रही थी, इसी से विमला को देखने चली आई।

"कमला—बोलती क्यों नहीं?" राजेन्द्र ने कुछ क्रोधित हो कर पूछा—"क्या वास्तव में तुम ने ऐसा जघन्य कार्य किया है। क्या तुम ने विमला की दवा में ज़हर मिलाया है?"

कमला अब तक बैठी कुछ सोच रही थी। यह प्रतीत हुआ कि उसने अपने विचार स्थिर कर लिये, क्योंकि वह बोली—"मैं अस्वीकार कर देती, किन्तु इससे लाभ क्या? डाक्टर किशोर, दवा की शीशी, यह छोटी शीशी—सभी मेरे विरुद्ध साक्षी हैं।"

राजेन्द्र इस धक्के को न सँभाल सके। कातर हो कर कुरसी पर बैठ गये। कमला कहती गई—"मुझे प्रसन्नता है कि विमला बच जायेगी, पर मुझे उसके जीवित रहने का दुख भी है। मैं उससे प्रेम करती थी और घृणा भी।"

"कमला, क्या तुम वास्तव में स्त्री हो?" राजेन्द्र ने कहा—"या एक ख़ूब-सूरत पिशाचिनी!"

"जो आप समझें। दोनों का सम्मिश्रण...।"

"यह तुम कह रही हो ? क्या ये वास्तव में तुम्हारे शब्द हैं ? नहीं, नहीं, तुम्हारे अन्तःकरण के शब्द नहीं हैं, यद्यपि मैं यह जानता हूँ कि तुम हृदय-हीन हो...।"

"यदि हृदय-हीन होती, तो कितना अच्छा होता ! पर कठिनाई तो यही है कि मुझमें हृदय है, पर हाँ अन्यों से भिन्न।"

कोकिला देवी ने बड़े विनीत स्वर में कहा—"बेटी कमला, ऐसा न कहो। यह सुन कर मेरा हृदय फटा जा रहा है।"

"कमला, क्या यह बताओगी कि तुम ने ऐसा अपराध क्यों किया ?" कोमल ने पूछा।

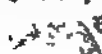
"नहीं, क्यों बताऊँ ? तुम इसे अपराध कहते हो, तो कहो।"

कोकिला देवी रूँधे स्वर में बोल उठीं—"मैं जानती हूँ।" पर किसीने सुना नहीं।

"इस बहाने से काम नहीं चल सकता," कोमल ने ज़रा कठोर हो कर कहा—"तुम नीच हो, कपटी हो, दुष्टा हो। तुम मुस्कराती रहीं और वह पीड़ा सहती रही। तुम अपने इन अधरों से उसके कपोलों का, अधरों का चुम्बन करती रहीं, और अपने इन हाथों से उसके प्याले में ज़हर मिलाती रहीं। क्यों, बोलो यह छल क्यों ?"

"मुझे ख़ुशी है कि विमला बच गई, पर यदि अवसर मिले, तो मैं फिर ऐसा ही करूँगा।"

"ओह, हृदय-हीन ! पाषाण पिशाचिनी !"

कमलारानी तन कर खड़ी हो गई। आँखें जल उठीं ! "यह कह रहे हो तुम ? मेरा तिरस्कार कर रहे हो तुम ? मुझे झिड़क रहे हो तुम ? मेरा अपराध संसार पर प्रगट करने को तुले हुये हो तुम ? तुम, जिसके लिये मैं ने यह सब किया, जिसके लिये हृदय में चुपचाप अनेकों पीड़ायें सहीं, सन्ताप सहे, जिसे पाने के लिये मैं इतनी बढ़ी ! तुम जानना चाहते हो कि मैंने विमला को क्यों ज़हर दिया ? मैं ने पहिले ही कहा था कि मेरा प्रेम भावुक प्रेम नहीं रहेगा जल की तरह शान्त न रहेगा, अग्नि के समान प्रचण्ड होगा। मुझे अब कोई लज्जा नहीं है, मैं कहती हूँ कि मैं तुम से प्रेम करती थी। तुम से जो मेरे प्रेम को सर्वदा ठुकराता आया; तुमसे, जिसने मुझे अपराधी प्रमाणित मैं ने तुम को वह प्रेम देना चाहा, जिसका तुम स्वप्न में भी अनुमान सकते।  स्वीकार कर लेते तो मेरी यह दशा न हुई

सुखी होती, पर अब सब व्यर्थ है,"—कमला के नयन सजल हो गये, वाणी अवरुद्ध हो गई—"मैं सुखी हो सकती थी...यदि यह अभागा प्रेम का रोग न लगता...और तुम ने मुझे दोनों प्रकार से अपमानित किया...तुम ने...जिसको मैं माँ-बराबर समझती थी...तुमने...!" आवेग वह सिसक सिसक कर रोने लगी।

कोमल का हृदय द्रवित हो गया।

"कमला ! अब भी समय है, तुम पश्चात्ताप कर रही हो। माताजी, कोकिला देवी और विमला क्षमा कर देंगे। तुम अब भी सुखी बन सकती हो। विमला अब नहीं, मुझे और कुछ न चाहिये।"

पश्चात्ताप...क्षमा.. सुखी...विमला और कोमल...आँखों के आँसू सूख गये, सिसकियाँ बन्द हो गई। हृदय में प्रतिहिंसा और घृणा के भाव प्रबल हो गये। "नहीं, नहीं, मैं पश्चात्ताप नहीं करती, क्षमा नहीं चाहती। दुखी जीवन नहीं बिताना चाहती। यदि नीच हूँ तो नीच ही रहना पसन्द करती हूँ।"

"कमला, तुम मेरे हृदय को बेध रही हो!" राजेन्द्र ने कातर होकर कहा।

"बिधे हुये हृदय से और क्या शब्द निकलेंगे !" मैं देवी थी हो गई ! पिशाचिनी की अब और अधिक बन गई।"

कोकिला देवी ने कुछ गम्भीर हो कर कहा—"कमला, क्या व्यर्थ की बातें बक रही हो ! मेरे सामने तुम ऐसा नहीं कह सकतीं। झुकके देखो, परमात्मा से क्षमा माँगो।"

कमला ने गर्व तथा घृणा मिश्रित स्वर में कहा—"आप को बीच में बोलने का क्या अधिकार ?"

"कैसे नहीं अधिकार है ? पूरा अधिकार है।"

"देखो कोकिला देवी ! तुम ने मुझे पाला पोसा, इसके माने यह नहीं कि तुम मुझ पर हुक्म चलाओ। तुम यहाँ आई—अपने साथ अपनी पुत्री को—वह पुत्री जो देखने में भोली भाली पर मेरे भाग का काँटा बन गई, मेरे प्रेम के रास्ते में रोड़ा अटका दिया—आई। तुम ने उसकी सहायता की और अब मुझे शिक्षा देने चली हो !"

"मैं ने तुम को अपनी पुत्री की तरह पाला ?"

"आप-जैसी की पुत्री बनने से तो मैं मर जाना उत्तम समझती हूँ।"

कोकिला देवी निरुत्तर हो गईं। कमला को यदि उनके हृदय का पता चल जाता, तो कदाचित् ऐसा न कहती!

राजेन्द्र के धैर्य का बाँध टूट गया—"परमात्मा, यदि मैं यह सब देखने और सुनने के लिये जीवित न रहता, तो कितना अच्छा होता! ओह! ऐसी सन्तान से तो निःसन्तान रहता, तो अच्छा होता! कोकिला देवी, मैं ने तो आप को एक भोली-भाली, सरल, निर्दोष बालिका सौंपी थी, पर आप ने मुझे क्या लौटाया—एक हृदय-हीन सुन्दर पिशाचिनी! मैं ने आप को एक बच्ची दी—आप ने मुझे खूनी लौटाया!"

"कमला!" कोमल ने आर्त्त स्वर में कहा—"कमला, तुम देख रही हो कि बाबाजी को कितना दुःख है, कितनी पीड़ा है! गर्व को छोड़ो पश्चात्ताप करो, हठ को छोड़ो, नम्रता ग्रहण करो, अब भी कुछ नहीं बिगड़ा है। बाबाजी से क्षमा माँग लो!"

"मुझसे ऐसा कहते हो, क्या उस पिता के लिये कहते हो, जिसने अपनी पुत्री की खबर तक न ली, बताओ, ऐ धर्मात्माओं!"

राजेन्द्र के मुँह से एक पीड़ा-भरी दबी-सी चीख निकल गई। कोकिला ने आगे बढ़ कर कमला का मुँह बन्द कर दिया। श्रीमान्, मुझे कुछ कहना है। पर पहले आप मुझे क्षमा प्रदान कर दें। मैं घुटनों पड़ कर, सिर झुका कर क्षमा की याचना करती हूँ। मुझे क्षमा कर दिजिये!" और वह गर्वीली महिला कोकिला देवी, जिन्होंने सर्वदा अपना मस्तक ऊँचा रखा, नतमस्तक हो गईं।

कोमल चकित था, राजेन्द्र चकित थे, कमला भी चकित थी। पर कोकिला देवी उसी तरह नतमस्तक रहीं। राजेन्द्र ने ऐसा न करने को भी कहा, मर फिर भी वह न उठीं—"पहिले आप कह दिजिये कि क्षमा कर दिया। दोष अक्षम्य है, फिर भी मैं क्षमा की भीख माँगती हूँ।"

राजेन्द्र ने उन्हें सान्त्वना दी, क्षमा करने का वचन दिया, तब वह उठीं कुरसी पर बैठी नहीं—खड़े-ही-खड़े कहना आरम्भ किया—"श्रीमान्, वास्तविक अपराधिनी मैं [illegible]। आप ने मेरा विश्वास किया, मैं ने आप को धोखा दिया। मेरी कृतघ्नता का फल मुझे मिल गया। श्रीमान्, वर्षों पहिले आप दुःख तथा उदासी-भरे मेरे पास आये थे। मुझ पर पूर्ण विश्वास करके मुझे

अपनी पुत्री सौंप गये। मैं इस योग्य न थी, फिर भी मैं ने उसका लालन-पालन किया, ठीक अपनी पुत्री की तरह। आप से मिलने के पूर्व मैं ग़रीबी का शिकार हो चुकी थी। ओह, मुझे कितना कड़ुआ लगा था वह दिन! आप ने कितनी उदारता से धन दिया! और हम लोग पूर्ववत् सुख से रहने लगे। यह आशा थी कि आप अपनी पुत्री को बुलायेंगे नहीं, और आप की पुत्री मेरे पास रहेगी। पर आप का पत्र आपकी पुत्री को बुलाने के लिये आया। मुझ पर वज्रपात हुआ। आप ने मुझे भी साथ साथ बुलाया था। आप का अर्थ था कि मैं इस घर को भी अपने घर के समान समझूँ, पर मेरे हृदय में तरह तरह के विचार आये—जैसे आप फिर दूसरी शादी कर लें, फिर . ? मैं जालच में फँस गई। मैं ने दोनों लड़कियों को साथ-साथ खेलते देखा, हृदय में विचार आया...क्यों न आप को पुत्री आप को दे दूँ?"

राजेन्द्र प्रताप ताज्जुब में भर गये। कोमल अति निकट आ गया। कमला ने अपनी शर्मीली तथा घृणा मिश्रित दृष्टि उनकी तरफ़ घुमा दी, पर वह बोलती गई—"क्यों यह विचार हृदय में उठा? कदाचित् बताना कठिन हो, पर यह विचार हृदय में अवश्य उठा। हृदय ने कहा कि यदि राजा साहब फिर से शादी कर लें, या उनकी दया दृष्टि तुम से फिर जाय, तो तुम उनकी पुत्री से कह सकोगी—'तुम मेरी पुत्री हो,' और फिर वह तुम्हें पुनः ग़रीबी के कष्ट से बचा देगी। यह मेरा अपराध था। पर ग़रीबी के भय ने मुझे मजबूर कर दिया। यह मेरा मूर्खतापूर्ण विचार था। पर उस समय इसके अतिरिक्त कोई उपाय भी न सूझा। श्रीमान्, आप का घर दाग़ी नहीं हुआ—हुआ मेरा। कमला आप की पुत्री नहीं—मेरी है। आप को सरल हृदया भोली-भाली पुत्री तो विमलारानी है!"

"पर आप को इस कपट से लाभ क्या हुआ?"—कोमल ने पूछा।

"कुछ भी नहीं। मैं सोचती हूँ कि ग़रीबी के भय ने मुझे पागल कर दिया था। मैं ने सोचा था इस तरह फिर मुझे किसी वस्तु की कमी न रहेगी, फिर से दाने-दाने को न तरसना पड़ेगा। मैं इस प्रलोभन में क्यों आई, स्वयं ही अब नहीं कह सकती। सम्भव था कि मैं आप से यह भी न कहती, पर नहीं, यह मेरे हृदय पर एक भार के समान था। कहती अवश्य, पर इस समय आप ने मेरी शिक्षा दीक्षा पर आरोप लगाया। श्रीमान्, आप का दुःख देख कर इसी समय मुझे हृदय का बोझ हलका कर देना पड़ा। इसका मुझे स्वप्न में भी आभास न था कि मेरी कोख से ऐसा कुल-कलङ्किनी पैदा होगी!"

"श्रीमतीजी, आप ने कह तो दिया, पर कहना आसान है, विश्वास दिलाना कठिन," कमला ने कहा।

"बेवकूफ़ लड़की! क्या यदि यह सत्य न होता, तो मैं कहने का साहस कर सकती थी? एक बार तो पाप कर चुकी, उसके लिये मेरी आत्मा अब तक धिक्कारती है, क्या फिर करती? तू सबूत चाहती है? बुलाऊँ अपनी बूढ़ी दासी को? बुलाऊँ उस डाक्टर को, जिसने तेरी जाँघ के फोड़े को चीरा था? समझ गई। अब नहीं बुलाना पड़ेगा, तुझे स्वयं विश्वास हो गया। मैं ही तेरी हत-भागिनी माँ हूँ। आह! तुम-जैसी की माँ बनने में कितनी पीड़ा हो रही है!"

"कोकिला देवी, क्या यह सच है?"—कोमल ने पूछा।

"हाँ, सच है कोमल, तुम्हें क्या अब भी विश्वास नहीं होता! दोनों में कितना अन्तर है, विमला ने कभी भी मुझे ज़रा-सा भी कष्ट नहीं दिया। वह हमेशा कोमल, विनीत, आज्ञाकारिणी, नम्र, सत्यवादी रही। एक मिनट को भी मुझे पीड़ा नहीं पहुँचाई। उसे अपनी पुत्री बनाये रहने में कितना सुख था! और कमला, सदा गर्वीली, हठी, जो काम मैं मना करूँ, उसीको करने वाली रही। प्रतिक्षण क्लेश पहुँचाती रही। ऐसी लड़की को कोई क्यों व्यर्थ में अपनी पुत्री बनावेगा!"

"कोमल बाबू, अब तो आप को और भी अधिक प्रसन्न होना चाहिये!" कमला ने ताने के ढंग पर कहा—"आप उस लड़की से, जिसे आप प्रेम करते हैं, विवाह तो कर ही रहे हैं, साथ-साथ राजा राजेन्द्र प्रताप की पुत्री से भी, प्रेम और धन का संयोग! मैं किसकी बेटी हूँ, इसकी अधिक मुझे चिन्ता नहीं, मेरा तो भविष्य अंधकारमय है ही।"

"श्रीमान्, आप अपने मुँह से एक शब्द भी नहीं बोले। क्या अब भी मुझे क्षमा नहीं किया? मैं सर्वदा अपने कुल कृत्य पर पश्चात्ताप करती रही, अन्दर-ही-अन्दर जलती रही। मेरी आत्मा को शान्ति नहीं मिलती थी।"

राजेन्द्र चुप रहे।

"श्रीमान्! मैं दुष्टा हूँ, पापिनी हूँ। पर क्या आप मुझे क्षमा नहीं करेंगे? मैं प्रलोभन में पड़ गई थी। दूसरे, मुझे कमला पर अत्यधिक प्रेम था। सोचा था कि इसका जीवन बन जायगा।"

राजेन्द्र फिर भी चुप रहे। कुछ विचार में पड़ गये। चेहरे की रंगत प्रतिक्षण बदलने लगी।

"श्रीमान् ! मैं आँचल पसार कर दया की भिक्षा माँगती हूँ। जब तक आप क्षमा नहीं कर देंगे, मुझे शान्ति नहीं मिलेगी। यदि मर जाऊँगी, तो भी आत्मा को शान्ति न मिलेगी।" कोकिला देवी फिर न बोल सकी, गला रुँध गया, आँसुओं की धारा बह निकली।

राजेन्द्र हृदय से निकले पश्चात्ताप तथा आत्म ग्लानि से भरे इन शब्दों से प्रभावित हो गये।

बोले—"कोकिला देवी, मैं सच्चे हृदय से क्षमा करता हूँ। परमात्मा को धन्यवाद है कि यह रहस्य उचित समय पर खुल गया। यद्यपि हम लोगों के बीच वह पूर्व का व्यवहार नहीं रह सकता, फिर भी मैं विश्वास दिलाता हूँ कि मेरे मुँह से उलाहना का एक शब्द भी न निकलेगा। आप ने ईर्ष्या के भय से ऐसा किया था, निश्चय जानिये, मैं इसका भी पूरा प्रबन्ध कर दूँगा।"

और फिर वह कमला के निकट गये।

"कमला, मैं तुम से भी एक शब्द नहीं कहूँगा। पर मेरी प्रार्थना है कि तुम भविष्य में भली प्रकार जीवन बिताना!"

उस गर्वीली लड़की पर कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ा। उसकी मुद्रा में लेश-मात्र भी कमी न आई।

"आप ने कभी मुझे हृदय से प्रेम नहीं किया, सर्वदा विमला ही को चाहते रहे।"

"फिर भी मैं ने तुम्हारा पूरा ख्याल रखा। हाँ, मुझे तुम से निराशा अवश्य हुई थी, क्योंकि तुम को हृदय हीन पाया था।"

"हृदय हीन! और मैं ने हृदय के ही कारण अपने को बर्बाद कर डाला!" और फिर उसने सब की तरफ देखते हुये अपने उसी स्वर में कहा—"पुण्य—अर्थात् विमला, जीती। पाप—अर्थात् मैं, हारी। पर एक प्रश्न पूछती हूँ, मैं ने अपना दोष स्वीकार कर लिया। मैं ने विमला को ज़हर दे देना चाहा, इस आशा से कि उसकी मृत्यु के बाद मैं कोमल को पा जाऊँगी। पर मेरी यह आशा निर्मूल साबित हुई। अब मैं यह जानना चाहती हूँ कि आप लोग क्या करेंगे? मेरा भविष्य अन्धकारमय हो गया है सर्वदा के लिये। यदि आप जेल भेजेंगे, तो सहर्ष जाऊँगी, न्यायालय में अपना अपराध स्वीकार कर लूँगी।"

"तुम ने मेरी पुत्री को ज़हर दे कर मारना चाहा था, पर मैं ने तुम को अपनी पुत्री की ही तरह समझा। मैं तुम को क्षमा करता हूँ," राजेन्द्र ने कहा—

"तुम आज़ाद हो। यदि तुम्हें पश्चात्ताप हुआ, और तुम सुमार्ग पर चलो, तो मुझे प्रसन्नता होगी।"

"तुम विमला की बहिन के समान थीं," कोमल ने कहा—"अतः मैं भी क्षमा करता हूँ।"

"यदि तुम मुझे अपना प्रेम देते, तो कितना अच्छा होता! माँ, तुम भी बोलो," कमला ने कहा—"तुम ने भी तो मुझे अपराधी ठहराया है!"

"मैं तुम्हें भगवान् पर छोड़ती हूँ!" काँपते स्वर में कोकिला देवी ने कहा।

"भगवान्! इस नाम की कोई वस्तु है भी, जो तुम ने मुझको उन पर छोड़ दिया!" कमला ने कहा—"मेरे लिये तो भगवान् भी मर गये हैं। मैं चली जाऊँगी, जहाँ आप कोई भी न देख सकें। मैं पश्चात्ताप कर सकती हूँ, पर करूँगी नहीं। अब आप में से कोई भी मेरे बारे में कुछ भी न सुनेगा।"

"कमला इतनी निराश न होओ। इतने पाप में न जाओ, परमात्मा से क्षमा माँग लो!" राजेन्द्र ने कहा—"तुम को मैं ने अपनी पुत्री की तरह रखा है। अब भी मेरे हृदय में तुम्हारे लिये स्थान है। पश्चात्ताप कर लो बेटी! परमात्मा से क्षमा माँग लो! अपनी दुःखी माँ को और न दुखाओ! यद्यपि तुम विमला से नहीं मिल सकोगी तथा यहाँ भी नहीं रह सकोगी, फिर भी मैं वादा करता हूँ कि मैं तुम्हारे लिये पर्याप्त साधन कर दूँगा—मकान, धन, ज़मींदारी। तुम्हारा यह कृत्य भी किसी पर प्रगट नहीं होने दूँगा। हम लोग डाक्टर किशोर से इसको भूल जाने की प्रार्थना करेंगे। मान जाओ, कमला! इतनी कठोर न बनो!"

"आप की दया के लिये धन्यवाद। यह सब मेरी तरफ़ से विमला को उपहार दे दीजियेगा। मैं जो चाहती हूँ वह नहीं मिला, न मिल सकने की आशा है। अतः पश्चात्ताप करने से क्या लाभ! मेरे हृदय में प्रतिहिंसा का भूत लग गया है, उसे भगाना कठिन है,"—कमला ने कहा। और पूर्व इसके कि कोई उसे रोक सके वह कमरे से तीर की तरह निकल गई।

डाक्टर कोमल किशोर को सब बातें सुन कर अधिक आश्चर्य नहीं हुआ। वह डाक्टर तो थे ही, साथ ही साथ मनोवैज्ञानिक भी थे। "राजा साहब, मुझे यह सुन कर अधिक आश्चर्य नहीं हुआ। जिस समय मैं ने उसे देखा था उसी

समय मैं ने यह समझ लिया था कि यह जो कहेगी उसे पूरा करके ही दम लेगी। यदि आप यह कहते कि उसने सबसे कठिन तथा साहसपूर्ण कार्य किया है, तो मुझे आश्चर्य न होता, न यहाँ सुन कर हुआ। पर दुःख है कि उसने यह मार्ग चुना। अब आप के क्या विचार हैं?"—डाक्टर ने पूछा।

राजेन्द्र बोले—"मेरा इरादा है कि कोकिला देवी को कुछ मासिक बाँध दूँ, और उनसे काश्मीर लौट जाने को कहूँ। यह लड़की अब भी सुधर सकती है।"

"मुझे सन्देह है। जब इस प्रकृति की स्त्री बिगड़ जाती हैं, तो केवल एक प्रतिशत उसके सुधरने की आशा होती है।"

"यदि यह सुधर जाये, तो मुझे सुख मिलेगा। मैं वास्तव में इससे स्नेह करने लगा था। पर डाक्टर साहब, मुझे भी यही आश्चर्य है कि यह विचार पहिले ही मेरे हृदय में क्यों न उठा। सर्वदा मैं यही सोचा करता था कि विमला मेरी स्त्री से कितनी मिलती-जुलती है—रंग में उतनी नहीं, पर गुणों में। इसके लिये दोषी स्वयं मैं हूँ।"

"क्यों श्रीमान्?"

"इसलिये कि मैं ने इतने सालों तक उसकी खोज ख़बर न ली। कभी भी देखने नहीं गया।"

"इन बातों को छोड़िये।"

"डाक्टर साहब, एक प्रार्थना है। इसको गुप्त रखियेगा—आहत वाली घटना को।"

"मैं आप की मर्ज़ी के ख़िलाफ़ नहीं जा सकता। और विमला के बारे में...!"

"मैं उसके साथ पूर्ण न्याय करूँगा, उससे कोकिला देवी के कपट का हाल तो बताना ही पड़ेगा, पर मैं नाम न बताऊँगा। मैं इसको समाचार-पत्रों में निकलवा दूँगा। बदनामी, छींटाकशी, जो होगी, सही जायगी। कुछ दिनों बाद सब मामला शान्त पड़ जायेगा। पर विमला से क्या बात बताना उचित होगा? क्या अब भी वह ख़तरे में है?"

"नहीं, ख़तरे में नहीं है। ख़तरे का कारण ही न रहा, फिर ख़तरा कैसे रहेगा! हाँ, पूर्ण स्वस्थ होने में कुछ समय लगेगा। फिर भी देख-भाल की आवश्यकता पड़ेगी। आप विमला से केवल थोड़ा सा भाग बताइये। और यह भी अभी नहीं, बाद में। यह तो उससे बताया ही जायगा कि वह आप की पुत्री है, पर यदि आप के स्थान पर मैं होता, तो मैं कभी भी यह न कहता कि

उस स्त्री ने, जिसको वह बहिन मानती थी, उसी ने उसको ज़हर देने की कोशिश की। श्रीमान् यदि आप मेरी राय मानें, तो उसको कभी भी यह न जानने दें।"

"डाक्टर साहब, आप की सलाह के लिये धन्यवाद! मैं इसी सम्मति पर कार्य करूँगा। आज से आप मुझे अपना दोस्त समझें।"

ये बातें राजेन्द्र प्रतापसिंह तथा डाक्टर कौशल किशोर में प्रातःकाल हुईं। डाक्टर वर्मा को कुछ भी नहीं बताया गया।

डाक्टर कौशल किशोर तथा डाक्टर वर्मा दोनों जाने की तैयारी करने लगे। जाने के पूर्व डाक्टर किशोर एक बार फिर विमला के कमरे में गये। उसे देख कर बोले—"अब तो तुम्हारी तबीयत अच्छी है?"

"हाँ," मुस्कराने की चेष्टा करते हुये विमला ने उत्तर दिया।

"अब भी तुम्हारा भय मौजूद है?"

"नहीं, कदाचित् इसलिये कि मैं अब अच्छी हूँ।"

"अब मेरी तो ज़रूरत रही नहीं, अब विदा दो।"

और फिर डाक्टर किशोर चले गये। उन दोनों को फाटक तक राजेन्द्र स्वयं पहुँचाने गये। लौटते समय उन्होंने कमला के पास जाने का निश्चय किया—उससे जाने की तैयारी करने को कहने के लिये, क्योंकि अब उन्हें विमला तथा कमला का एक ही स्थान में रहना स्वीकार न था। पर कमरे में कहीं भी कमला न दिखाई पड़ी। मेज़ पर एक छोटा-सा कागज़ लिखा रखा था। राजेन्द्र ने पढ़ा—"मुझे खोजने की चेष्टा न कीजियेगा, क्योंकि व्यर्थ होगा। यदि मैं प्रेम में सफल होती, तो सुखी रह सकती थी, पर वह सम्भव नहीं। पुरुष अधिक निराशा में, पीड़ा में मदिरा पीना प्रारम्भ कर देते हैं, मैं भी कुछ करूँगी। मेरा अन्तिम प्रणाम स्वीकार कीजिये!...'

राजेन्द्र की आँखों में आँसू आ गये। कमला के प्रति क्रोध था, पर उनका हृदय द्रवित हो गया उस लड़की के लिये, जिसने जान-बूझ कर कुमार्ग पर चलना स्वीकार किया है।

कोकिला देवी वहाँ से जाना नहीं चाहती थीं, और राजेन्द्र उनको रखना नहीं चाहते थे, पर अन्त में कोकिला देवी के बहुत हठ करने पर उन्होंने यह स्वीकार कर लिया कि जब तक विमला पूर्ण रूप से स्वस्थ न हो जाय, वह रहें तथा बाद में वह यदा-कदा विमला को देखने आ सकती हैं।

उसी दिन राजा साहब ने सब दास दासियों को बुला कर कह दिया कि एक भारी भूल हो गई थी। उनकी पुत्री कमला नहीं, वास्तव में विमला रानी है।

राजेन्द्र ने कमला की खोज करवाई, पर सब व्यर्थ। कदाचित् कुछ और उसके बारे में पता लगे, इसी विचार से वह कमरे का ध्यान से निरीक्षण करने लगे, और उन्हें देख कर अत्यन्त आश्चर्य हुआ कि सभी वस्तुयें—कीमती साड़ियाँ, बहुमूल्य आभूषण, मणि माणिक आदि, सभी चीज़ें करीने से रखी हैं। एक भी चीज़ कमला नहीं ले गई।

पर कुछ दिनों के बाद पता चला कि एक चीज़ वह ले गई है। इन सब बहुमूल्य वस्तुओं में उसे एक चीज़ पसन्द आई थी, और उसे वह सब से अधिक बहुमूल्य समझ कर ले गई। और वह वस्तु थी—कोमल का एक छोटा चित्र, उस पुरुष का चित्र, जिससे उसने प्रेम किया और जिसने उसे ठुकराया। केवल उसी की तस्वीर ले गई।

इस घटना के कुछ दिनों बाद, एक दिन विमला बोली—"माँ, कमला बहिन मेरे पास नहीं आती। मैं इतनी बार तुम से पूछ चुकी हूँ।"
कोकिला देवी सिरहाने बैठी बालों में तेल मल रही थीं, वह कुछ न बोलीं।

"माँ, वह मुझसे नाराज़ तो नहीं है? मैं ने तो ऐसा कोई अपराध नहीं किया।"

कोकिला देवी चुप रहीं, अपना काम करती रहीं।

"माँ, मैं निरन्तर स्वप्न में उसे देखा करती हूँ कि वह मुझसे कह रही है—'मुझे अत्यन्त दुःख है,' पर किस बात का, यही मुझे आश्चर्य होता है।"

'मेरी बच्ची, अब तुम कैसी हो?"

"अब तो अच्छी हो चली हूँ माँ!"

"जब तुम बीमार थीं, तो कमला काश्मीर चली गई। वहाँ वह कुछ समय तक रहेगी।"

"माँ! वह जाते समय मुझसे मिलने तक भी न आई।"

"बेटी डाक्टरों ने मना कर दिया था। तुम इतनी बीमार जो थीं।"

"जब मैं इतनी बीमार थी, तो वह मुझे छोड़ कर क्यों चली गईं ? मैं तो कभी भी न जाती ।"

कोकिला देवी क्या उत्तर देतीं । चुप रहीं ।

"और माँ, अब उसे मालूम हो गया है कि मैं अच्छी हो रही हूँ ?"

"हाँ, अवश्य !"

"माँ, मैं तो इस योग्य हो गई हूँ कि उसे पत्र लिख सकूँ ।"

माँ कुछ न बोलीं । केवल मन में सोचने लगीं—'कुछ दिनों बाद अपने आप ही सारी घटना इसे मालूम हो जायगी । अभी नहीं, अभी इस योग्य नहीं हुई है ।'

इसी तरह और कई दिन बीते । एक दिन वह आ ही गया जब उसने चारपाई छोड़ दी, और वह पहिली बार कमरे से बाहर निकली । प्रातःकाल का समय था । सूर्य देवता उदय हो रहे थे । विमला ऊपर वाले कमरे में एक कुर्सी पर बैठी प्रकृति की शोभा निरख रही थी । इसी समय राजा राजेन्द्र प्रताप ने कमरे में प्रवेश किया । उनको देखते ही विमला खड़ी हो गई । "बाबाजी, मैं आप को देख कर कितनी खुश हुई, नहीं बता सकती, आप मुझ पर कितने दयालु रहे, इसके लिये कैसे धन्यवाद दूँ !"

उसको फिर कुर्सी पर बिठाते हुये राजेन्द्र बोले—"बेटी ! मैं ने तो केवल अपना कर्त्तव्य पूरा किया । इसमें दया कैसी ? आज तुम्हें, यह देख कर मुझे कितना आनन्द आ रहा है ! विमला ! मैं तुम से एक बात कहना चाह रहा हूँ ।"

"कहिये बाबाजी, कहिये, क्या कोई खुश-ख़बरी है ?"

"हाँ ।"

"अवश्य ही कमला के बारे में होगी !"

"नहीं, तुम्हारे बारे में ।" और राजेन्द्र ने सारी कथा कह दी । केवल कमला के अपराध के बारे में कुछ नहीं कहा । विमला को विश्वास नहीं हुआ ।

विमला बोली—"मैं ने तो कभी भी माँ को झूठ बोलते नहीं सुना । माँ ने यह कपट किया, यह सम्भव नहीं । पिताजी, ('ओह !' यह शब्द अपने आप हृदय से उठा था) क्या आप को मालूम है, मैं कभी-कभी सोचा करती थी कि जैसे मैं ने आप को कहीं देखा था । एक धुँधली सी स्मृति भी हृदय में आती थी कि जैसे मैं कहीं फूलों से लदी हुई एक गुड़िया लिये आप के साथ-साथ कहीं गई थी ।"

"तो तुम ने यह कभी भी मुझसे कहा क्यों नहीं ?"

"मुझे भय था कि आप नाराज़ न हो जायें। मुझ पर हँसें नहीं, मुझे मन में अपने विचित्र रहस्य बनाने में डर लगा करता था।"

"कितना अच्छा होता, यदि तुम मुझे बता देतीं, मेरी प्यारी बच्ची! पर कोकिला जैसी सीधी कुलीन उच्च विचारों की स्त्री ने ऐसा क्यों किया यही समझ में नहीं आता।"

"मैं क्या कहती हूँ पिताजी! मुझे पूरा विश्वास था कि मैं उन्हीं की पुत्री हूँ। फिर भी उनका ज्यादा प्रेम कमला पर ही जाता था। वह कमला को बहुत चाहती थीं, इसी से उसको सुखी रखने के लिये ही ऐसा किया होगा। उनको यही सन्तोष होगा कि कमला एक अच्छी जगह पहुँच जायगी।"

"यही मेरा भी विचार है। पर इस पर उनको पश्चात्ताप भी अधिक हुआ, आखिर में वह महान थीं। इस संसार में सभी से पाप हो जाते हैं—किसी से कम, किसी से ज्यादा। पर जो अपने पाप को स्वयं स्वीकार कर ले, उस पर पश्चात्ताप कर ले, उसके दोष की मात्रा कम हो जाती है।"

"आप कितने अच्छे हैं पिताजी!"

"मेरी बेटी!"

पिता पुत्री का मिलन अपूर्व था!

"पिताजी, कमला बहिन को तो अधिक दुःख नहीं हुआ? मेरी इच्छा है कि आप अपने धन की अधिकारिणी उसी को बनाये रखें। मैं तो केवल आप के स्नेह से सन्तुष्ट रहूँगी।"

"यह कैसे हो सकता है बेटी! अधिकारी को ही तो अधिकार मिलेगा।"

"अच्छा तो आप उसको काफी धन दे दीजियेगा। आप भी तो उससे कितना स्नेह रखते थे। मेरी तो वह बहिन ही है। वह कब आयेगी? मैं उसे बताने के लिये उतावली हो रही हूँ कि इस घटना से मेरे व्यवहार में कुछ भी अन्तर न पड़ेगा। उसे यह भी विश्वास दिलाना चाहती हूँ कि मैं अब भी उसकी पहिले वाली ही बहिन हूँ।"

कितना विशाल है इसका हृदय! राजेन्द्र ने सोचा—ठीक अपनी माँ की तरह और वह बोले—"बेटी, विमला रानी! वह अब नहीं आयेगी। कभी नहीं वह स्वयं ही चली गई।"

"नाराज़ हो गई होगी इसीसे।"

राजेन्द्र ने कुछ भी नहीं कहा—आगे भी फिर कभी नहीं कहेंगे। और विमला सर्वदा भ्रम ही में रही, और किसीने उसके भ्रम को दूर नहीं किया।

समाचार-पत्रों में यह समाचार भिजवा ही दिया गया था। इसे पढ़ कर लोगों में एक तहलका मच गया। ऐसी घटनायें उपन्यासों में तो अवश्य पढ़ी थीं, पर वास्तविक जीवन में न देखीं, न सुनी थीं। इसी बीच में कोकिला देवी चली गईं। कितने ही सम्वाददाता राजेन्द्र के पास आये। उनसे मिलने पर राजेन्द्र ने सब से यही कह दिया कि दोनों महिलायें यहाँ नहीं है, चली गईं।

इस समाचार को पढ़ने वालों में स्वरूपनगर का राजकुमार उत्तम भी था। वह भी भागा हुआ आया। उसकी विक्षिप्त अवस्था को देख कर राजेन्द्र को तरस आया।

"वह कहाँ गई? मैं उसे खोजूँगा, और जब तक उसके चरणों में अपना नाम, राज्य तथा प्रेम न अर्पण कर दूँगा, मुझे चैन न मिलेगा।"

"उत्तम! वह कहाँ गई मुझे भी नहीं मालूम। यह मैं तुम्हीं से बतला रहा हूँ, और किसी से भी नहीं कहा कि वह अपनी इच्छा ही से बिना मुझे बताये चली गई, और तब से मुझे कोई भी समाचार नहीं मिला।"

"वह इतनी गर्वीली तथा हठी थी ही। जब उसने अपनी माँ के कपट का हाल सुना होगा, तो फिर उसके गर्वीले हृदय ने यहाँ रहना स्वीकार न किया होगा।"

राजेन्द्र ने उसकी इस धारणा को काटना उचित न समझा।

"श्रीमान्! प्रेम अमर है, मैं उसे खोजूँगा, उसे अवश्य पाऊँगा।"...

उत्तम ने काफ़ी समय, काफी धन कमला की खोज में व्यय किया, पर व्यर्थ! अन्त में निराश हो गया। उसका विवाह बाद में हो गया, पर उसने एक ऐसी ही लड़की पसन्द की, जिसकी आकृति कमला से बहुत मिलती थी। किन्तु वह अपनी पत्नी को प्रेम अर्पित न कर सका, जो उसने कमला को किया था।

कोकिला देवी चली गई थीं। उनके गमन के समय का दृश्य अत्यन्त ही हृदय-विदारक था। उनका तथा विमला दोनों ही का बुरा हाल था! वह कुछ दिन तो काश्मीर में रहीं। पर कमला की याद ने उन्हें बेचैन कर रखा था। उन्होंने उसकी खोज में दिन-रात एक कर दिया—एक स्थान से दूसरे स्थान, फिर दूसरे से तीसरे। इसी तरह से घूमना शुरू कर दिया। पर कमला न मिली—न मिली! कोकिला देवी की निराशा दिन-प्रतिदिन बढ़ती गई। अन्त में उनका जर्जरित हृदय अधिक निराशा को न सँभाल सका, और वह कदाचित् कमला ही को खोजने उस लोक को चली गईं।...

विमला की शादी का दिन आ पहुँचा। राजेन्द्र की इच्छा थी कि विवाह बड़ी धूम-धाम से हो, पर विमला की इच्छा यह नहीं थी। राजेन्द्र ने भी अपनी पुत्री ही का मन रखा।

विमलारानी और कोमल का विवाह हो गया। विवाह के पश्चात् जब विमला और कोमल मिले, तो विमला के चेहरे पर कुछ विषाद की छाया देख कर कोमल ने पूछा—"ऐसे आनन्द के अवसर पर यह विषाद की छाया क्यों?"

"कमला की याद सता रही है, वह बेचारी कहाँ होगी?"

"क्यों रानी! क्या मैं काफ़ी नहीं हूँ?"

"हैं, आप मेरे सर्वस्व हैं। फिर भी स्वामी वह मेरी बहिन थी!"

एक से दो हुये—दो से एक हुये—जीवन भर न बिछुड़ने के लिये!

अब भी कलकत्ता जैसी विशाल नगरी में उस रमणी की चर्चा होती है, जो बिजली की तरह सभ्य समाज में प्रविष्ट हुई, बिजली की ही तरह पुरुषों के हृदयों में घुमी, बिजली ही की तरह उनके हृदयों को दग्ध किया, और फिर बिजली ही की तरह विलीन हो गई।

वह सुन्दर थी, अति सुन्दर! उसकी एक मुस्कान पाने के लिये पुरुष तड़प उठे। उसकी कृपा पाने के लिये अपना सर्वस्व अर्पण कर दिया।...पर वह तो एक हृदय-हीन जादूगरनी थी। उससे प्रेम करने से तो किसी पाषाण-प्रतिमा से प्रेम करना अच्छा था!

उसकी मुस्कान विषभरी-होती थी। उसके नयन तीर की तरह पैने थे। दया तो वह जानती ही न थी। एक पत्थर से दया की आशा की जा सकती है, पर उससे नहीं!

किसी पुरुष के हृदय के साथ खेलना, उसे लुभाना, तड़पाना फिर तोड़ देना उसका खिलवाड़ था। एक के बाद दूसरा, दूसरे के बाद तीसरा,

तीसरे के बाद चौथा...पर उसे सन्तोष न होता था, और पुरुष भी उसको अपनाने के लिये लालायित हो उठते; पर व्यर्थ !

वह कौन है ? क्या नाम है ? कहाँ से आई ? किस जाति की है ?—कोई नहीं जान पाया। सब केवल यही जान पाये कि वह एक कुलीन महिला है, दुःखों की मारी पर दया-हीन, निर्दय, कठोर !...

"जितनी भी स्त्रियाँ मैं ने देखी हैं तुम उनमें सब से सुन्दर तथा सबसे कठोर हो !" एक बार एक राजकुमार ने उससे कहा था।

"मैं वही हूँ, जो संसार ने मुझे बनाया।"—संक्षिप्त-सा उत्तर मिला।

एक बार लोगों ने उसे एक धनी युवक को दिखाया, जो उसके प्रेम में पागल हो कर दर-दर ठोकर खाता फिरता था। वह मुस्करा दी। फिर जब लोगों ने बताया कि उसने आत्म-हत्या कर ली, तो हँस दी, और बोली—"बेवकूफ था !"

...वह सुन्दरी चैन से रहना तो जानती ही न थी। शान्ति उसके पास फटकती न थी। कुछ लोग तो कहते थे कि वह सोती तक नहीं थी। वह सर्वदा किसी समाचार को सुनने के लिये उत्सुक रहती, पर जैसे न सुन पाती थी। कभी भी किसी मन्दिर, मसजिद, गिरजा आदि में न जाती। सर्वदा वह पुरुषों का हृदय तोड़ने में लिप्त रहती। कभी भी सन्तुष्ट न होती तथा, उसका हृदय पुकारता ही रहता—'और—और !'

एक दफ़ा एक धनी सेठ ने उसे एक हीरा भेंट किया, और पूछा—"आप किस वस्तु से सन्तुष्ट हो सकती हैं ?"

"किसी से भी नहीं। मुझे कोई वस्तु आनन्द नहीं दे सकती, और पीड़ा ही !"

कभी भी वह पिघली नहीं। कभी भी उसकी कठोर मुद्रा में अन्तर आया। पर एक रात्रि उसमें परिवर्तन हुआ—महान् परिवर्तन ! वही उसके जीवन की अन्तिम रात्रि थी। जीवन-दीप का तेल लगभग समाप्त हो गया था

केवल मुन्नी बनी जग रही थी। जब रात्रि को वह सिसकी, रोई—फूट फूट कर रोई। उसकी पुरानी कौशल्या ने उसके एक सम्पूर्ण मिठाई, जो बहुत सुरक्षित रखी हुई थी। और उसको खोल कर एक गम्भीर निराशा पर उसने पल-पल से लिखा था—'आह, कोमल! कोमल! मैं सुन्दर सपनों भी यदि तुम से प्रेम करना स्वीकार कर लिया होता!'—उसने धीरे से कहा।

मुन्नी हाथों रो रही थी।

"रो मत, पगली!"

कमला ने शान्त स्वर में कहा—"अब लोग पूछें कि कौन मरा, तो केवल एक शब्द कह देना—यह सब रहस्य खोल देगा, और वह एक शब्द है—'निराशा'!"

जीवन-दीप टिमटिमा कर बुझ गया!



कोमलसिंह हाल में घुसे। चारों तरफ़ दीवारों पर जिरहबख्तर, तलवारें, बन्दूकें, जंगली जानवरों की खालें टँगी थीं। वह चुपचाप उन्हें देखते रहे।

"हुज़ूर, आप का सामान—लाइये।" और रामसिंह ने काँपते हाथों से, जो अत्यन्त हर्ष के कारण काँप रहे थे, वह थैला ले लिया। उस धूल से भरे थैले को उसने उसी सावधानी से उठाया, जैसे कोई सोने की अमूल्य वस्तु को उठाता है; पर थैले की रस्सी खुल ही गयी, और शेव-मारक आदि वस्तुएँ बिखर पड़ीं। जल्दी-जल्दी उनको उठाता हुआ बोला—"हुज़ूर, नहाने का सामान ठीक करता हूँ। अगर पहले से मालूम होता कि आप आने वाले हैं तो..."

"अब भी सारी बातें गुप्त हैं?"

"अन्नदाता! रियासत में केवल एक ही दो ऐसे हैं, जो यह जानते हैं कि आप फ़ौज में..."

कोमलसिंह व्यग्र हो उठे—"परन्तु..."

"नहीं अन्नदाता, वे यह नहीं जानते।"

कोमलसिंह ने सन्तोष की साँस ली। "हाँ, यही चाहिये। क्या यहाँ काम ठीक चल रहा है?"

"जी!"

"कोई नई ख़बर?"

"मेघसिंह पैदल सेना में भरती हो गया।"

"ठीक किया, और ."

"और.. " कैसे रामसिंह कहे कि सुल्तानसिंह उसका इकलौता बेटा नहीं रहा—कोमलसिंह का सबसे प्यारा नौकर...

"और अन्नदाता, सुल्तानसिंह..."

"कहो, रामसिंह, कहो, रुक क्यों गये? क्या हुआ सुल्तानसिंह को?"

"क्षमा, अन्नदाता!"

"बोलो, रामसिंह, सुल्तानसिंह .."

"सुल्तानसिंह टर्की की लड़ाई में मारा गया।" रामसिंह की आँसू भरी आँखें नीची थीं। "उसको 'इण्डियन आर्डर आफ मेरिट' मिला है।"

"शाबाश!" कोमलसिंह की आँखें चमक उठीं, पर साथ ही साथ कुछ बूँदें भी टप-टप कर गिर पड़ीं—"वह एक अच्छा नौकर था, और उससे भी

अच्छा सिपाही !"—गला कुछ भारी हो चला था—"रामसिंह, तुम मेरे पिता के समय के हो; मुझे गोद खिलाया है। समझ लो कि आज से सुल्तानसिंह जिन्दा है, और कोमलसिंह मर..."

"अन्नदाता ! अन्नदाता ! ऐसे अशुभ वचन ? हम लोगों को आप पर अभिमान है !"

कोमलसिंह के ओठों पर एक हल्की मुस्कान दौड़ गई। उन्होंने अपने दोनों हाथ फैला दिये, और देखने लगे—नाखून टूटे हुये, जोड़ों पर घाव के निशान, हथेली सख्त तथा छालों से परिपूरित, कुछ सूखे, कुछ हरे, और हाथ एक मज़दूर के-से थे।

"और मुझको सुल्तानसिंह पर अभिमान है ! रामसिंह, एक बड़ा सुखदायक समाचार है, पर रखना गुप्त...फौज में उम्र भर को कैद हट रही है, और डाक्टरी भी कड़ी नहीं होगी। ऐसे शुभ समाचार तो वर्षों से नहीं सुने हैं।" कोमलसिंह का चेहरा कुछ सोच कर खिल उठा।

"अन्नदाता, कपड़े उतारिये; नहाने का पानी तो गर्म हो गया होगा।"

"अच्छा, देखो, रामसिंह ! इस वर्दी को साफ़ कर लेना खूब...पिछली दफ़ा की तरह।"

"जी !"

"यह कमीज़ तो ज़्यादा फट गई है, पर सिलवा देना, और यह पैंट, बहुत अच्छा तो नहीं है, फिर भी..."

"जी, अन्नदाता !"

"अच्छा मैं नहाने जाता हूँ। तुम खाने का इन्तज़ाम करो !"

नहा कर कोमलसिंह भोजन के कमरे में गये। उसमें तलवारें, बन्दूकें, जिरहबख्तर आदि दीवारों पर सजे थे। एक किनारे पर नाव खेने के डाँड भी टँगे थे, और उनके बीच में एक शील्ड जो यूनीवर्सिटी की नौका-दौड़ में प्रथम आने पर कोमलसिंह को पुरस्कार-स्वरूप मिला था। कोमलसिंह कुरसी पर बैठ गये। सामने ही एक तस्वीर टँगी थी—एक असाधारण सुन्दरी युवती की—कुसुमपुर की वर्तमान रानी की सोलह वर्ष पूर्व की तस्वीर। कोमलसिंह उसकी ओर एक-टक देखने लगे। देखते-देखते किसी ध्यान में मग्न हो गये। भोजन परोस दिया गया, पर उन्हें कुछ भी खबर नहीं।

"अन्नदाता—भोजन..."

कोमलसिंह हाल में घुसे। चारों तरफ दीवारों पर ज़िरहबख़्तर, तलवारें, बन्दूकें, जंगली जानवरों की खालें टँगी थीं। वह चुपचाप उन्हें देखते रहे।

"हुज़ूर, चाय का सामान—लाइये।" और रामसिंह ने काँपते हाथों से, जो सम्भवतः हर्ष के कारण काँप रहे थे, यह थैला ले लिया। उस धूल से भरे थैले को उसने उसी सावधानी से उठाया, जैसे कोई सोने की अमूल्य वस्तु को उठाता है, पर थैले की रस्सी खुल ही गयी, और गैस मास्क आदि वस्तुएँ बिखर पड़ीं। जल्दी जल्दी उनको उठाता हुआ बोला—"हुज़ूर, नहाने का सामान ठीक करता हूँ। अगर पहले से मालूम होता कि आप आने वाले हैं तो ..."

"अब भी सारी बातें गुप्त हैं?"

"अन्नदाता! रियासत में केवल एक ही दो ऐसे हैं, जो यह जानते हैं कि आप फ़ौज में . . ."

कोमलसिंह व्यग्र हो उठे—"परन्तु..."

"नहीं अन्नदाता, वे यह नहीं जानते।"

कोमलसिंह ने सन्तोष की साँस ली। "हाँ, यही चाहिये। क्या यहाँ काम ठीक चल रहा है?"

"जी!"

"कोई नई ख़बर?"

"मेघसिंह पैदल सेना में भरती हो गया।"

"ठीक किया, और . . ."

"और . . ." कैसे रामसिंह कहे कि सुल्तानसिंह उसका इकलौता बेटा नहीं रहा—कोमलसिंह का सबसे प्यारा नौकर . . .

"और अन्नदाता, सुल्तानसिंह . . ."

"कहो, रामसिंह, कहो, रुक क्यों गये? क्या हुआ सुल्तानसिंह को?"

"क्षमा, अन्नदाता!"

"बोलो, रामसिंह, सुल्तानसिंह . . ."

"सुल्तानसिंह ब्रह्मा की लड़ाई में मारा गया।" रामसिंह की आँसू-भरी आँखें नीची थीं। "उसको 'इण्डियन आर्डर आफ़ मेरिट' मिला है।"

"शाबाश!" कोमलसिंह की आँखें चमक उठीं, पर साथ ही साथ कुछ बूँदें भी टप-टप कर गिर पड़ीं—"वह एक अच्छा नौकर था, और उससे भी

अच्छा सिपाही !"—गला कुछ भारी हो चला था—"रामसिंह, तुम मेरे पिता के समय के हो; मुझे गोद खिलाया है। समझ लो कि आज से सुल्तानसिंह जिन्दा है, और कोमलसिंह मर..."

"अन्नदाता ! अन्नदाता ! ऐसे अशुभ वचन ? हम लोगों को आप पर अभिमान है !"

कोमलसिंह के ओठों पर एक हल्की मुस्कान दौड़ गई। उन्होंने अपने दोनों हाथ फैला दिये, और देखने लगे—नाखून टूटे हुये, ओठों पर घाव के निशान, हथेली सख्त तथा छालों से परिपूरित, कुछ सूखे, कुछ हरे, और हाथ एक मज़दूर के-से थे।

"और मुझको सुल्तानसिंह पर अभिमान है ! रामसिंह, एक बड़ा सुखदायक समाचार है, पर रखना गुप्त...फौज में उम्र भर की क़ैद हट रही है, और डाक्टरी भी कड़ी नहीं होगी। ऐसे शुभ समाचार तो वर्षों से नहीं सुने हैं।" कोमलसिंह का चेहरा कुछ सोच कर खिल उठा।

"अन्नदाता, कपड़े उतारिये; नहाने का पानी तो गर्म हो गया होगा।"

"अच्छा, देखो, रामसिंह ! इस वर्दी को साफ़ कर लेना खूब...पिछली दफ़ा की तरह।"

"जी !"

"यह कमीज़ तो ज्यादा फट गई है, पर सिलवा देना, और यह पैण्ट, बहुत अच्छा तो नहीं है, फिर भी..."

"जो, अन्नदाता !"

"अच्छा मैं नहाने जाता हूँ। तुम खाने का इन्तज़ाम करो !"

नहा कर कोमलसिंह भोजन के कमरे में गये। उसमें तलवारें, बन्दूकें, जिरहबख्तर आदि दीवारों पर सजे थे। एक किनारे पर नाव खेने के डाँड़ भी टँगे थे, और उनके बीच में एक शील्ड जो यूनीवर्सिटी में नौका-दौड़ में प्रथम आने पर कोमलसिंह को पुरस्कार-स्वरूप मिला था। कोमलसिंह कुरसी पर बैठ गये। सामने ही एक तस्वीर टँगी थी—एक असाधारण सुन्दरी युवती की—कुसुमपुर की वर्तमान रानी की सोलह वर्ष पूर्व की तस्वीर। कोमलसिंह उसकी ओर एक-टक देखने लगे। देखते-देखते किसी ध्यान में मग्न हो गये। भोजन परोस दिया गया, पर उन्हें कुछ भी खबर नहीं।

"अन्नदाता—भोजन..."

"हाँ, हाँ, ले आ, जल्दी कर !"

"अन्नदाता !"

"अरे क्या है ? ओह ! भोजन आ गया !" और खाने लगे, पर एक-दो ग्रास खाने, फिर रुक जाते...तस्वीर की तरफ़ देखते, कुछ सोचते, फिर एक-दो ग्रास किसी तरह भोजन समाप्त हुआ।

अब भी वह ध्यान मग्न बैठे रहे। दो दफ़ा टेलीफ़ोन उठाया, पर दोनों दफ़ा रख दिया।

सुबह होते ही उन्होंने रामसिंह को एक टैक्सी लाने का हुक्म दिया, क्योंकि उनकी स्वयं की मोटरें सरकार के फ़ौजी कार्य के लिये दे दी गई थीं।

जिस समय वह चूड़ीदार पायजामा, शेरवानी, साफ़ा और उसके ऊपर रत्न-जड़ित कलँगी लगा कर निकले, रामसिंह चकित हो गया।

कोमलसिंह उसके भाव जान कर हँस दिये। रामसिंह सब से अधिक विश्वास-पात्र था। बोले—"यह भेद भी जान लो। मैं एक ऐसी स्त्री से मिलने जा रहा हूँ, जो मुझे देख कर ख़ुश न होगी।"

टैक्सी चल दी। लगभग ग्यारह बजे उन्होंने बालनक्रु के एक फाटक पर जा कर घंटी बजाई। एक नौकर बाहर निकला।

"क्या रानी साहिबा घर में हैं ?"

"आप कौन हैं ?"

कोमलसिंह ने अपने नाम का एक कार्ड दिया। नौकर उनको बाहरी कमरे में बैठा कर, इत्तला करने गया। कोमलसिंह उस सुसज्जित कमरे की सुन्दरता देखने लगे। अन्दर के कमरे में हँसी के फ़व्वारे छूट रहे थे, जो एकाएक बन्द हो गये, और एक स्त्री ने दरवाज़े पर का परदा हटा कर कमरे में पदार्पण किया।

वह स्त्री लम्बी थी, सुन्दर थी, आँखें हिरन की सी, बाल काले, चोटी नागिन-जैसी।

यह अवसर इन दोनों के मिलने का प्रथम नहीं था।

कोमलसिंह ने उठ कर रानी की अभ्यर्थना की—"मुझे खेद है कि तुम्हारे आनन्द में बाधा पहुँचाई। मैं ने सोचा था टेलीफ़ोन पर बात कर लूँ, पर केवल

कान ही तृप्त हो सकते थे, आँखें नहीं। इसीये सोचा कि...और जो बात मैं करना चाहता था वह..."

वे हिरन की-सी आँखें प्रश्न-सूचक दृष्टि से ताक रही थीं।

"क्या मैं एकान्त में आप से कुछ बातें कर सकता हूँ—राजेन्द्र के बारे में ?"

पहले तो यही मालूम हुआ कि आँखों ही द्वारा नकारात्मक उत्तर मिलेगा; पर पलकें गिरीं, फिर उठीं—आँख के भाव विलीन हो गये। रानी साहिबा कुरसी पर बैठ गईं।

"मैं उसे देखना चाहता हूँ।"

"........?"

"हृदय की ज्वाला को अब दबाने में असमर्थ हूँ, इसीलिये तुम से पहले आज्ञा लेने आया हूँ।"

"वह इलाहाबाद यूनीवर्सिटी में है।"

"किस कक्षा में ? हाँ, अब तो वह बड़ा हो गया होगा। अब तो वह यू० टी० सी० में..."

"नहीं, राजेन्द्र अभी इन कामों के लिये छोटा है।"

"........"

"और उसका झुकाव संगीत की ओर अधिक है।"

"संगीत !"

"हाँ वायलिन !"

जो-कुछ हो, मैं उससे मिलना चाहता हूँ।"

"वहीं यूनीवर्सिटी में ?"

"नहीं, कुसलपुर में !"

"अच्छा, कोशिश करूँगी। अब की अब वह छुट्टी में आयेगा..."

"मैं उससे इसी शनिवार तक मिल लेना चाहता हूँ।"

"इसी शनिवार तक ?"

"हाँ, [illegible] तक। चाहे कुछ घंटों के लिये ही सही, लिये ही [illegible]पको छीनने की कोशिश नहीं करूँगा। ..."

करता हूँ, मैं केवल उसे देखना चाहता हूँ। यदि तुम कहो, तो मैं उसे यह भी न बताऊँ कि मैं उसका पिता हूँ।"

"नहीं, नहीं, यह..." रानी कुछ विचलित हुई, पर सम्भल गई, चुप हो गई, फिर—"कृष्णा।"

"रानी, अब भी तुम कितनी सुन्दर हो!"

"बस... कदाचित् आप को यह नहीं मालूम कि मुझे आप से शिकायत थी..."

"जानता हूँ, वह लाचारी..."

"तो इसी अवसर पर मैं यह उचित समझती हूँ कि आप को धन्यवाद भी दे दूँ। इस विषय को न जो आप हम लोगों की सुरक्षता से..."

"इसमें धन्यवाद की क्या आवश्यकता है? यह तो मेरा कर्तव्य था।"

"मुझे मालूम होता रहता था कि आप कहाँ हैं—अफ्रीका, चीन, अमरीका..."

"हाँ, मैं ने काफी सफर किया, और भी करता, अगर यह लड़ाई न छिड़ जाती।"

"पर क्या आप...?" रानी चुप हो गई। प्रश्न पूरा नहीं किया, पर कोमलसिंह समझ गये।

"यह भी पूछने की आवश्यकता है?" और बात बदलने के लिये कहा—"यदि हर्ज न हो, तो मुझे बता दो कि राजेन्द्र देखने में कैसा है?"

"ठीक तुम्हारी ही तरह। अन्तर केवल इतना है कि उसकी आँखें और बाल मेरे-जैसे हैं..."

"एक अन्तर और है कि वह कुंजलपुर के वंश में पहला है, जिसे संगीत से रुचि है।"

रानी ने राजा की तरफ देखा।

"हम लोग सर्वदा से सिपाही रहे हैं।"

"क्या कुंजलपुर के सब से पहले राजा बिगुल के शौकीन नहीं थे? और स्वयं तुम क्या बीन बजा कर रियासती फौज को परेड नहीं कराते थे?"

"वह फौजी संगीत था...वायलिन नहीं।"

"पर वह बजाने में निपुण है।"

"रानी, उसे संगीत की तरफ ज्यादा मत झुकने देना।"

"क्यों? कुशलपुर के वंशवालों ने फौज में बड़ा नाम...।" उसने अपने आप को रोक लिया, लेकिन तीर छूट चुका था। कोमलसिंह तिलमिला उठे—"मुझे दुःख है।"

रानी बोली—"मुझे क्षमा कर दो!"

कोमलसिंह चुप रहे। दोनों ही चुप रहे।

शनिवार आ गया—

× × ×

आज कोमलसिंह अकेले बैठे भोजन नहीं कर रहे थे। उनके साथ उनका राजेन्द्र भी था। वैसे तो कोमलसिंह ऊपर शान्त थे; पर अन्दर से उनका हृदय अपने पुत्र को पन्द्रह वर्ष बाद देख कर उमड़ रहा था। वह एकटक उसकी तरफ देख रहे थे। सोच रहे थे कि बात करूँ, पर क्या बात की जाय?

"तुम्हें रास्ते में तो कोई तकलीफ नहीं हुई?"

"जी नहीं!"

फिर वही समस्या?

"तुम महल देख चुके?"

"जी, मैं ने करीब-करीब सब कमरे देख डाले। ये पूर्वजों की तस्वीरें, ये बन्दूकें, तलवारें आदि मुझे बहुत अच्छी लगीं।"

"तुम्हारी भी तस्वीर लगेगी।"

अब क्या बात की जाय?

"तुम इलाहाबाद यूनीवर्सिटी में हो?"

"जी, पिताजी!"

"अच्छी जगह है। मैं भी वहीं का पढ़ा हूँ। कौन-से खेल का शौक है? फुटबाल, क्रिकेट, नौका-खेना—यह शील्ड देखते हो; यह मुझे नौका-दौड़ में सर्व प्रथम आने पर पुरस्कार मिला था।"

"अभी मैं ने यह तय नहीं किया है, और मुझे जो-कुछ समय मिलता है, संगीत में चला जाता है।"

करता हूँ, मैं केवल उसे देखना चाहता हूँ। यदि तुम कहो, तो मैं उसे यह भी न बताऊँ कि मैं उसका पिता हूँ।"

"नहीं, नहीं, यह " रानी कुछ विचलित हुई, पर साध लिया, चुप हो गई, फिर—"अच्छा।"

"रानी, अब भी तुम कितनी सुन्दर हो!"

"बस...कदाचित आप को यह नहीं मालूम कि मुझे आप से मिलने में..."

"जानता हूँ, यह लाचारी..."

"तो इसी अवसर पर मैं यह उचित समझती हूँ कि आप को धन्यवाद भी दे दूँ। इन पिछले वर्षों में जो आप इस लोगों की कुशलता में..."

"इसमें धन्यवाद की क्या आवश्यकता है? यह तो मेरा कर्तव्य था।"

"मुझे मालूम होता रहता था कि आप कहाँ हैं—अफ्रीका, चीन, अमरीका..."

"हाँ, मैं ने काफी सफर किया, और भी करता, अगर यह लड़ाई न छिड़ जाती।"

"पर क्या आप...?" रानी चुप हो गई। प्रश्न पूरा नहीं किया, पर कोमलसिंह समझ गये।

"यह भी पूछने की आवश्यकता है!" और बात बदलने के लिये कहा—"यदि हर्ज न हो, तो मुझे बता दो कि राजेन्द्र देखने में कैसा है?"

"ठीक तुम्हारी ही तरह। अन्तर केवल इतना है कि उसकी आँखें और बाल मेरे जैसे हैं..."

"एक अन्तर और है कि वह कुशलपुर के वंश में पहला है, जिसे संगीत से रुचि है।"

रानी ने राजा की तरफ देखा।

"हम लोग सर्वदा से सिपाही रहे हैं।"

"क्या कुशलपुर के सब से पहले राजा बिगुल के शौकीन नहीं थे? और स्वयं तुम क्या बीन बजा कर रियासी फौज को परेड नहीं कराते थे?"

"वह फौजी संगीत था...वायलिन नहीं।"

"पर वह बजाने में निपुण है।"

"रानी, उसे संगीत की तरह उदास मत झुकने देना।"

"बदी? कुसमपुर के बनवासियों ने फौज में बड़ा नाम...।" उसने अपने आप को रोक लिया, लेकिन तीर छूट चुका था। कोमलसिंह तिलमिला उठे—"मुझे दुःख है।"

रानी बोली—"मुझे क्षमा कर दो!"

कोमलसिंह चुप रहे। दोनों ही चुप रहे।

शनिवार आ गया—

× × ×

आज कोमलसिंह अकेले बैठे भोजन नहीं कर रहे थे। उनके साथ उनका राजेन्द्र भी था। वैसे तो कोमलसिंह ऊपर शान्त थे, पर अन्दर से उनका हृदय अपने पुत्र को पन्द्रह वर्ष बाद देख कर उमड़ रहा था। वह एकटक उसकी तरफ देख रहे थे। सोच रहे थे कि बात करूँ, पर क्या बात की जाय?

"तुम्हें रास्ते में तो कोई तकलीफ नहीं हुई?"

"जी नहीं!"

फिर वही समस्या?

"तुम महल देख चुके?"

"जी, मैं ने करीब-करीब सब कमरे देख डाले। ये पूर्वजों की तस्वीरें, ये बन्दूकें, तलवारें आदि मुझे बहुत अच्छी लगीं।"

"तुम्हारी भी तस्वीर लगेगी।"

अब क्या बात की जाय?

"तुम इलाहाबाद यूनीवर्सिटी में हो?"

"जी, पिताजी!"

"अच्छी जगह है। मैं भी वहीं का पढ़ा हूँ। कौन-से खेल का शौक है? फुटबाल, क्रिकेट, नौका-खेना—यह शील्ड देखते हो; यह मुझे नौका-दौड़ में सर्व-प्रथम आने पर पुरस्कार मिला था।"

"अभी मैं ने [illegible] तय नहीं किया है, और मुझे जो-कुछ समय [illegible]
संगीत में

कोमलसिंह चुप रह गये। इसमें इन्कारी कहाँ की थी। उन्हें अधिकार ही क्या था कि उनसे ऐसा सवाल पूछें ? मगर वह पूछ बैठे कि आप नौकरी नहीं फौज का नेतृत्व कर रहे हैं तो ?

और कोमलसिंह को वास्तव में सन्तोष हुआ, जब रामसिंह ने पूछा— "अन्नदाता, थोड़ी सी और।" यों तो सन्तोष हो गया, पर कोमलसिंह अपनी ध्यान में थे। थोड़ी देर बाद उन्होंने प्रथम तीर मारा।

"क्या अब भी वहाँ 'म्यूजिकसिटी-इंगलिश-कोर' है ?"

"हाँ, है।"

"पर अभी तो तुम्हारी वय कम है।" दूसरा तीर छोड़ा गया।

"जी नहीं, यह बात नहीं। उन लोगों की मांग ज्यादा और तनख्वाह भी होती है, और इन्हीं दिनों मुझे वायलिन सीखने जाना पड़ता है।"

कोमलसिंह का हृदय उछल पड़ा। कुशलपुर के वंश का हो कर यह बात ! तलवार के बदले वायलिन बजाने का शौक ! रण के स्थान पर संगीत ! छिः ! पर ये भाव कोमलसिंह ने व्यक्त नहीं किये। केवल भोजन समाप्त कर लेने पर इतना ही कहा—"चलो, कुछ शिकार कर आवें !" और दोनों ही कपड़े बदलने के लिये उठ गये।

जब कोमलसिंह अपने कपड़े बदलने को कमरे में गये, तो उनके मुख से [illegible]

रामसिंह को आवाज़ दी। वह भी खाकी कमीज़, हाफ पैण्ट, पालिश किया हुआ बूट पहने डरते डरते अन्दर आया।

"इस सब के क्या माने हैं, रामसिंह ?"

"जी, क्षमा, अन्नदाता ! मैं ने सोचा कि कुँवर साहब के आने की खुशी में..."

"बेवकूफ कहीं का ! जाओ, सादी पोशाक लाओ।"

"जी, अन्नदाता !"

कोमलसिंह का खून रगों में तेजी से दौड़ रहा था। हृदय की धड़कन बढ़ गई थी। उन्होंने काँपते हुये हाथों से पगड़ी उठाई। साफे को उठा कर सिर में बाँधने लगे। रक्त की रफ़्तार बढ़ गई। चारपाई पर उसे फेंक, शीशे के सामने खड़े

हो बाल फाड़ने लगे। एकाएक कुछ ख्याल आ गया, मेज़ पर घंटी बजा दी। डरता-डरता रामसिंह आया।

"देखो, कुँवर साहब से कह दो कि कपड़े पहिन कर यहाँ आवें। मैं यहीं उनका इन्तज़ार करूँगा।"

× × ×

कोमलसिंह ने दरवाज़े का परदा गिरा दिया। और दस मिनट के अन्दर ही अन्दर सिर से पैर तक राजपूत-राईफल्स के कैप्टेन की वर्दी से सुसज्जित हो गये। यह वर्दी, जिसको उन्होंने पिछले पन्द्रह वर्षों से नहीं पहनी थी।

कोमलसिंह ने अपना प्रतिबिम्ब शीशे में देखा। मुँह से एक विषाद-भरी सिसकी निकली और उन्हें याद आ गई वह रात! ओह! कितनी भयावनी वह रात थी—

राजपूत-राईफल्स की दो कम्पनियों को सरहद पर जाने का हुक्म मिला था। अफ़गानों ने कुछ ऊधम मचाया था। कमाण्डर कोमलसिंह का दोस्त महावीर हो कर आ रहा था। वास्तव में जाना तो मेजर कृष्णकुमार को चाहिये था, पर किसी कारणवश वह रुक गये थे।

कृष्णकुमार का रुकना—कोमलसिंह का वह सन्देह, जो लगातार पिछले आठ महीनों से उनके हृदय और आत्मा को दग्ध कर रहा था, पुष्ट हो गया। मेजर कृष्णकुमार सुन्दर, हँसमुख, नौजवान, बहादुर, अचूक निशानेबाज़, प्रसिद्ध शिकारी— सभी तरह के शिकार खेलने का शौकीन—शेर, चीते, हिरन, खरगोश, स्त्रियाँ...। आते ही उसने निशाना बनाया कोमलसिंह की स्त्री को! रानी उस समय लगभग अठारह-बीस वर्ष की थी, असाधारण सुन्दरी!

कोमलसिंह को बड़ी विकट परिस्थिति का सामना करना पड़ा। प्रकट तो कुछ कहा ही नहीं जा सकता था; न कुछ कहा और कहे भी किससे? अपनी स्त्री से? अपने अफ़सर से? फौजी कानून का नियन्त्रण कितना कठोर होता है! पर सन्देह की चिनगारी अन्दर ही अन्दर सुलगती रही, और जब आग असहनीय हो गई, कोमलसिंह ने मदिरा की शरण ली।

उस रात, कोमलसिंह ने मदिरा खूब पी। और जाने से इनकार कर दिया। आठ महीने तो वह जलता आया, और अब—मेजर और उसकी स्त्री अकेले?

ज़बरदस्ती उनको ले जाया गया, मगर वह अगले स्टेशन पर ही चोरी से उतर गये। लौटे, और बिना कुछ आगा-पीछा सोचे मेजर के बंगले में घुस गये। वहाँ उन्हें अपना सन्देह वास्तविकता में परिणत होता दिखाई दिया, क्योंकि वहाँ कुछ उत्सुक, कुछ व्यग्र, कुछ चिन्तित, कुछ विक्षिप्त-सी अपनी स्त्री को पाया।

यह प्रथम ही अवसर था कि कोमलसिंह ने अपने अफ़सर पर सुला कर दोषारोपण किया। उनके शब्द बाण की तरह पैने थे। मेजर ने क्रोधित हो शब्दों का उत्तर दिया तलवार से। कोमलसिंह वार तो बचा गये, पर कुछ चोट लग गई आँख के पास। आँख बच तो गई, पर सम्पूर्णतया नहीं। धक्के से गिर पड़े। गिरे-ही-गिरे कोमलसिंह ने उत्तर दिया पिस्तौल की दो गोलियों से। मेजर साहब कटे वृक्ष की तरह निर्जीव हो गिर पड़े।

फिर, फिर कोर्ट मार्शल। इनके पिछले महत्त्वपूर्ण कार्य—ईर्ष्या, निकृष्ट मस्तिष्क आदि अन्य बातों का जूरी ने ख्याल किया। पद से तो च्युत किये ही गये, पर प्राण दण्ड से बच गये—मिली इन्हें सात वर्ष की सख्त क़ैद! इनके और रानी के बीच में पड़ गई जेल की मोटी दीवाल और हृदय में गाँठ। वह अपने एक साल के पुत्र को लेकर पितृ-गृह लौट गई।

बाद को कोमलसिंह को विश्वास हो गया कि उनका सन्देह निर्मूल था। मेजरसाहब के अर्दली ने बताया कि रानी साहिबा ने कभी भी मेजर साहब को प्रोत्साहन नहीं दिया। उलटा झिड़क देती थीं। उस रात वह मेजर साहब से आज्ञा लेने गई थीं अपने पति के साथ जाने के लिए। पर अब होता ही क्या?

कोमलसिंह के हृदय में एक टीस उठी—उन्होंने क्या क्या नहीं खोया—पद, मर्यादा, स्त्री, पुत्र...? और बदले में पाया क्या?

× × ×

"क्या अन्दर आ सकता हूँ?"

'हाँ, हाँ।"

परदा धीरे धीरे हटा। "ओह पिताजी!"—राजेन्द्र के स्वर में श्रद्धा थी, आदर था, गर्व था। कोमलसिंह के हृदय पर आघात लगा। उन्होंने तो यह कपड़े राजेन्द्र के हृदय में फ़ौज के लिये घाव पैदा करने के लिए पहिने थे, पर वह तो सब समझ रहा है।

"जब मैं बड़ा हो जाऊँगा, तो इसी रैजीमेण्ट में भरती होऊँगा।"

'जब मैं बड़ा हो जाऊँगा! कुअलपुर राज्य-वंश का कलंक—कलंक! कलंक तो स्वयं उन्होंने—कोमलसिंह ने लगा दिया, तो क्या इससे सच बातें कह दी जायँ? हाँ, यही ठीक है।'

"अभी तुम इस रेजीमेण्ट में भरती मत होना, किसी और में हो जाना। इण्डियन एयर फोर्स में चले जाना, पर इसमें नहीं..."

"............!"

"तुम्हें यह तो मालूम ही होगा कि मेरा इसी रेजीमेण्ट में कोर्ट-मार्शल हुआ था। मैं इसमें कैप्टेन था। यह धब्बा आसानी से धुलनेवाला नहीं, फिर भी आशा करता हूँ कि कुछ महीनों में मैं इस कलंक को धो डालने में समर्थ हूँगा। हम लोगों के लिए राजपूत राईफ़ल्स में भरती न होना शर्म की बात है। पर जब तक..." इसके आगे वह न बोल सके, गला भर आया। चुपचाप कपड़े बदल कर चल दिये।

राजेन्द्र भी चुप हो रहा, पर उसके दिल में यह बात चुभ गई। उसने मन-ही-मन प्रतिज्ञा कर ली इस कलंक को धोने की।

× × ×

दूसरे दिन सुबह सात बजे कोमलसिंह दबे पैरों राजेन्द्र के कमरे में गये। वह सो रहा था। बड़ी सावधानी से उसके ललाट का चुम्बन ले निकल आये। बाहर में रामसिंह उनकी ढीली-ढाली वर्दी, थैला आदि लिये खड़ा था। कपड़े बदल स्टेशन पर आये। सोच रहे थे—'जब वह जागेगा मैं मीलों दूर हूँगा, और रामसिंह उससे कहेगा बहुत ज़रूरी काम से गये हैं।'

लड़ाई के दिनों में सिपाहियों की तो मुसीबत रहती है, पर कुलियों की भी कम नहीं रहती, वरन् ज्यादा ही। आगे बढ़ कर खाई खोदना, ज़मीन बराबर करना, सफाई करना—सब काम कुलियों को करने पड़ते हैं। कुलियों में तो सब ही तरह के आदमी खप जाते हैं, केवल बदन तगड़ा होना चाहिये। कोमलसिंह भी खप गये। डाक्टरी रिपोर्ट के अनुसार उनकी दाहिनी आँख कुछ खराब थी। दृष्टि कमज़ोर थी। इसी कारण यह सिपाहियों में भरती न हो पाये थे। इनकी कार्य-पटुता, इनके आज्ञा-पालन, इनकी तत्परता से सभी इनसे खुश थे। पर यह ज्यादा किसी से मिलते-जुलते नहीं थे। लेबर बटालियन के जमादार-पद पर इनकी तरक्की हुई और यह एक हवाई अड्डे पर भेज दिये गये। यह खुश थे। पदोन्नति हुई इसलिये नहीं, बल्कि इसलिए कि मन रखा

था कि फौज की भरती होनेवाली है, और उम्र की कैद हट गयी है, तथा डाक्टरी भी कड़ी नहीं हुआ। उन्हें आशा थी कि फौज में सिपाही बन कर कुछ बहादुरी का कार्य कर सकेंगे और फिर .

वह इसी आशा से प्रसन्न रहते, पर उनकी सारी आशाओं पर पानी फिर गया। जनक फौज में भरती हो कर कुछ कार्य करने क आशा स्वा आकाश पर ला गया कार्य करने कारण और उनमें विश्वास हो गई अन्य कमक थोन की। डाक्टरी परीक्षा में वह फेल कर दिये गये।

डाक्टर ने कहा—"वहाँ ऐसे मनुष्यों की आवश्यकता है, जो यह तो देख सकें कि उनका लक्ष्य क्या है। यह तुम्हारी आँखें कमज़ोर हैं—और एक बात और भी सुन लो, यदि तुम अपनी आँख ओपरेशन करा कर ठीक नहीं कराओगे, तो तुम अपनी दृष्टि भी खो बैठोगे।"

भग्न हृदय कोमलसिंह लौटे। दुःख के आवेग और निराशा के कारण वह घबरा गये। इतने में मेजर ने हुक्म दिया—"ठहरो, यहाँ आओ।"

कोमलसिंह ने लौट कर फौजी सलाम किया और खड़े हो गये। यह मेजर अभी केवल दो दिन पहले यहाँ बदल कर आया था।

"मैं ने तुम्हें कहीं देखा है।"

"मैं तो दूसरे ही के रेजीमेण्ट में हूँ।"

"नहीं, मैं ने पहले कहीं देखा है।

मेजर साहब की आँखें चमक उठीं। उन्हें याद आ गई, पन्द्रह सोलह वर्ष की बातें। उन्होंने पहिचान लिया अपने भूतपूर्व सहयोगी को। भला यह सम्भव हो सकता है कि महावीर की स्मरण शक्ति धोखा दे जाय! दोनों राजपूत राईफल्स में कैप्टेन थे। भाग्य का खेल—एक हो गया मेजर, दूसरा... कुली। मेजर साहब के मुँह से कुछ निकलने ही वाला था कि उनकी आँखें कोमलसिंह से जा टकराईं। कोमलसिंह की आँखों ने कुछ मूक प्रार्थना की, मेजर की आँखों ने स्वीकृति दे दी।

"अच्छा, तुम जा सकते हो। मैं ने तुम्हें पहिचानने में ग़लती की।"

कोमलसिंह तम्बू में से बाहर निकले। सालों पूर्व का दृश्य उनके सामने बीभत्स रूप धारण कर खड़ा हो गया। अब तक तो आशा थी, पर अब? परमात्मा! परमात्मा!! अगर कलंक न धुल सका तो. .पद, मर्यादा, उनकी स्त्री, उनका पुत्र—सब ही उनके लिये बेगाने! फिर भी वह काम पर डटे रहे।

'जब तक साँसा, तब तक आशा' अब भी आशा अपना सुनहला स्वप्न दिखा रही थी—शायद कुछ हो जाय—कुछ...कोई दुर्घटना...हवाई हमला... ऐसा ही कुछ, जिसमें वह कुछ वीरता दिखा सकें, पर कुछ न हुआ। हवाई जहाज़ दिन-रात आते और जाते, चढ़ते और उतरते...पर कुछ न हुआ।

एक रात जब कोमलसिंह की कम्पनी कुछ काम कर रही थी, उन्हें कुछ दूर पर कुछ लड़ाके आते हुये दिखाई पड़े। सब-के-सब नवयुवक थे। सब ही पोशाक में नख-शिख तक सुसज्जित थे। सभी प्रसन्न थे, खुश हो कर आपस में हँसी-मज़ाक़ करते हुये अपने-अपने वायुयानों में बैठ गये। अरे! यह क्या सम्भव हो सकता है? क्या यह सच है? क्या जो यह आवाज़ उसने सुनी, क्या...?

जब कम्पनी काम समाप्त करके लौटी तो कोमलसिंह चुपके से मेजर साहब के ख़ेमे में घुस गये। मेजर साहब कपड़े उतार कर सोने जा ही रहे थे कि उनको देख कर खुशी से फूल गये, लिपट गये उनसे। कुछ देर तक इधर-उधर की बातें होती रहीं।

"उस दिन तो आपने मामले को खूब साधा, नहीं तो ग़ज़ब हो गया होता।"

"पहले तो मुझे बड़ा ताज्जुब हुआ—और अगर तुम्हारी आँखें न बोलतीं तो...।"

"हाँ, यह तो बताइये कि कुछ नये लड़ाके आये हुये हैं?"

"हाँ, वैसे तो सभी साहसी हैं, पर इनमें एक बड़ा दिलेर है। है तो उम्र में सबसे छोटा, पर बहादुरी में सबसे बढ़-चढ़ कर है। वैसे तो नाम राजेन्द्रसिंह है, मगर हम लोगों ने 'दिलेरसिंह' रख छोड़ा है।"

कुछ देर तक बात होने के बाद कोमलसिंह ने विदा माँगी। मेजर साहब भी घड़ी देख कर बोले—"हाँ, जाओ, अब सो जाओ।"

पर कोमलसिंह सोने नहीं गये। चुपचाप मैदान की तरफ़ लौट गये। एक गड्ढे में छिप गये। दिसम्बर का महीना था। कड़ाके की सर्दी पड़ रही थी। देखते ही देखते छा गये आकाश में बादल। टप-टप बूँदें गिरने लगीं मूसलाधार वर्षा होने लगी, पर केवल कमीज़ और वर्दी ही पहने कोमलसिंह बैठे रहे जब तक कि वह लड़ाके वापस नहीं लौट आये।

इसी तरह रोज रात को, नियमों का उल्लंघन करके, भूख-प्यास की परवाह

"समझा पिताजी,...और माँ से न कहियेगा कि मैं फौज में भर्ती हो गया हूँ। उन्हें नहीं मालूम है।"

कोमलसिंह मन ही मन हँस दिये। बेचारा क्या जाने कि उनमें और रोजेन्द्र की माँ के बीच में,..और यह सोच कर फिर मन ही मन रो पड़े; पर कहा केवल इतना ही—"मुझे तुम पर अभिमान है, राजू! तुम्हारे पुरखा भी स्वर्ग से गर्व भरी दृष्टि से तुम्हें निहार रहे हैं।"

मेजर साहब ने कुछ इशारा किया।

"पिताजी, समय हो गया। एक घंटे बाद लौट कर आऊँगा। तब बातें होंगी। आशीर्वाद दिजिये पिताजी, मैं अपने कार्य में सफल होऊँ!"

और राजेन्द्र घुटनों पर बैठ गया। उसके मुँह पर तेज था, आँखों में एक ज्योति थी, और मन में एक संकल्प...

"जा राजू..." इसके आगे कोमलसिंह कुछ न कह सके। गला भर आया। केवल उसके शीश पर हाथ रख दिया।

ठीक एक घंटे के बाद एक वायुयान उतरा। दो जगह धक्के खाने के बाद रुक गया, पर चालक न उतरा। लोग दौड़ पड़े, कोमलसिंह भी दौड़े। चालक बेहोश हो गया था, सिर से खून बह रहा था। कई जगह गोली लगी थी। उसका साथी मरा पड़ा था। अति सावधानी से उतारा गया। उतारते समय कुछ होश आया। बड़बड़ाने लगा—"दस जर्मन जहाज़...घेर लिया...खूब लड़े...राजेन्द्र ने चार गिरा दिये...और आ गये...घेर लिया...राजेन्द्र को घेर लिया टंकी में आग लग गई...आग...राजेन्द्र ने हवाई जहाज़ का मुँह नीचे कर दिया...बम छोड़ दिये.. सब एक साथ - भयानक धड़ाका...फैक्टरी ...पुल...चिथड़े-चिथड़े.. राजेन्द्र भी...

और वह एक दफ़ा ज़ोर से काँप कर चुप हो गया। सिर लटक गया।

कोमलसिंह विक्षिप्त-से हो गये। उसकी निर्जीव लाश को झकझोरने लगे, "हाँ, राजेन्द्र.. आगे कहो...आगे कहो।" फिर ज़मीन पर गिर पड़े—"नहीं, ...नहीं परमात्मा ऐसे नहीं...ऐसे नहीं..."

कर्नल साहब नाराज़ हुये—"यह लेबर बटालियन का आदमी क्या कर रहा है—हटाओ इसे।" मेजर महावीर सिंह ने कुछ सोचा, फिर आगे बढ़कर थोड़े से शब्दों में कुल कहानी कह दी।

बेहोशी की हालत में कोमलसिंह अस्पताल ले जाये गये। उनकी बेहोशी की ही हालत में कर्नल साहब ने तार द्वारा 'डिस्पैच' भेजा। उत्तर भी आ गया ...जिसके फल-स्वरूप—

जब कोमलसिंह होश में आये, तो खड़े हो गये। सामने ही एक शीशा था, उसमें अपना प्रतिबिम्ब देखा—"हैं, यह राजपूत राईफ़ल्स की वर्दी कहाँ से आयी—किसने पहिनाई...उतारो इसको..." और कमर से पेटी खोलने लगे।

"यह न कीजिये, मेजर कोमलसिंह !"

कर्नल साहब अन्दर घुसे। उनके पीछे और भी अफसर थे।

कोमलसिंह—"क्या ये लोग मेरा मजाक उड़ा रहे हैं ? मैं तो कुली लेबर बटालियन..."

"मेजर कोमलसिंह, आप की बेहोशी में तार-द्वारा सारी कहानी हेड क्वार्टर्स भेज दी गई, जिसके फल-स्वरूप आप को 'डिस्टिंग्विश्ड सर्विस आर्डर' तथा राजेन्द्र के लिये विक्टोरिया क्रास...आप को मेजर बना कर, सम्मानित कर, अवकाश दिया जाता है।"

कोमलसिंह घर लौटे। स्टेशन पर फौज ने सलामी दी। फौज ही की एक मोटर पर वह रियासत को रवाना हो गये, और वह जब पहुँचे, तो चिराग़ जल चुके थे। किले के फाटक पर राज्य-चिह्न जगमगा रहा था। रामसिंह ने लगाया था...नहीं, नहीं...राजेन्द्र ने लगाया था। रोशनी हो रही थी। सारा किला जगमगा रहा था। "बुझा दो इन रोशनियों को...किसने कहा था—नहीं-नहीं मत बुझाओ, जलने दो," और मन-ही-मन बुदबुदाये—'राजेन्द्र ने जलवाई है। मुझे बुझवाने का क्या अख़्तियार !'

सड़क से पहुँच कर सीधे स्नान करने में पहुँचे, जहाँ उनके दूकान में राजेन्द्र की तस्वीर टँगी रहती थी। सीने के पैर में अभी तारीख को पुलक हँसते था। उनका ऐसा लगा कि वे बहुत पहचानते थे। तस्वीर पर आँसू न थे। वह उतना ध्यान से दूसरे तजवीज से कि कोई किसी मूर्ति का पावन माथा मालूम पड़ा, जब वह उनके पैरों पर गिर पड़ी।

प्रोफेसरसाहब ने चौंक कर देखा—बेटा। लिपट गई उनके चरणों से सावित्री। ताता दादा ने आँखें दो पोंछीं अपनी दासी से पाँव छूँ पोंछा के लिए। वहीं बाद कमरे घुस गया। पर, मनोहर, इन्दिरा सभी जगह दिखे—पर किस दासी से ! दुख ने बड़ा—माँ का साहस बड़ा।

दोनों हाथ की आँखों से आँसू बह रहे थे—दर्द के या शोक के, कौन जाने?

॥ समाप्त ॥